THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

श्रीवीतरागाय नमः ।

जैनपदसंग्रह

प्रथमभाग ।

अर्थात्

स्वर्गीय कविवर दौलतरामजीके

१२४ पदोंका संग्रह ।

जिसको

देवरीनिवासी श्रीनाथूरामप्रेमीने

संशोधित किया

और

मुम्बयीस्थ-जैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयने

मुम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें वा. रा. घाणेकरके द्वारा

छपाकर प्रसिद्ध किया ।

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४३५ । ईसवी सन् १९०९.

तृतीयवार १००० प्रति] [मूल्य ६ आने ।

भूमिका।

हर्षका विषय है कि, आज हम अपने भजनप्रेमी पाठकोंके स-म्मुख दौलतविलासका द्वितीय संस्करण उपस्थित करनेको समर्थ हुए हैं। अबकी वार इसको हम जैनपदसंग्रह प्रथमभागके नामसे प्रकाशित करते हैं। क्योंकि जिस अभिप्रायसे हमने इसका दौलतवि-लास नाम रक्खा था, खेद है कि, उसकी पूर्ति न हो सकी। अर्थात् कविवर दौलतरामजीकी समस्त कविताका विलास हमको प्राप्त नहीं हो सका। एक एक पदपर एक एक पुस्तक देनेकी सूचना देनेपर भी हमारे जैनीभाइयोंके प्रमादसे हमको कविवरके समस्त पद नहीं मिले। लाचार हमने इसका नाम कविवर दौलतरामजीका पदसंग्रह रख दिया। पदसंग्रह नाम रखनेका एक कारण यह भी है कि, जैनियोंमें पदों-का बड़ा भारी भंडार होने पर भी आजतक किसीने इसके प्रका-शित करनेका प्रयत्न नहीं किया। और दो चार महाशयोंकी कृपासे जो दो चार छोटी मोटी पुस्तकें संग्रह होकर प्रकाशित भी हुई हैं; वे ऐसी अशुद्ध और बेसिलसिले हैं कि, उनका प्रकाशित होना न होना बराबर ही है। इसलिये हमारी यह इच्छा हुई है कि, एक एक कविका एक एक पदसंग्रह पृथक् पृथक् करके क्र-मशः प्रकाशित करें। अर्थात् जैसे यह दौलतरामजीका पदसंग्रह प्रथमभाग है, उसीप्रकार पं० भागकचंदजीके पं० भूधरदासजीके संग्रहका द्वितीयभाग संग्रहका तृतीयभाग, कविवर द्यानतरायजीके संग्रहका चतुर्थभाग, आदि नामसे यह पदभंडार अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करें। ऐसा किये विना हम अपने प्राचीन कवियोंके काव्य ऋणसे किसीप्रकार मुक्त नहीं हो सकते। यह कितनी बड़ी लज्जाकी बात है कि, हमारे लिये दिनरात परिश्रम करके हमारे पूर्वकवि जो एक भंडार बनाके रख गये हैं, उसे हम भं-डारोंमें पड़ा पड़ा सड़ने देवें, मूर्ख लेखकोंकी कलमकुठारसे नष्टभ्रष्ट होने देवें और उसके उद्धारका कुछ भी प्रयत्न न करें। आशा है कि,

धर्मात्मा पाठक इस कृत्यमें पुस्तकादिसे सहायता देकर हमारे उत्साहको बढ़ावेंगे, जिससे हम इस कठिन कार्यको सहज कर सके।

छहढाला दौलतरामजीका एक स्वतंत्र ग्रन्थ है, वह पदोंमें संम्मिलित नहीं हो सकता। इसलिये इस संस्करणमें हमने उसको संग्रह नहीं किया है। इसके सिवाय नंबर ३२ **'नाथ मोहि तारत क्यों ना? क्या तकसीर हमारी, नाथ मोहि०'** यह पद भी निकाल दिया है। क्योंकि यथार्थमें यह एक दूसरे कविका है। किसी कृपानाथने पुस्तकके लोभसे दौलतकी छाप डालकर हमारे पास भेज दिया था। इस संग्रहमें दो चार पद भी हमको इसीप्रकारके जान पड़ते हैं, परन्तु कोई दृढ़ प्रमाण मिले विना उन्हें पृथक् करनेको जी नहीं चाहता है। यदि कोई महाशय ऐसे पदोंकी सूचना हमको देवेंगे, तो बड़ा उपकार होगा। आगामी संस्करणमें वे पद अवश्य हटा दिये जावेंगे।

प्रथमसंस्करण छप चुकनेपर कई महाशयोंने दौलतरामजीके और भी भजन हमारे पास भेजनेकी कृपा की हैं, परन्तु उनमें अधिकांश सज्जन ऐसे ही निकले, जिन्होंनें या तो द्यानतकी जगह दौलत करके अथवा आंचलीमें कुछ उलट पुलट करके भेजी है। शेष जो पद नवीन प्राप्त हुए हैं, उन्हें हमने अन्तमें लगा दिये हैं।

अबके संस्करणमें हमने टिप्पणी अधिक लगवाई है। इससे पदोंके गूढशब्द वाक्य तथा भाव समझनेमें बहुत सुभीता होगा। दौलतरामजीके पद ऐसे गंभीर और कठिन हैं कि, पाठकोंको समझानेके लिये इच्छा न रहते भी हमको टिप्पणी लगाना पड़ी। जिस शब्दकी एक वार टिप्पणी की जा चुकी है, दूसरीवार आनेपर उसकी टिप्पणी नहीं दी है। पहले संस्करणकी अपेक्षा इसवार विशेष परिश्रमसे इस ग्रन्थकी शुद्धता की गई है। इतने पर भी दृष्टिदोषसे कुछ अशुद्धि रह गई हो, तो पाठकगण क्षमा करें और सुधारके पढ़ें।

ता० १०–१–०७ ई०। पन्नालाल वाकलीवाल।

श्रीवीतरागाय नमः।

जैनपदसंग्रह।

१.

मंगलाचरण स्तुति।

दोहा।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंदरसलीन।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन १

पद्धरिछन्द।

जय वीतराग विज्ञानपूर। जय मोहतिमिरको हरन सूर॥ जय ज्ञान अनंतानंत धार। दृग-सुख-वीरज-मंडित अपार॥२॥ जय परम-शांति मुद्रा-समेत। भविजनको निज-अनुभूति-हेत॥ भवि-भागन-वश जोगेवशाय। तुम धुनि है सुनि विभ्रम नसाय॥३॥ तुम गुन चिंतत निज-

१ चार घातिया कर्म। २ अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य। ३ भव्यजनोंके भाग्यसे। ४ मनवचनकायके योगोंके कारण।

पर-विवेक-प्रघटै, विघटैं आपद अनेक ॥ तुम जग-भूषन दूषनवियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ४ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप। परमात्म परमपावन अनूप॥ शुभ-अशुभ-विभाव अभाव कीन। स्वाभाविकपरनतिमय अछीन ॥ ५ ॥ अष्टादश-दोषविमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गभीर ॥ मुनि गनधरादि सेवत महंत । नव-केवललब्धि-रमा धरंत ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय[1] जीव । शिव गये जाहिं जै हैं सदीव ॥ भवसागरमें दुख खारवारि । तारनको और न आप टारि ॥ ७ ॥ यह लखि निजदुखगद[2]हरनकाज । तुम ही निमित्तकारन इलाज ॥ जाने, तातैं मैं शरन आय । उचरों निजदुख जो चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप । अपनाये विधिफल[3] पुण्यपाप ॥ निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जान वारि[4]॥ तन-परनतिमें आपौ चितार ।

१ अपरिमाण । २ रोग । ३ कर्मफल । ४ पानी ।

कबहूं न अनुभयो स्वपद सार ॥ १० ॥ तुमको विन जाने, जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु-नारक-नर-सुरगतिमझार । भव धर धर मर्यो अनंत वार ॥ ११ ॥ अब काल-लब्धिवलतैं दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शांत भयो मिट सकलद्वंद । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातैं अव ऐसी करहु नाथ । विछुरैं न कभी तुव चरनसाथ ॥ तुम गुन-गनको नहिं छेव देव ! जगतारनको तुअ विरद एव ॥ १३ ॥ आतमके अहित विषय-कषाय । इनमें मेरी परनति न जाय ॥ मैं रहों आपमें आप लीन । सो करो होंहु ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप । शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥ १५ ॥ शशि शांतिकरन तपह-रन-हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतैं

१ पार । २ मोक्ष ।

भव नसाय ॥ १६ ॥ त्रिभुवन तिहुँकालमझार कोय । नहिं तुम विन निजसुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधि-उतारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

दोहा ।

तुम गुन-गन-मनि गनपती[1], गनत न पावहिं पार ।
दौल स्वल्पमति किमि कहै, नमों त्रियोग[2] सँभार १८

२.

देखो जी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है। कर ऊपरकर सुभग विराजे, आसन थिर ठहराया है ॥ देखो जी० ॥ टेक ॥ जगत-विभूति भूति[3]सम तजकर, निजानंद-पद ध्याया है । सुरभित[4]-श्वासा, आशा[5]-वासा नासादृष्टि सुहाया है ॥ देखो जी० ॥ १ ॥ कंचनवरन चलै मन रंच न, सुरगिर[6] ज्यों थिर थाया है । जास

१ गणधरदेव २ मनवचनकाय । ३ भस्म जैसी । ४ सुगंधित । ५ दिशारूपी वस्त्र=दिगम्बरता । ६ सुमेरु ।

पास अहि मोर मृगी हरि, जातिविरोध नशाया है ॥ देखो जी० ॥ २ ॥ शुधउपयोग हुताशनमें जिन, वसुविधि समिधं जलाया है । श्यामलि अलिकावलि शिर सोहै, मानों धुंआँ उड़ाया है ॥ देखो जी० ॥ ३ ॥ जीवन मरन अलाभ लाभ जिन, तृन मनिको सम भाया है । सुर-नर-नाग नमहिं पद जाके, दौल तास जस गाया है ॥ देखो० जी ॥ ४ ॥

२.

जिनवर-आनन-भान निहारत, भ्रमतमघान नसाया है ॥ जिन० ॥ टेक ॥ वचन-किरन-प्रसरनतें भविजन, मनसरोज सरसाया है । भव-दुखकारन सुखविसतारन, कुपथ सुपथ दरसाया है ॥ जिन० ॥ १ ॥ विनसाई कज जलसरसाई, निशिचर समर दुराया है । तस्कर प्रवल कषाय पलाये, जिन धन बोध चुराया है ॥ जिन० ॥ २ ॥ लखियत उडु न कुभाव कहूं अव, मोह

१ सिंह । २ होम करनेकी लकड़ियें । ३ काई, दूसरी पक्षमें-अज्ञानरूपी काई । ४ कामदेव । ५ चोर । ६ तारे ।

उलूक लजाया है। हंस[1] कोक[2]को शोक नश्यो निज,—परिनतिचकवी पाया है॥ जिन०॥ ३॥ कर्मबंधकजकोष[3] बंधे चिर, भवि-अलि मुंचन पाया है। दौल उजास निजातम अनुभव, उर जग अंतर छाया है॥ जिन०॥ ४॥

४.

पारस जिन चरन निरख, हरख यों लहायो, चितवत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो॥ टेक॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोरहर्षको न ओर[4], रंक निधिसमाजराज, पाय मुदित थायो॥ पारस०॥१॥ ज्यों जन चिरछुधित[5] होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज[6] गद-हरन पाय, सरुज[7] सुहरखायो॥ पारस०॥ २॥ वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शांतदशा देख महा, मोहतम पलायो॥ पारस०॥ ३॥ जाके गुन जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान दौल शरन आय, शिवसुख ललचायो॥ पारस०॥ ४॥

---

१ आत्मा। २ चकवा। ३ कर्मबंधरूपीकमलोंके कोष बंधे हुए थे उनसे। ४ छोर। ५ बहुतकालका भूखा। ६ दवाई। ७ रोगी।

५.

वंदों अद्भुत चन्द्र वीर[1] जिन, भवि-चकोर-चितहारी ॥ वंदों० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनृपकुल-नभ-मंडन, खंडन भ्रमतम भारी। परमानंद-जलधिविस्तारन, पाप-ताप-छयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥ उदित निरंतर त्रिभुवन अंतर, कीरति किरन पसारी । दोष[2]मलं[3]ककलंकअटंकित, मोहराहु निरवारी ॥ वंदों० ॥ २ ॥ कर्मावरन[4]-पयोद-अरोधित, बोधित शिवमगचारी । गनधरादि मुनि उडुगन[5] सेवत, नित पूनमतिथि धारी ॥ वंदों० ॥ ३॥ अखिल-अलोकाकाश-उलंघन, जासु ज्ञान-उजियारी । दौलत मनसा[6]-कुमुदनि-मोदन, जयो चरम[7]जगतारी ॥ वंदों० ॥ ४ ॥

६.

निरखत जिनचंद्र-वदन, स्वपरसुरुचि आई ।

---

१ वर्द्धमानभगवान् । २ दोषा-रात्रि । ३ पापरूपी कलंक । ४ कर्मावरणरूपी बादलोंसे जो ढकता नहीं है । ५ तारागण । ६ मनरूपी कुमोदनीको हर्षित करनेवाला । ७ अन्तिम तीर्थंकर ।

निरखत० ॥ टेक ॥ प्रगटी निज आनकी, पिछान ज्ञान भानकी, कला उदोत होत काम, जामिनी पलाई । निरखत० ॥ १ ॥ सास्वत आनंद स्वाद, पायो विनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कल्पना नसाई । निरखत० ॥ २ ॥ साधी निज साधकी, समाधि मोहव्याधिकी, उपाधिको विराधिकैं, अराधना सुहाई । निरखत० ॥ ३ ॥ धन दिन छिन आज सुगुनि, चिंते जिनराज अबै, सुधरे सब काज दौल, अचल सिद्धि पाई । निरखत ॥ ४ ॥

७.

जबतें आनंद-जननि दृष्टि परी माई । तबतें संशय विमोह भरमता विलाई । जबतें० ॥ टेक ॥ मैं हूं चितचिह्न भिन्न परतें पर जड़ स्वरूप, दोउनकी एकता सु, जानी दुखदाई । जबतें० ॥ १ ॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवर हित जान तासु, हेतु ज्ञानताई ।

१ रात्रि ।

केवलसमय जास वच-रविनें[1] जगभ्रम-तिमिर हरा। सुदृगबोधचारित्रपोतं[2] लहि, भवि भवसिंधुतरा ॥ भज० ॥ ३ ॥ योगसँहार निवार शेषविधि[3], निवसे वसुमधरा[4]। दौलत जे याको जस गावैं, ते हैं अज अमरा ॥ भज० ॥ ४ ॥

९.

जगदानंदन जिन अभिनंदन, पदअरविंद नमूं मैं तेरे। जग० ॥ टेक ॥ अरुनवरन अघतापहरन वर, वितरन कुशल सु शरन बड़ेरे। पद्मासदन[5] मदन-मद-भंजन, रंजनमुनिजनमन-अलिकेरे ॥ जग० ॥ १ ॥ ये गुन सुन मैं शरनैं आयो, मोहि मोह दुख देत घनेरे। ता मदभानन[6] स्वपरपिछानन, तुमविन आन न कारन हेरे ॥ जग० ॥ २ ॥ तुम पदशरन गही जिननें ते, जामन-जरा-मरन-निरवेरे। तुमतें विमुख भये शठ तिनको, चहुंगति विपतमहाविधि पेरे ॥ जग० ॥ ३ ॥ तुमरे अमित सुगुनज्ञानादिक, सतत मु-

१ वचनरूपी रज सूर्यने। २ जहाज। ३ शेषके चारअघातिकर्म। ४ मोक्ष। ५ लक्ष्मीके घर। ६ मदनाशक।

कर्म कर्मफलमाहिं न राचै, ज्ञानसुधारस पीजे ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ मुझ कारजके तुम कारन वर, अरज दौलकी लीजे । हे जिन० ॥ ४ ॥

२४.

शामरियाके नाम जपेतैं, छूटजाय भवभामरियां । शाम० ॥ टेक ॥ दुरित[2] दुरंत[3] पुन पुरत फुरतै[4] गुन, आतमकी निधि आगरियां । विघटत है परदाह चाह झट, गटकंत[5] समरस गागरियां । शाम० ॥ १ ॥ कटत कलंक कर्म कलसांयन[6], प्रगटत शिवपुरडांगरियां, फटत घटाघन मोह छोर्ह हट प्रगटत भेद ज्ञान घरियां ॥ शाम० ॥ २ ॥ कृपाकटाक्ष तुमारीहीतैं, जुगलनागविपदा टरियां । धार भये सो मुक्तिरमावर, दौल नमें तुव पागरियां ॥ शाम० ॥ ३ ॥

२५.

शिवमगदरसावन रावरो दरस । शिवमग०

---

१ भवभ्रमण । २ पाप । ३ छिपते हैं । ४ स्फुरित होता है । ५ गटकते हैं अर्थात् पीते हैं । ६ कालिख । ७ मोक्षका रास्ता । ८ रागद्वेष । ९ तुह्मारा नाम धारण करके । १० आपको ।

॥ टेक ॥ पर[1]-पद-चाह-दाह-गदनाशन, तुम वच-भेपज-पान सरस। शिवमग० ॥ १ ॥ गुणचित-वत निज अनुभव प्रघटै, विघटै विधिठग दुविध तरस। शिवमग० ॥ २ ॥ दौल अवाँची[2] संपति सांची; पाय रहै थिर राच सरस। शिवमग०॥३॥

२६.

मेरी सुध लीजे रिपभस्वाम। मोहि कीजें शिवपथगाम ॥ टेक ॥ मैं अनादि भवभ्रमत दुखी अव, तुम दुखमेटत कृपाधाम। मोहि मोह घेरा कर चेरा, पेरा चहुंगतिविपतठाम। मेरी० ॥ १ ॥ विपयन मन ललचाय हरी मुझ, शुद्धज्ञान-संपति ललाम। अथवा यो जड़को न दोष मम, दुख-सुखता, परनतिसुकाम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग जगे अव चरन जपे तुम, वच सुनके गहे सुगुन[3]ग्राम। परमविराग ज्ञानमय मुनिजन, जपत तुमारी सुगुन[4]दाम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ निर्विकार संपतिकृति

१ पुद्गलसम्बन्धी चाहका दाहरूपीरोग नाशकरनेके लिये दवाई। २ अवाच्य, जिसका वर्णन न हो सके। ३ गुणोंके समूह। ४ गुणोंकी माला।

तेरी, छविपर वारों कोटि काम। भव्यनिके भव-हारन कारन, सहज यथा तमहरन घाम[1] ॥ मेरी० ॥ ४ ॥ तुम गुनमहिमा कथनकरनको, गिनत गनी[2] निजबुद्धि खाम[3] । दौलतनी[4] अज्ञान परनती, हे जगत्राता कर विराम ॥ मेरी० ॥ ५ ॥

२७.

मोहि तारो जी क्यों ना ? तुम तारक त्रिजग त्रिकालमें, मोहि० ॥ टेक ॥ मैं भवउदधि पखो दुख भोग्यो, सो दुख जात कह्यो ना। जामनमरन अनंततनो तुम, जाननमाहिं छिप्यो ना ॥ मोहि० ॥ १ ॥ विषय विरसरस विषम भख्यो मैं, चख्यो न ज्ञान सलोना। मेरी भूल मोहि दुख देवै, कर्मनिमित्त भलो ना ॥ मोहि० ॥ २ ॥ तुम पदकंज धरे हिरदै जिन, सो भवताप तप्यो ना। सुरगुरुहूके वचन[5]करनकर, तुम जसगगन नप्यो[6] ना ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ कुगुरु कुदेव कुश्रुत सेये मैं, तुम मत हृदय धखो ना। परम-

---

१ सूरज । २ गणधर । ३ कोताही कमी । ४ की । ५ वचनरूपी किरणोंसे अथवा हाथों से । ६ मापा नहीं गया ।

विराग ज्ञानमय तुमजा,-ने विन काज सखो ना ॥ मोहि० ॥ ४ ॥ मो सम पतित[1] न और दया-निधि, पतिततार[2] तुम सो ना । दौलतनी अरदास[3] यही है, फिर भववास वसों ना ॥ मोहि० ॥ ५ ॥

२८.

मैं आयो, जिन शरन तिहारी । मैं चिरदुखी विभावभावतैं, स्वाभाविक निधि आप विसारी ॥ मैं० ॥ १ ॥ रूप निहार धार तुम गुन सुन, वैन होत भवि शिवमगचारी । यों ममकारजके कारन तुम, तुमरी सेव एव उरधारी ॥ मैं० ॥ २ ॥ मि-ल्यो अनंत जन्मतें अवसर, अब विनऊं हे भव-सरतारी । परमें इष्ट अनिष्ट कल्पना, दौल कहै झट मेट हमारी ॥ मैं० ॥ ३ ॥

२९.

मैं हरख्यो निरख्यो मुख तेरो । नासान्यस्त[4]-नयन भ्रू हलय[5] न, वयन निवारन मोह अंधेरो ॥ मैं० ॥ १ ॥ परमें कर मैं निजबुधि अवलों, भव-

---

१ पापी । २ पापियोंका तारनेवाला । ३ अर्जी । ४ नासिकापर लगाई है दृष्टि जिसने ५ हिलते नहीं हैं ।

सरमें दुख सह्यो घनेरो । सो दुखभानन स्वपर-पिछानन, तुमविन आन न कारन हेरो ॥ मैं० ॥ २ ॥ चाह भई शिवराहलाह[1]की, गयो उछाह असंजमकेरो । दौलत हितविराग चित आन्यो, जान्यो रूप ज्ञानदृग मेरो ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०.

प्यारी लागै म्हाने जिन छवि थारी ॥ टेक ॥ परमनिराकुलपद दरसावत, वर विरागताकारी। पटभूषन विन पै सुंदरता,सुरनरमुनिमनहारी ॥ प्यारी० ॥ १ ॥ जाहि विलोकत भवि निज निधि लहि, चिरविभावता टारी । निरनिमेष[2]तें देख सचीपति[3], सुरता[4] सफल विचारी ॥ प्यारी० ॥२॥ महिमा अकथ होत लख ताको, पशु सम समकितधारी । दौलत रहो ताहि निरखनकी, भव भव टेव हमारी ॥ प्यारी० ॥ ३ ॥

३१.

निरख सुख पायो, जिन मुखचंद । नि० ॥ टेक ॥ मोह महातम नाश भयो है, उरअंबुज

१ लाभ–प्राप्तिकी । २ टिमकाररहित । ३ इन्द्र । ४ देवपणा ।

प्रफुलायो। ताप नस्यो बढ़ि उदधि अनंद। निरख० ॥ १ ॥ चकवी कुमति बिछुर अति बिलखै, आतमसुधा स्रवायो। शिथिल भये सब विधिगनफंद ॥ निरख० ॥ २ ॥ बिकट भवोदधिको तट निकट्यो, अघतरुमूल नसायो। दौल लह्यो अब सुपद स्वछंद ॥ निरख० ॥ ३ ॥

३२.

निरख सखि ऋषिनको ईश यह ऋषभ जिन, परखिके स्वपर पर[1]सौंज छारी। नैन नाशाग्र धरि मैन[2] बिनसायकर, मौनजुत स्वास दिशि-सुरभिकारी[3] ॥ निरख० ॥ १ ॥ धरासम क्षांतियुत नरामरखचरनुत[4], वियुत[5]रागादिमद दुरित[6]हारी। जास क्रम[7]पास भ्रमनाश पंचास्य[8] मृग, वासकरि प्रीतिकी रीति धारी ॥ निरख० ॥ २ ॥ ध्यानदव[9]माहिं विधिदारु[10] प्रजरांहि शिर, केशशुभ जिमि धुआं दिशि विथारी[11]। फँसे जगपंक जनरंक तिने

१ परपरणति। २ काम। ३ दिशाओंको सुगन्धित करनेवाली। ४ मनुष्य देव विद्याधरोंसे वन्दनीय। ५ रहित। ६ पाप। ७ चरण। ८ सिंह। ९ ध्यानरूपी अग्निमें। १० कर्मरूपी इंधन। ११ विस्तारी।

काढ़ने, किधों जगनाह यह बाँह सारी॥ निरख०॥ ३॥ तप्त हाटकवरन वसन विन आभरन, खरे थिर ज्यों शिखर मेरुकारी। दौलको दैन शिवधौल जगमौल जे, तिन्हें करजोर वंदन हमारी॥ निरख०॥ ४॥

३३.

ध्यानकृपान पानि गहि नासी, त्रेसठ प्रकृति अरी। शेष पंचासी लाग रही हैं, ज्यों जेवरी जरी॥ ध्यान०॥ टेक॥ दुठ अनंगमातंगभंगकर, है प्रबलंगहरी। जा पदभक्ति भक्तजन-दुख दावानल-मेघझरी॥ ध्यान०॥ १॥ नवल धवल पल सोहै कलमें, क्षुधतृषव्याधि टरी। हलत न पलक अलक नख बढ़त न, गति नभमाहिं करी। ध्यान०॥ २॥ जा विन शरन मरनजरधरधर, महा असात भरी। दौल तास पद दास होत है, बास मुक्तिनगरी॥ ध्यान०॥ ३॥

---

१ पसारी। २ तपाये हुए सोनेकासा रंग। ३ मेरुका। ४ मुक्तिरूपी महल। ५ ध्यानरूपी तलवार। ६ घातियाकर्मोंकी प्रकृतियें। ७ कामदेवरूपी हस्तीको मारनेवाले। ८ बलवान् सिंह। ९ मांस व रुधिर। १० शरीरमें। ११ केश।

छीजिये। कर्म कर्मफल माहिं न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये। प्रभुमोरी० ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरननिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये। मुझकारजके तुम बड़कारन, अरज दौलकी लीजिये। प्रभु मोरी० ॥ २ ॥

४४.

वारी हो वधाई या शुभ साजै। विश्वसेन ऐरादेवीगृह जिनभवमंगल छाजै। वारी० ॥ टेक॥ सब अमरेश अशेष विभवजुत, नगर नागपुर आये। नाग-दत्त सुरइन्द्रवचनतैं, ऐरावत सज धाये। लखजोजन शतवदन वदनवसु रद प्रतिसर ठहराये। सर-सर सौ-पन-वीस नलिनप्रति, पदम पचीस विराजै। वारी हो० ॥ १ ॥ पदमपदमप्रति अष्टोत्तरशत, ठने सुदल मनहारी। ते सब कोटि सताइसपै मुद, जुत नाचत सुरनारी। नवरसगान ठान काननको, उपजावत सुखभारी। वंकलैलावत लंकलचावत, दुतिलखि

१ न्यून न होवे। २ शान्तिनाथ भगवानकी माता। ३ भगवानके जन्मका उत्सव। ४ सम्पूर्ण। ५ हस्तिनापुर। ६ कुवेर। ७ दाँत।

दामनि लाजै । वारी हो० ॥ २ ॥ गोप[1] गोप[2]तिय
जाय मायढिग, करी तास थुति सारी । सुख-
निद्रा जननीको कर नमि, अंक[3] लियो जगतां[4]-
री । लै वसुमंगल द्रव्य दिशसुरीं[5]चलीं अग्रशुभ-
कारी । हरखि हरी[6] चख सहस करी तब, जिन-
वर निरखनकाजै । वारी हो० ॥ ३ ॥ ता गजे-
न्द्रपैं प्रथम इन्द्रने, श्रीजिनेन्द्र पधराये । द्वितिय[7]
छत्र दिय तृतिय[8], तुरिय-हरि, मुदधारि चमर ढुरा-
ये । शेष[9]शक्र जयशब्द करत नभ, लंघ सुराचल[10]
छाये । पांडुशिला जिन थाप नची संचि[11], दुंदु-
भिकोटिक बाजै । वारी० ॥ ४ ॥ पुन सुरेशने
श्रीजिनेशकोजन्मन्हवन शुभ ठानो । हेमकुंभ
सुरहाथहिं हाथन, क्षीरोदधिजल आनो । वदन[12]-
उदरअवगाह एक चौ, वसुयोजन परमानो । स-
हसआठकर करि हरि जिनशिर, ढारत जयधुनि

---

१ गुप्त रूपसे । २ इन्द्राणी । ३ गोदमें । ४ भगवान । ५ दिक-न्यका देवियाँ । ६ इन्द्र । ७ ऐशान इन्द्र । ८ सानत्कुमार और माहेन्द्र । ९ वाकीके सव इन्द्र । १० सुमेरु । ११ इन्द्राणी । १२ सोनेके कलशोंके मुख एक योजन, उदर चार योजन और गहराई आठ योजन थी ।

गाजै । वारी० ॥ ५ ॥ फिर हरिनारि[1] सिंगार स्वामितन, जजे सुरा जस गाये । पूरवली[2] विधिकर पयान मुद,-ठान पिताघर लाये । मनिमय आंगनमें कनकासन,-पै श्रीजिन पधराये । तांडव नृत्य कियो सुरनायक, शोभा सकल समाजै । वारी० ॥ ६ ॥ फिर हरि जगगुरुपितर[3]-तोष शान्तेश[4] घोष[5] जिन नामा । पुत्रजन्म उत्साह नगरमें, कियो भूप अभिरामा । साध सकल निजनिजनियोग सुर,-असुर गये निजधामा । त्रिपद[6]धारि जिनचारुचरनकी, दौलत करत सदा जै । वारी० ॥ ७ ॥

४९.

हे जिन ! तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी । हे जिन० ॥ टेक ॥ दुर्जयमोह महाभट जाने, निजवश कीनें जगप्रानी । सो तुम ध्यानकृपान पानिगहि, ततछिन ताकी थिति

---

१ इन्द्राणी । २ पूर्वकी । ३ जिन भगवानके पिताकी स्तुती करके । ४ शान्तिनाथनाम । ५ घोषणा करके । ६ तीर्थंकरत्व, चक्रवर्तित्व और कामदेवत्व इन तीन पदोंके धारी ।

भानी । हे जिन० ॥ १ ॥ सुस अनादि अविद्या-निद्रा, जिन जन निजसुधि विसरानी । है सचेत तिन निजनिधि पाई, श्रवन सुनी जब तुमवानी । हे जि० ॥ २ ॥ मंगलमय तू जगमें उत्तम, तुही शरन शिवमगदानी । तुवपद-सेवा परम औषधी, जन्मजरामृतगद[1] हानी । हे जिन० ॥ ३ ॥ तुमरे पंजकल्यानकमाहीं, त्रिभुवन मोद-दशा ठानी । विष्णु, विदंवर, जिष्णु, दिगम्बर, बुध, शिव कह ध्यावत ध्यानी । हे जिन० ॥ ४ ॥ सर्व दर्वगुनपरजयपरनति, तुम सुबोधमें नहिं छानी । तातें दौलदास उरआशा, प्रगट करो निजरससानी । हे जिन० ॥ ५ ॥

४६.

हे मन ! तेरी को कुटेव यह, करनविषयमें[2] धावै है । हे मन० ॥ टेक ॥ इनहीके वश तू अनादितैं, निजस्वरूप न लखावै है । पराधीन छिन छीन समाकुल, दुरगतिविपति चखावै है । हे

---

१ जन्ममरणजरारूपी रोग । २ इन्द्रियोंके विपयमें ।

मन० ॥ १ ॥ फरस विषयके कारन वारन, गरतपरत दुख पावै है । रसना इंद्रीवश झष जलमें, कंटक कंठ छिदावै है । हे मन० ॥ २ ॥ गंधलोल पंकज मुद्रितमें अलि निजप्रान खपावै है । नयनविषयवश दीपशिखामें अंग पतंग जरावै है । हे मन० ॥ ३ ॥ करनविषयवश हिरन अरनमें, खलकर प्रान लुनावै है । दौलत तज इनको जिनको भज, यह गुरु शीख सुनावै है । हे० ॥ ४ ॥

४७.

हो तुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृष पाय वृथा खोवत हो । हो तुम० ॥ टेक ॥ पी अनादि मदमोह स्वगुननिधि, भूल अचेत नींदसोवत हो । हो तुम० ॥ १ ॥ स्वहितसीखवच सुगुरु पुकारत, क्यों न खोल उरदृग जोवत हो । ज्ञानविसार विषयविष चाखत, सुरतरु जारि कनक

---

१ हाथी । २ गढेमें पड़कर । ३ मछली । ४ बंदकमलोंमें । ५ कानके विषयसे । ६ वनमें । ७ जिनधर्म । ८ हियेकी आंखें । ९ कल्पवृक्षको जलाकर । १० धत्तूरा ।

बोवत हो ॥ हो तुम० ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सकल जगकारन, क्यों निजपापभार ढोवत हो। नरभवसुकुल जैनवृष नौका, लह निज क्यों भवजल डोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ३ ॥ पुण्यपापफल-वातव्याधिवश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो। संयमसलिल लेय निजउरके, कलिमल क्यों न दौल धोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ४ ॥

४८.

हो तुम त्रिभुवनतारी हो जिन जी, मो भवजलधि क्यों न तारत हो ॥ टेक ॥ अंजन कियो निरंजन तातें, अधमउधारविरद धारत हो। हरि वराह मर्कट झट तारे, मेरी वेर ढील पारत हो। हो तुम० ॥ १ ॥ यों बहु अधम उधारे तुम तौ; मैं कहा अधम न मुहि टारत हो। तुमको करनो परत न कछु शिव,-पथ लगाय भव्यनि तारत हो। हो तुम० ॥ २ ॥ तुम छविनिरखत सहज टरै अघ, गुणचिंतत विधि रज झारत हो। दौल न और चहै मो दीजे, जैसी आप भावना रत हो। हो तुम० ॥ ३ ॥

४९.

मान ले या सिख मोरी, झुकै मत भोगन ओरी। मानले० ॥ टेक ॥ भोग भुजंगभोगसम[1] जानो, जिन इनसे रति जोरी। ते अनंत भव भीम[2] भरे दुख, परे अधोगति पौरी[3]; बँधे दृढ पातकडोरी[4] ॥ मान० ॥ १ ॥ इनको त्याग विरागी जे जन, भये ज्ञानवृषधोरी। तिन सुख लह्यो अचल अविनाशी, भवफांसी दई तोरी; रमै तिनसँग शिवगौरी। मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाषहरनको, त्रिजग संपदा थोरी। यातैं ज्ञानानंद दौल अब, पियौ पियूष कटोरी; मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ मान० ॥ ३ ॥

५०.

छांड़िदे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी। छांड० ॥ टेक ॥ यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी। यासों ममता कर अनादितैं, बँधो कर्मकी डोरी, सहै दुख

१ सर्पके फणकी समान। २ भयानक। ३ पौर। ४ पापकी डोरमें।

जलधि हिलोरी ॥ छांड़ि दे या वुधि भोरी; वृथा० ॥ १ ॥ यह जड़ है तू चेतन यौं ही, अपनावत वरजोरी । सम्यक्‌दर्शन ज्ञान चरण निधि; ये हैं संपत तोरी, सदा विलसौ शिव-गोरी ॥ छांड़ि दे या वुधि भोरी; वृथा० ॥ २ ॥ सुखिया भये सदीव जीव जे, यासें ममता तोरी । दौल सीख यह लीजे पीजे; ज्ञानपियूस कटोरी, मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़ि दे या वुधि भोरी; वृथा० ॥ ३ ॥

८१.

भाखूं हित तेरा; सुनि हो मन मेरा, भाखूं० ॥ टेक ॥ नरनरकादिक चारों गतिमें, भटक्यो तू अधिकानी । परपरनतिमें प्रीतिकरी निज-परनति नाहिं पिछानी; सहे दुख क्यों न घनेरा ॥ ॥ भाखूं० ॥ १ ॥ कुगुरुकुदेवकुपंथपंकफँसि, तैं वहु खेद लहायो । शिवसुख देन जैन जगदीपक, सो तैं कवहुं न पायो; मिट्यो न अज्ञानअँधेरा॥ भाखूं० ॥ २ ॥ दर्शनज्ञानचरन तेरी निधि, सो

विधिठगन[1] ठगी है । पांचों इंद्रिनके विपयनमें, तेरी बुद्धि लगी है, भया इनका तू चेरा ॥ भाखूं० ॥ ३ ॥ तू जगजालविषै बहु उरझ्यो, अब कर ले सुरझेरा । दौलत नेमिचरनपंकजका, हो तू भ्रमर सवेरा[2], नशै ज्यों दुख भवकेरा ॥ भाखूं० ॥ ४ ॥

५२.

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावै, जाको जिनवानी न सुहावै । ऐसा० ॥ टेक ॥ वीतरागसे देव छोड़कर, भैरव यक्ष मनावै । कल्पलता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायनि वावै[3] ॥ ऐसा० ॥ १ ॥ रुचै न गुरु निर्ग्रन्थभेप वहु, परिग्रही गुरु भावै । परधन परतियको अभिलाषै, अशनै[4] अशोधित[5] खावै ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ परकी विभव देख है सोगी[6], परदुख हरख लहावै । धर्महेतु इक दाम न खरचै, उपवन लक्ष[7] वहावै ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ जो गृहमें संचय बहु अघ तौ, वनहूमें उठ जावै । अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर, वाघ-

---

१ कर्मरूपी ठगोंने । २ शीघ्र ही । ३ बोवै । ४ भोजन । ५ विना शोधा हुआ । ६ दुःखी । ७ वाग वनानेमें लाखों रुपये ।

म्बर तन छावै ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ आरँभ तज शठ यंत्रमंत्र करि, जनपै पूज्य मनावै । धाम-वाम तज दासी राखै, बाहिर मढ़ी वनावै ॥ ऐसा० ॥ ५ ॥ नाम धराय जती तपसी मन, विषयनिमें ललचावै । दौलत सो अनंत भव भटकै, औरनको भटकावै ॥ ऐसा० ॥ ६ ॥

६३.

ऐसा योगी क्यों न अभयपद पावै, सो फेर न भवमें आवै । ऐसा० ॥ टेक ॥ संशय-विभ्रम-मोह-विवर्जित, स्वपरस्वरूप लखावै । लख पर-मातमचेतनको पुनि, कर्मकलंकमिटावै ॥ ऐसा योगी० ॥ १ ॥ भवतनभोगविरक्त[1] होय तन, नग्न सुभेष बनावै । मोहविकार निवार निजातम,-अनुभवमें चित लावै ॥ ऐसा योगी० ॥ २ ॥ त्रस-थावर-वध त्याग सदा परमाददशा छिटकावै । रागादिकवश झूंठ न भाखै, तृणहु न अदत्त[2] गहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ३ ॥ बाहिर नारि त्यागि अंतर चिदब्रह्म सुलीन रहावै । परमा-

---

१ संसार और देह भोगोसे विरक्त । २ विना दिया ।

किंचन धर्मसार सो, द्विविधप्रसंग[1] बहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ४ ॥ पंचसमिति त्रयगुप्ति पाल व्यवहार-चरनमग धावै । निश्चय सकलकषायरहित है, शुद्धातम थिर थावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ५ ॥ कुंकुम पंक दास रिपु तृण मणि, व्यालमाल सम भावै । आरतरौद्र कुध्यान विडारै, धर्मशुकलको ध्यावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ६ ॥ जाके सुखसमाजकी महिमा, कहत इन्द्र अकुलावै । दौल तासपद होय दास सो, अविचलऋद्धि लहावै ॥ ऐसा० ॥ ७ ॥

८४.

लखो जी या जिय भोरेकी वातैं, नित करत अहितहित घातैं । लखोजी० ॥ टेक ॥ जिन गनधर मुनि देशव्रती समकिती सुखी नित जातैं । सो पय ज्ञान न पान करत न,[2] अघात विषय-विष खातैं ॥ लखो० ॥ १ ॥ दुखस्वरूप दुखफै[3]लद जलदसम[4], टिकत न छिनक विलातैं । तजत न जगत न भजत पतित नित, रचत न फिरत

---

१ दो प्रकारका परिग्रह । २ तृप्त होता है । ३ दुखरूप फल देनेवाला । ४ बादल ।

धनादि प्रगट पर, ये मुझतैं हैं भिन्नप्रदेशैं । इनकी परनति है इन आश्रित, जो इन भाव परनवैं वैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ देह अचेतन चेतन मैं इन, परनति होय एकसी कैसैं । पूरनगलन[1] स्वभावधरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पर परिनमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुष द्वंद्व भयेसैं । नसै ज्ञान निज फँसै बंधमें, मुक्त होय समभाव लयेसैं ॥ ज्ञानी० ॥३॥ विषयचाहदवदाहनशै नहिं, बिन निज सुधासिंधुमें पैसैं । अब जिनवैन सुने श्रवननतैं, मिटै विभाव करूं विधि तैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ ऐसो अवसर कठिन पाय अब, निजहितहेत विलंब करेसैं । पछताओ बहु होय सयाने, चेतत दौल छुटो भवभैसैं ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥

५८.

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायो, ज्यों शुक नभचाल विसरि नलिनी लटकायो ॥ अपनी० ॥ टेक ॥ चेतन अविरुद्धशुद्ध, दरश

१ पूरण होने और गलन होनेरूप स्वभाववालापुद्गल होता है ।

७५.

जिंनरागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा । जिनराग० ॥ टेक ॥ तज राजरिद्ध तृणवत निज काज सँभारा । जिनराग० ॥ १ ॥ रहता है वह वनखंडमें, धरि ध्यान कुठारा । जिन मोह महा तरुको, जड़मूल उखारा ॥ जिनराग० ॥ २ ॥ सर्वांग तज परिग्रह, दिगअंवर धारा । अनंतज्ञानगुनसमुद्र, चारित्र भँडारा ॥ जिन-राग० ॥ ३ ॥ शुक्काग्निको प्रजालके वसुकानन जारा । ऐसे गुरूको दौल है, नमोऽस्तु हमारा ॥ जिनराग० ॥ ४ ॥

७६.

चिद्रायगुन सुनो सुनो, प्रशस्त गुरुगिरा । समस्त तज विभाव, हो स्वकीयमें थिरा । चिद० ॥ टेक ॥ निजभावके लखाव विन, भवाब्धिमें परा । जामन मरन जरा त्रिदोष, अग्निमें जरा ॥ चिद० ॥ १ ॥ फिर सादि औ

१ यह पद दौलतरामजीका नहीं मालूम होता, इसका पाठ भी गड़वड़ है ।

अनादि दो, निगोदमें परा। तहँ अंकके असं-ख्यभाग, ज्ञान ऊबरा ॥ चिद० ॥ २ ॥ तहां भव अंतर मुहूर्तके, कहे गनेश्वरा। छ्यासठ सहस त्रिशत छतीस, जन्मधर मरा ॥ चिद० ॥ ३ ॥ यों वशि अनंतकाल फिर, तहांतें नीसरा। भूजल अनिल अनल प्रतेक, तरुमें तन धरा ॥ चिद० ॥ ४ ॥ अंधरीर कुंथु कान, मच्छ अवतरा। जलथल खचर कुनर नरक, असुर उपज मरा, ॥ चिद० ॥ ५ ॥ अबके सुथल सुकुल सुसंग, बोध लहि खरा। दौलत त्रिरतसाध लाध, पद अनुत्तरा ॥ चिद० ॥ ६ ॥

७७.

चित चिंतकैं चिदेश[1] कब, अशेष[2] पर[3] वमूं[4]। दुखदा अपार विधिं[5] दुचार[6],-की चमूं[7] दमूं ॥ चित चिं० ॥ टेक ॥ तजि पुण्यपाप थाप आप, आपमें[8] रमूं[9]। कब राग-आग शर्म[10]-बाग,-दागनी

१ आत्मा। २ सम्पूर्ण। ३ परपदार्थ। ४ वमन कर दूं-छोड़ दूं। ५ कर्म। ६ दो चार अर्थात् आठ। ७ फौज। ८ आत्मासें। ९ रमण करूं। १० कल्याणरूप बागकी जलानेवाली।

शमूं[1] ॥ चित चिंतकैं० ॥ १ ॥ दृगज्ञानभानतैं[2] मिथ्या, अज्ञानतम दमूं । कब सर्व जीव प्राणि[3]भूत, सत्त्वसों छमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ २ ॥ जलमल्ललिप्त[4]-कल[5] सुकल[6]-, सुबल्ल परिनमूं । दलकें त्रिशल्यमल्ल[7] कव, अटलपद[8] पमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ ३ ॥ कब ध्याय अज अमरको फिर न, भव-विपिन भमूं । जिन पूर कौल[9] दौलको यह, हेतु हौं नमूं ॥ चितकैं० ॥ ४ ॥

७८.

जिन छवि लखत यह बुधि भयी । जिन० ॥ टेक ॥ मैं न देह चिदंकमय तन, जड़ फरस-रसमयी । जिनछवि० ॥ १ ॥ अशुभशुभफल कर्म दुखसुख, पृथकता सब गयी । रागदोष-विभावचालित, ज्ञानता थिर थयी ॥ जिनछवि० ॥ २ ॥ परिगहन आकुलता दहन, विनशि

---

१ शमन करूं, शांत करूं । २ दर्शन और ज्ञानरूपी सूर्यसे । ३ दशप्राणमयी । ४ जड़ । ५ शरीर । ६ शुक्लध्यानके बलसे । ७ माया, मिथ्यात, निदानरूप तीन शल्यरूपी पहलवानोंको । ८ मोक्षपद । ९ प्रतिज्ञा ।

शमता लयी । दौल पूर्वअलभ आनँद, लह्यो भवथिति जयी ॥ जिन० ॥ ३ ॥

७९.

जिनवैन सुनत, मोरी भूल भगी । जिनवैन० ॥टेक॥ कर्मस्वभाव भाव चेतनको, भिन्न पिछानन सुमति जगी । जिन० ॥ १ ॥ जिन अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुष-तुष-मैल-पगी । स्यादवाद-धुनि-निर्मल-जलतैं, विमल भई सम-भाव लगी ॥ जिन० ॥ २ ॥ संशयमोहभरमता विघटी, प्रगटी आतमसोंज सगी । दौल अपूरव मंगल पायो, शिवसुख लेन होंस उमगी ॥ जिन० ॥ ३ ॥

८०.

जिनवानी जान सुजान रे । जिनवानी० ॥ टेक ॥ लागरही चिरतैं विभावता, ताको कर अवसान रे । जिनवानी० ॥ १ ॥ द्रव्यक्षेत्र अरु कालभावकी, कथनीको पहिचान रे । जाहि पिछाने स्वपरभेद सब, जाने परत निदान रे ।

१ पूर्वमें जिसका लाभ नहीं हुआ ऐसा । २ निजपरणति ।

जिनवानी० ॥ २ ॥ पूरव जिन जानी तिनहीने, भानी संसृत[2]बान रे । अब जानें अरु जानैंगे जे, ते पावें शिवथान रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥ कह 'तुषमाष' सुनी शिवभूती, पायो केवल-ज्ञान रे । यों लखि दौलत सतत करो भवि, चिद्वचनामृतपान रे ॥ जिनवानी० ॥ ४ ॥

८१.

जम आन अचानक दावैगा, जम आन० ॥ टेक ॥ छिनछिन कटत घटत थिति[3] ज्यों जल, अंजुलिको झर जावैगा । जम आन० ॥ १ ॥ जन्म[4] तालतरुतें पर जियफल, कोंलग बीच रहावैगा । क्यों न विचार करै नर आखिर, मरन महीमें आवैगा ॥ जम आन० ॥ २ ॥ सोवत मृत जागत जीवत ही, श्वासा जो थिर थावैगा । जैसें कोऊ छिपै सदासों, कबहूं अवशि पलावैगा[5] ॥ जम आन० ॥ ३ ॥ कहूं कबहुं कैसें हू कोऊ,

---

१ नाश की । २ भ्रमणकी आदत । ३ आयु । ४ जन्मरूपी ताड़वृक्षसे पड़ करके जीवरूपी फल वीचमें कवतक रहेगा ? वह तो नीचे पड़ेगा ही, अर्थात् मरेगा ही । ५ भागैगा ।

अंतक[1]से न बचावैगा । सम्यक्ज्ञानपियूष[2] पियेसों, दौल अमरपद पावैगा ॥ जम आन० ॥ ४ ॥

८२.

छांड़त क्यो नहिंरे, हे नर ! रीति अयानी । वारवार सिख देत सुगुरु यह, तू दे आनाकानी ॥ छांड़त० ॥ टेक ॥ विषय न तजत न भजत बोध व्रत, दुखसुखजाति न जानी । शर्म चहै न लहै शठ ज्यों घृतहेत विलोवत पानी ॥ छांड़त० ॥ १ ॥ तन धन सदन स्वजनजन तुझसों, यह परजाय विरानी । इन परिनमन-विनश-उपजनसों, तैं दुख सुखकर मानी ॥ छांड़त० ॥ २ ॥ इस अज्ञानतैं चिरदुख पाये, तिनकी अकथ कहानी । ताको तज दृग-ज्ञान-चरन- भज, निजपरनति शिवदानी ॥ छांड़त० ॥ ३ ॥ यह दुर्लभ नरभव सुसँग लहि, तत्त्व-लखावन वानी । दौल न कर अब परमें ममता, धर समता सुखदानी ॥ छांड़त० ॥ ४ ॥

---

१ जमराज़से । २ सम्यग्ज्ञानरूपी अमृत ।

८३.

राचि रह्यो परमाहिं तू अपनो रूप न जानै रे । राचि रह्यो० टेक ॥ अविचल चिनमूरत विनमूरत, सुखी होत तस ठानै रे । राचि रह्यो० ॥ १ ॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी, तू इनको निज जानै रे । ये पर इनहिं वियोगयोगमें, यों ही सुख दुख मानै रे ॥ राचि० ॥ २ ॥ चाह न पाये पाये तृष्णा, सेवत ज्ञान जघानै रे ॥ विपतिखेत विधिवंधहेत पैं, जान विषय रस खानै रे ॥ राचि० ॥ ३ ॥ नरभव जिनश्रुतश्रवण पाय अब, कर निज सुहित सयानै रे । दौलत आतम-ज्ञान-सुधारस, पीवो सुगुरु बखानै रे ॥ राचि रह्यो० ॥ ४ ॥

८४.

तू काहेको करत रति तनमें, यह अहितमूल जिम कारासदन[1] । तू काहेको० ॥ टेक ॥ चरमपिहित[2] पल[3]-रुधिर-लिप्त मल,-द्वारस्रवै छिन-

---

१ कारागार जहलखाना । २ चमड़ेसे ढकी हुई । ३ मांस ।

गई अब हू नर, धर दृग—चरन सम्हारे ॥ मोहिड़ा० ॥ ४ ॥

९३.

मेरे कब ह्वै वा दिनकी सुघरी । मेरे० ॥ टेक ॥ तन विनवसन असनविन वनमें, निवसों नासादृष्टि धरी । मेरे० ॥ १ ॥ पुण्यपापपरसों कब विरचों, परचों निजनिधि चिर-विसरी । तज उपाधि सजि सहजसमाधी, सहों घाम[1]-हिम-मेघ-झरी ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब थिरजोग धरों ऐसो मोहि, उपल[2] जान मृग खाज हरी । ध्यान-कमान तान अनुभव-शर[3], छेदों किहि दिन मोह अरी ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ कब तृनकंचन एक गनों अरु, मनिजड़ितालय[4] शैलदरी[5] । दौलत सतगुरुचरन-सेव जो, पुरवो आश यहै हमरी ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

९४.

लाल कैसे जावोगे, असरनसरन कृपाल-

---

१ धूप-शीत-वर्षा । २ पत्थर । ३ अनुभवरूपी बाण । ४ रत्न-जड़ित महल । ५ पर्वतकी कंदरा ।

लाल० ॥ टेक ॥ इक दिन सरस वसंतसमयमें, केशवकी सब नारी। प्रभुप्रदच्छनारूप खड़ी है, कहत नेमिपर वारी। लाल० ॥ १ ॥ कुंकुम लै मुख मलत रुकमनी, रँग छिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोर कर, छोरत है पिचकारी ॥ लाल० ॥ २ ॥ व्याह कबूल[1] करो तौ छूटौ, इतनी अरज हमारी। ओंकार कहकर प्रभु मुलके, छाँड़ दिये जगतारी ॥ लाल० ॥ ३ ॥ पुलकितवदन मदनपितु-भामिनि[2], निज निज सदन सिधारी। दौलत जादववंशव्योम-शशि[3], जयो जगतहितकारी ॥ लाल० ॥ ४ ॥

९५.

शिवपुरकी डगर[4] समरससों भरी, सो विषय-विरस-रचि चिरविसरी। शिव० ॥ टेक ॥ सम्यकदरश-बोध-व्रतमय भव,—दुखदावानल-मेघ-

---

१ स्वीकार। २ मगनप्रति—ऐसा भी पाठ है। मदनपितुभामिनि—मदन अर्थात् प्रद्युम्न कामदेवके पिता श्रीकृष्णकी स्त्रियें। ३ 'जादववंशव्योममणि' ऐसा भी पाठ है। जदुवंशरूपी आकाशके चन्द्रमा नेमिनाथ भगवान्। ४ मार्ग।

झरी । शिवपुर० ॥ १ ॥ ताहि न पाय तपाय देह बहु, जनममरन करि विपति भरी । काल पाय जिनधुनि सुनि मैं जन, ताहि लहूं सोइ धन्य घरी ॥ शिव० ॥ २ ॥ ते जन धनि या माहिं चरत नित, तिन कीरति सुरपति उचरी । विषयचाह भवराह त्याग अब, दौल हरो रज-[1]रहसिअरी ॥ शिवपुर० ॥ ३ ॥

९६.

तोहि समझायो सौ सौ बार, जिया तोहि समझायो० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो । सो सौ बार० ॥ १ ॥ विषयभुजंग सेय सुख पायो, पुनि तिनसों लपटायो । स्वपदविसार रच्यौ परपदमें, [2]मदरत ज्यों बोरायो । सौ सौ बार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे, नाहक नेह लगायो । क्यों न तजै भ्रम चाख [3]समामृत, जो नित संतसुहायो ॥ सौ सौ बार० ॥ ३ ॥ अब हू समझ

---

१ चारघातिया कर्म । २ शराबी—मद्यप । ३ समता रूपी अमृत ।

कठिन यह नरभव, जिन[1] वृष[2] विना गमायो। ते विलखें मनि डार उदधिमें, दौलत को पछतायो ॥ सौ सौ० ॥ ४ ॥

९७.

न मानत यह जिय निपट अनारी। सिख देत सुगुरु हितकारी ॥ न मानत० ॥ टेक ॥ कुमतिकुनारिसंग रति मानत, सुमतिसुनारि विसारी। न मानत० ॥ १ ॥ नरपरजाय सुरेश चहें सो, चखि विषविषय विगारी। त्याग अनाकुल ज्ञान चाह पर[3],-आकुलता विसतारी ॥ न मानत० ॥ २ ॥ अपनी भूल आप समतानिधि, भवदुख भरत भिखारी। परद्रव्यनकी परनतिको शठ, वृथा वनत करतारी[4] ॥ न मानत० ॥ ३ ॥ जिस कषाय–दव जरत तहां अभि,–लापछटा घृत डारी। दुखसों डरै करै दुखकारन,–तैं नित प्रीति करारी[5] ॥ न मानत० ॥ ४ ॥ अतिदुर्लभ जिनवैन श्रवनकरि, संशय-

१ जिन्होंने। २ धर्म। ३ पुद्गलसम्बधी। ४ कर्त्ता। ५ गाढ़ी।

मोहनिवारी । दौल स्वपर-हित-अहित
होवहु शिवमगचारी ॥ न मानत० ॥ ५ ॥

९८.

हम तो कबहूं न हित उपजाये ।
सुदेव-सुगुरु-सुसंगहित, कारन पाय गमाये ॥
हम तो० ॥ टेक ॥ ज्यों शिशु नाचत आप
मांचत[1], लखनहार बौराये । त्यों श्रुत[2]बांचत
न राचत, औरनको समुझाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥
सुजस-[3]लाहकी चाह न तज निज, प्रभुता
हरखाये । विषय तजे न [4]रंजे निजपदमें, परप-
दअपद लुभाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥
जिन-[5]जाप न कीन्हों, [6]सुमनचाप-तप-ताये । वे
तन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये
हम तो० ॥ ३ ॥ यह चिर भूल भई हमरी अब
कहा होत पछताये । दौल अजौं भवभोग
मत, यों गुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

---

१ मग्न होते । २ शास्त्र पढ़ते । ३ सुयशके लाभकी । ४ रचे-मग्न हुए । ५ जिनदेवका जाप । ६ सुमनचाप-कामदेवकी तपनमें तप्त ।

९९.

हम तो कबहूं न निजगुन भाये[1] । तन निज मान जान तनदुखसुख,-में बिलखे हरखाये । हम तो० ॥ टेक ॥ तनको गरन मरन लखि तनको, धरन मान हम जाये[2] । या भ्रमभौंर परे भवजल चिर, चहुंगति विपत लहाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ दरशबोधव्रतसुधा न चाख्यो, विविध विषय-विष खाये । सुगुरु दयाल सीख दइ पुनि पुनि, सुनि सुनि उर नहिं लाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ बहिरातमता तजी न अन्तर,-दृष्टि न ह्वै निज ध्याये । धाम-काम-धन-रामाकी नित, आश-हुताश-जलाये[3] ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ अचल अनूप शुद्ध चिद्रूपी, सब सुखमय मुनि गाये । दौल चिदानँद स्वगुन मगन जे, ते जिय सुखिया थाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१००.

हम तो कबहूं न निज घर आये । परघर

---

१ भावना की । २ उत्पन्न हुए । ३ आशारूपी अग्निमें ।

फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये ॥ हम तो० ॥ टेक ॥ परपद निजपद मानि मगन है, परपरनति लपटाये । शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, चेतनभाव न भाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ नर पशु देव नरक निज जान्यो, परजय-बुद्धि लहाये । अमल अखंड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं गाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ यह बहु भूल भई हमरी फिर, कहा काज पछताये । दौल तजो अजहूँ विषयनको, सतगुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥

१०१.

मानत क्यों नहिं रे, हे नर! सीख सयानी। भयो अचेत मोह-मद पीके, अपनी सुधि विसरानी ॥ टेक ॥ दुखी अनादि कुबोध अव्रततैं, फिर तिनसों रति ठानी । ज्ञानसुधा निजभाव न चाख्यो, परपरनति मति सानी ॥ मानत० ॥ १ ॥ भव असारता लखै न क्यो जहँ, नृप है कृमि[1] विट[2]-थानी । सधन निधन नृप दास

[1] कीट । [2] विष्ठाके स्थानमें ।

नमें ॥ २ ॥ इस तनमें तूं बे, क्या गुन देख लुभाया । महा अपावन बे, सतगुरु याहि व-ताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा । कृमिकुल-कलित लखत घिन आवै, यासों क्या कीजे नेहा ? ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमगसाधनमें । तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोगशोकके दानी । शुभगति रोकन बे, दुर्गतिपथअगवानी ॥ दुर्गतिपथअगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी इनसों । तिन नानाविधि विपति सही है, विमुख भया निजसुख तिनसों ॥ कुंजर[1] झख[2] अलि[3] शलभ[4] हिरन इन, एकअक्षवशों[5] मृत्यु लही । यातें देख समझ मनमाहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरे तब बे, जब निजपद आराधै । नशै भवावलि[6] बे, निराबाधपद लाधै ॥ निराबाधपद लाधै तब तोहि, केवल दर्शन ज्ञान

---

१ हाथी । २ मछली । ३ भौंरा—भ्रमर । ४ पतंग । ५ एक एक इंद्रियके वशसे । ६ भवोंका समूह ।

जहाँ। सुख अनन्त अतिइन्द्रियमंडित, वीरज अचल अनंत तहाँ ॥ २॥ ऐसा पद चाहै तो भज निज, वारवार अव को उचरै। दौल मुख्यउपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५ ॥

जकड़ी ११०.

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं, शारद अंवा चित लाऊं। द्विविधि-परिग्रह-परिहारी, गुरु नमहुं स्व-परहितकारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु, परख निजउर लाइये। दुखदाय कुपथविहाय शिवसुख,-दाय जिनवृष ध्याइये ॥ चिरतैं कुमग पगि मोहठगकर, ठग्यो भव-कानन पस्यो। व्यालीसद्विकलख जौनिमें, जरमरनजौमन-दव जस्यो ॥ १ ॥ जव मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया, तसुवश निगोदमें परिया। तहाँ स्वास एकके माहीं, अष्टादश मरन लहाहीं ॥ लहि मरन अन्तमुहूर्तमें, छ्यासठसहस शततीन ही। षट-

१ "जिन" भी पाठ है। २ संसाररूपी वन। ३ चौरासी-लाख योनि। ४ वृद्धावस्था, मृत्यु, और जन्मरूपी अग्निमें जला।

तीस काल अनंत यों दुख, सहे उपमाही नहीं ॥ कबहूं लही वर आयु छिंति-जल, पवन-पावक-तरुतणी । तसु भेद किंचित् कहूं सो मुनि, कह्यो जो गौतमगणी ॥ २ ॥ पृथिवी द्वय भेद बखाना, मृदु माटी कठिन पखाना । मृदु द्वादशसहस बरसकी, पाहन बाईस सहसकी ॥ पुनि सहस सात कही उदक[2] त्रय, सहसवर्ष समीरकी । दिन तीन पावक दशसहस तरु, प्रमित नाश सुपीरकी ॥ विनघात सूच्छम देहधारी, घातजुत गुरुतन लह्यो । तहँ खनन तापन जलन व्यंजन, छेद भेदन दुख सह्यो ॥ ३ ॥ शंखादि दुइंद्री प्रानी, थिति द्वादशवर्ष बखानी । यूका[3]दि तिइंद्री हैं जे, वासर उनचास जियें ते ॥ जीवैं छमास अली[4]प्रमुख, व्यालीससहस उरगतनी । खगकी बहत्तरसहस नवपूर्वांग सरीसृप[5]की भनी ॥ नर मत्स्य पूरबकोटकी थिति, करमभूमि बखानिये । जलचर विकल

१ पृथ्वी । २ पानी । ३ जूआंआदि । ४ भ्रमरआदि । ५ सर्पविशेष ।

विन भोगभूनर, पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥
अघवशकर नरकवसेरा, भुगतै तहँ कष्ट घनेरा।
छेदे तिलतिल तन सारा, छेपै द्रैहपूतिमँझारा ॥
मंझार वज्रानिल पचावैं, धरहिं शूली ऊपरैं।
सींचै जु खारे वारिसों दुठ, कहैं व्रण नीके करैं॥
वेतरणिसरिता समल जल अति, दुखद तरु सेंवलतने। अति भीम वन असिकांतसम दल, लगत दुख देवें घनें॥ ५॥ तिस भूमें हिम गरमाई, सुरगिरिसम अस गल जाई । तामें थिति सिंधुतनी है, यों दुखद नरक अवनी है॥
अवनी तहाँकीतें निकसि, कवहूं जनम पायो नरो। सर्वांग संकुचित अति अपावन, जठर जननीके परो ॥ तहँ अधोमुख जननी रसांश,-थकी जियो नवमास लों। ता पीरमें कोउ सीर नाहीं, सहे आप निकास लों ॥ ६ ॥
जनमत जो संकट पायो, रसनातैं जात न गा-यो। लहि वालपनैं दुख भारी, तरुनापो लयो

१ भोगभूमिया मनुष्य और पशु। २ दुर्गंधिके भरे तालाव।
३ फौंड़े। ४ तलवारकी धार। ५ पत्ते। ६ लोहा। ७ पृथिवी।

दुखकारी ॥ दुखकारि इष्टवियोग अशुभ, सँयोग सोग सरोगता । परसेव[1] ग्रीषम सीत पावस, सहै दुख अति भोगता । काहू कुतिय[2] काहू कुबांधव, कहुँ सुता व्यभिचारिणी । किसहू विसन[3]-रत पुत्र दुष्ट,—कलत्र[4] कोऊ परऋणी ॥७॥ वृद्धापनके दुख जेते, लखिये सब नयननतैं ते । मुख लाल[5] बहै तन हालै, विन शक्ति न वसन सँभालै ॥ न सँभाल जाके देहकी तो, कहो वृष[6]की का कथा ? तब ही अचानक आन जम गह, मनुज जन्म गयो वृथा ॥ काहू जनम शुभठान किंचित, लह्यो पद चहुंदेवको[7] । अभियोग[8] किल्विष[9] नाम पायो, सह्यो दुख परसेवको ॥ ८ ॥ तहँ देख महत सुरऋद्धी, झूर्‌यो विषयनकरि गृद्धी । कबहूं परिवार नसानो, शोकाकुल ह्वै विललानो ॥ विललाय अति जब म-

---

१ दूसरोंकी सेवा, नोकरी । २–४ दुष्टस्त्री । ३ व्यसनी । ५ लाला लार । ६ धर्मकी । ७ चार प्रकारके देवे । ८–९ आभियोग और किल्विष देवोंमें एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं ।

रन निकस्यो, सह्यो संकट मानसी। सुरविभव दुखद लगी जवै तव, लखी माल मैलान सी॥ तवही जु सुर उपदेशहित समु,-झायियो समुझ्यो न त्यों। मिथ्यात्वजुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों? ॥९॥ यों चिरभव अटवी गाही, किंचित साता न लहाही। जिनकथित धरम नहिं जान्यो, परमाहिं अपनपो मान्यो॥ मान्यो न सम्यक त्रयातम, आतम अनातममें फँस्यो। मिथ्याचरन दृग्ज्ञान रंज्यो, जाय नवग्रीवक व-स्यो॥ पै लह्यो नहिं जिनकथित शिवमग, वृथा भ्रम भूल्यो जिया। चिदभावके दरसाव विन सव, गये अहेले तप किया॥ १० ॥ अव अदभुत पुण्य उपायो, कुल जात विमल तू पायो। यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसों रति मत ठाने॥ ठाने कहा रति विषयमें ये, विषम विषधरसम लखो। यह देह मरत अनंत इनको, त्याग आतमरस चखो॥ या रसरसिकजन वसे शिव अव, वसें पुनि वसि हैं सही। दौ-

१ माला। २ मुरझानी हुई। ३ व्यर्थ। ४ सर्प।

लत स्वरचि परविरचि सतगुरु,-शीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥

होली १११.

ज्ञानी ऐसी होली मचाई० ॥ टेक ॥ राग कियो विपरीत विपन घर, कुमति कुसौति सुहाई । धार दिगंबर कीन्ह सु संवर, निज-पर-भेद लखाई । घात विषयनिकी बचाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ १ ॥ कुमति सखा भजि ध्यानभेद सम, तनमें तान उड़ाई । कुंभक ताल मृदंगसों पूरक, रेचक बीन बजाई । लगन अनुभवसों लगाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ २ ॥ कर्मबलीता रूप नाम अरि, वेद सुइन्द्रि गनाई । दे तप अग्नि भस्म करि तिनको, धूल अघाति उड़ाई । करी शिव तियकी मिलाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ ३ ॥ ज्ञानको फाग भागवश आवै, लाख करौ चतुराई । सो गुरु दीनदयाल कृपाकरि, दौलत तोहि बताई । नहीं चित्तसे विसराई ॥ ज्ञानी ऐसी होली मचाई ॥ ४ ॥

११२.

मेरो मन ऐसी खेलत होरी ॥ टेक ॥ मन मिरदंग साजकरि त्यारी, तनको तमूरा बनोरी। सुमति सुरंग सरंगी बजाई, ताल दोउ कर जोरी। राग पांचों पद कोरी ॥ मेरो मन० ॥ १ ॥ समकृति रूप नीर भर झारी, करुना केशर घोरी। ज्ञानमई लेकर पिचकारी, दोउ करमाहिं सम्होरी। इन्द्रि पांचों सखि बोरी ॥ मेरो मन० ॥ २ ॥ चतुर दानको है गुलाल सो भरि भरि मूठि चलोरी। तपमें बांकी भरि निज झोरी, यशको अबीर उड़ोरी। रंग जिनधाम मचोरी ॥ मेरो मन० ॥ ३ ॥ दौल बाल खेलें अस होरी, भवभव दुःख टलोरी। शरना ले इक श्रीजिनको री, जगमें लाज हो तोरी। मिलै फगुआ शिवगौरी ॥ मेरो मन० ॥ ४ ॥

११३.

निरखत जिनचंद री माई ॥ टेक ॥ प्रभु-दुति देख मंद भयौ निशिपति, आन सु पग लिपटाई। प्रभु सुचंद वह मंद होत है, जिन

सासमँझारी । जनममरन नवदुगुंन[1] विथाकी; कथा न जात उचारी ॥ सुध लीज्यो० ॥ ३ ॥ भू[2] जल ज्वलन[3] पवन प्रतेक तरु, विकलत्रयतनधारी । पंचेंद्री पशु नारक नर सुर विपति भरी भयकारी ॥ सुधलीज्यो० ॥ ४ ॥ मोह महारिपु नेक न सुखमय, होन दई सुधि थारी । सो दुठ मंद भयो भागनतैं, पाये तुम जगतारी ॥ ॥ सुध लीज्यो० ॥ ५ ॥ यदपि विरागि तदपि तुम शिवमग, सहजप्रगटकरतारी । ज्यों रवि-किरन सहजमगदर्शक, यह निमित्ति अनिवारी । सुध ली० ॥ ६ ॥ नाग छाग गज बाघ भील दुठ, तारे अधम उधारी । सीसनवाय पुकारत अबके, दौल अधमकी बारी ॥ सुधली० ॥ ७ ॥

१२१.

मत राचो धीधारी[4], भव रंभथंभसम[5] जानके । मत राचो ॥ टेक ॥ इंद्रजालको ख्याल मोह ठग, विभ्रमपास पसारी । चहुँगति विपतिमयी

१ अंठारहबारकी । २ पृथ्वीकाय । ३ अग्निकाय । ४ बुद्धिमानो ! ५ केलेके खंभे समान ।

जामें जन, भ्रमत भरत दुख भारी ॥ मत० ॥१॥ रामा मा, मा वामा[1], सुत पितु, सुता श्वसा[2], अवतारी । को अचंभ जहां आप आपके पुत्र दशा विस्तारी ॥ मत राचो० ॥२॥ घोर नरक दुख ओर न छोर न लेश न सुख विस्तारी । सुरनर प्रचुर विषयजुर जारे, को सुखिया संसारी ॥ मत राचो० ॥ ३ ॥ मंडल[3] है आँखंडल छिनमें, नृप कृमि[4], सधन भिखारी । जा सुत विरह मरी है वाघिनि, ता सुत देह विदारी ॥ मत राचो० ॥ ४ ॥ शिशु न हिताहितज्ञान तरुन उर, मदनदहन[6] परजारी । वृद्ध भये विकलांगी थाये, कौन दशा सुखकारी ? ॥ मत राचो० ॥ ५ ॥ यों असार लख छार भव्य झट, भये मोखमगचारी । यातैं होउ उदास दौल अब, भज जिनपति जगतारी ॥ मत० ॥ ६ ॥

१२२.

नित पीज्यो धीधारी, जिनवानि[7] सुधासम[8]

---

१ स्त्री । २ बहिन । ३ कुत्ता । ४ देव । ५ लट । ६ कामाग्नि । ७ जैनशास्त्रोंको । ८ अमृतसमान ।

जानके, नित पी० ॥ टेक ॥ वीरमुखारविंदतैं[1] प्रगटी, जन्मजरा-गद[2] टारी । गौतमादिगुरु-उर-घट व्यापी, परम सुरुचिकरतारी ॥ नित० ॥ १ ॥ सलिल[3]समान कलिल[4]मलगंजन बुधमन-रंजनहारी । भंजन विभ्रमधूलि प्रभंजन, मिथ्या-जलदनिवारी ॥ नित पी० ॥ २ ॥ कल्यानकतरु[5] उपवनधरिनी, तरनी[6] भवजलतारी । बंध[7]विदारन पैनी[8] छैनी, मुक्तिनसैनी सम्हारी ॥ नित पी० ॥ ३ ॥ स्वपरस्वरूप प्रकाशनको यह, भानुकला अविकारी । मुनि[9]-मन-कुमुदिनि-मोदन-शशिभा, शमसुख[10]सुमनसुबारी ॥ नि० ॥ ४ ॥ जाको सेवत बेवत[11] निजपद, नशत अविद्या सारी । तीनलोकपति[12] पूजत जाको, जान त्रिजगहितकारी ॥

---

१ महावीरस्वामीके मुखकमलसे । २ रोग । ३ जलकी समान । ४ पापरूपी मैलको नष्ट करनेवाली । ५ " मंगलतरुहिं उपावन धरनी" ऐसा भी पाठ है । ६ नौका । ७ कर्मबंध । ८ तीखी छैणी । ९ मुनियोंकी मनरूपी कुमोदनीको प्रफुल्लित करनेकेलिये चंद्रमाकी रोशनी । १० समता-रूपी सुख ही हुआ पुष्प, उसकेलिये अच्छी वाटिका । ११ जानते वा अनुभवते हैं । १२ तीन भुवनके राजा इन्द्रादिक ।

नित० ॥ ५ ॥ कोटि जीभसों महिमा जाकी, कहि न सके पवि[1]धारी । दौल अल्पमति केम कहै यह, अधमउधारनहारी ॥ नि० ॥ ६ ॥

१२३.

मत कीज्यो जी यारी, घिन[2]गेह देह जड़ जानके, मत की० ॥ टेक ॥ मात-तात-रज-वीरजसों यह, उपजी मलफुलवारी । अस्थि[3]माल-पल-नसाजालकी, लाल लाल जलक्यारी ॥ मत की० ॥ १ ॥ कर्मकुरंगथलीपुतली[4] यह, मूत्र-पुरीष[5]भँडारी । चर्ममँड़ी रिपुकर्मघड़ी धन, धर्म-चुरावनहारी ॥ मत कीज्यो० ॥ २ ॥ जे जे पावन वस्तु जगतमें, ते इन सर्व विगारी । स्वेद[6]-मेद[7]कफक्लेद[8]मयी बहु, मदगद[9]व्यालपिटारी ॥ मत की० ॥ ३ ॥ जा संयोग रोग[10]भव तोलों, जा वियोग शिवकारी । बुध तासों न ममत्व करैं यह, मूढ़मतिनको प्यारी ॥ मत की० ॥ ४ ॥

---

१ वज्रधारी इन्द्र । २ घृणाका घर । ३ हाड़ माँस नसोंके समूहकी । ४ कर्मरूपी हिरनोंको फँसानेवाली जगहपर पुतलीके समान । ५ विष्टा । ६ पसीना । ७ चरबी । ८ दुःख । ९ मदरोगरूपी सांपके लिये पिटारी । १० संसाररूपीरोग ।

जिन पोषी ते भये सदोषी, तिन पाये दुख भारी । जिन तप ठान ध्यानकर शोषी[1], तिन परनी शिवनारी ॥ मत की० ॥ ५ ॥ सुरधनु[2] शरदजलद[3] जलबुदबुद, त्यों झट विनशनहारी। यातैं भिन्न जान निज चेतन, दौल होहु शर्म[4]-धारी ॥ मत की० ॥ ६ ॥

१२४.

जाऊं कहां तज शरन तिहारे ॥ टेक ॥ चूक अनादितनी या हमरी, माफ करो करुणा गुन धारे ॥ १ ॥ डूबत हों भवसागरमें अब, तुम विनको मुह वार निकारे ॥ २ ॥ तुम सम देव अवर नहिं कोई, तातें हम गह हाथ पसारे ॥ ३ ॥ मोसम अधम अनेक उधारे, वरनत हैं श्रुत शास्त्र अपारे ॥ ४ ॥ "दौलत" को भव-पार करो अब, आयो है शरनागत थारे ॥ ५ ॥

समास ।

१ क्षीण की । २ इन्द्रधनुष्य । ३ शरदऋतुके बादल । ४ समताके धारी ।

श्रीवीतरागाय नमः

जैनपदसंग्रह द्वितीयभाग।

अर्थात्

पण्डित भागचन्द्रजीकृत पदोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयबम्बईने

मुम्बयीस्थ

निर्णयसागर प्रेसमें छपाकर.

प्रकाशित किया।

श्रीवीर नि० सं० २४३४।

प्रथमवार १००० प्रति] [मूल्य ।) आने।

प्रस्तावना ।

पाठक महाशय! पूरे एक वर्षके पीछे हम अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर सके । अर्थात् जैनपदसंग्रह प्रथमभाग प्रकाशित करनेके एक वर्ष पश्चात् यह दूसरा भाग आपके सम्मुख उपस्थित करनेमें समर्थ हुए । इस भागमें ईशागढ़निवासी कविवर भागचन्द्रजीके बनाये हुए पदोंका संग्रह है । उक्त कविवरके बनाये हुए और भी अनेक भजन सुने जाते हैं, परन्तु उनके प्राप्त करनेका कोई साधन न होनेसे हमको इतनेहीसे संतोष करना पड़ा है । दानवीर शेठ माणिकचन्द्रजीके पुस्तकालयमें एक पदोंकी पोथी है, उसीपरसे यह भाग तयार किया गया है । दूसरी पुस्तकके अभावमें इसके संशोधन करनेमें बहुत परिश्रम किया गया है, इतनेपर भी अनेक स्थान अशुद्ध और भ्रमपूर्ण रह गये हैं । आशा है कि आगामी संस्करणमें यह त्रुटि दूर हो जावेगी । किसी पदमें अशुद्धि जान पड़े और उनका पाठान्तर स्मरण हो, तो सज्जन पाठकोंको उसकी सूचना देनी चाहिये । वह सहर्ष साभार स्वीकार की जावेगी । इसके सिवाय जो महाशय कविवर भागचन्द्रजीके इन पदोंके अतिरिक्त अन्य भजन विनती आदि भेजनेकी कृपा करेंगे, उनके हम बहुत कृतज्ञ होंगे, और दूसरा संस्करण छपने पर उन्हें प्रत्येक पदपर एक २ पुस्तक भेटमें भेज देंगे । परन्तु पुस्तकके लोभसे कोई महाशय किसी दूसरे कविके बदले " भागचन्द्र " की छाप डालकर भेजनेकी कृपा न करें ।

हमारी इच्छा थी कि पहले भागके समान इसे भी टिप्पणीसहित प्रकाशित करें, परन्तु संशोधनमें अन्य पुस्तकोंकी सहायता न मिल सकनेके कारण ऐसा न किया जा सका । हो सका तो आगमी संस्करणमें टिप्पणी लगा दी जावेगी ।

मूल प्रतिमें रागोंके नाम जिसप्रकार लिखे थे हमने उसीके अनुसार

हो ॥ १ ॥ जिन अशुभोपयोगकी परनति, सत्तासहित विनाशी हो। होय कदाच शुभोपयोग तो, तहँ भी रहत उदासी हो ॥ २ ॥ छेदत जे अनादि दुखदायक, दुविधि बंधकी फाँसी हो। मोह क्षोभ रहित जिन परनति, विमल मयंक-कला सी हो ॥ ३ ॥ विषय-चाह-दव-दाह खुजावन, साम्य सुधारस-रासी हो। भागचन्द ज्ञानानंदी पद, साधत सदा हुलासी हो ॥ धन० ॥ ४ ॥

३.

यही इक धर्ममूल है मीता! निज समकितसार-सहीता। यही० ॥ टेक ॥ समकित सहित नरकपदवासा, खासा बुधजन गीता। तहँतें निकसि होय तीर्थंकर, सुरगन जजत सप्रीता ॥ १ ॥ स्वर्गवास हू नीको नाहीं, विन समकित अविनीता। तहँतें चय एकेंद्री उपजत, भ्रमत सदा भयभीता ॥ २ ॥ खेत बहुत जोते हु बीज बिन, रहित धान्यसों रीता। सिद्धि न लहत कोटि तपहूतें, वृथा कलेश सहीता ॥ ३ ॥ समकित अतुल अखंड सुधारस, जिन पुरुषननें पीता। भागचन्द ते अजर अमर भये, तिनहीनें जग जीता ॥ यही इक धर्म० ॥ ४ ॥

४.

राग ठुमरी।

जीवनके परिनामनिकी यह, अति विचित्रता देखहु ज्ञानी ॥ टेक ॥ नित्य निगोदमाहिंतैं कढ़िकर, नर परजाय पाय सुखदानी। समकित लहि अंतर्मुहूर्तमें, केवल

पाय वरैं शिवरानी ॥ २ ॥ मुनि एकादश गुणथानक चढि, गिरत तहांतैं चितभ्रम ठानी । भ्रमत अर्धपुद्गलपरावर्तन, किंचित् ऊन काल परमानी ॥ २ ॥ निज परिनामनिकी सँभालमें, तातैं गाफिल मत व्है प्रानी । वंध मोक्ष परिनामनिहीसों, कहत सदा श्रीजिनवरवानी ॥ ॥ ३ ॥ सकल उपाधिनिमित भावनिसों, भिन्न सु निज परनतिको छानी । ताहि जानि रुचि ठानि होहु थिर, भागचन्द यह सीख सयानी ॥ जीवनके पर० ॥ ४ ॥

५.

परनति सब जीवनकी, तीन भाँति वरनी ।
एक पुण्य एक पाप, एक रागहरनी ॥ परनति० ॥ टेक ॥
तामें शुभ अशुभ अंध, दोय करैं कर्मबंध,
वीतराग परनति ही, भवसमुद्रतरनी ॥ १ ॥
जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग,
तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ॥ २ ॥
त्याग शुभ क्रियाकलाप, करो मत कदाच पाप,
शुभमें न मगन होय, शुद्धता विसरनी ॥ ३ ॥
ऊंच ऊंच दशा धारि, चित प्रमादको विडारि,
ऊंचली दशातें मति, गिरो अधो धरनी ॥ ४ ॥
भागचन्द या प्रकार, जीव लहै सुख अपार,
याके निरधार स्याद्वादकी उचरनी ॥ परनति० ॥ ५ ॥

६.

जीव ! तू भ्रमत सदीव अकेला । सँग साथी कोई नहिं

तेरा ॥ टेक ॥ अपना सुखदुख आप हि भुगतै, होत कुटुंब न भेला। स्वार्थ भयैं सब विछुरि जात हैं, विघट जात ज्यों मेला ॥ १ ॥ रक्षक कोइ न पूरन ह्वै जब, आयु अंतकी बेला। फूटत पारि बँधत नहिं जैसे, दुद्धर जलको ठेला ॥ ॥ २ ॥ तन धन जोवन विनशि जात ज्यों, इन्द्रजालका खेला। भागचन्द इमि लख करि भाई, हो सतगुरुका चेला ॥ जीव तू भ्रमत० ॥ ३ ॥

७.

आकुलरहित होय इमि निशदिन, कीजे तत्त्वविचारा हो। को मैं कहा रूप है मेरा, पर है कौन प्रकारा हो ॥ टेक ॥ १ ॥ को भव-कारण बंध कहा को, आस्रवरोकन-हारा हो। खिपत कर्मबंधन काहेसौं, थानक कौन हमारा हो ॥ २ ॥ इमि अभ्यास कियें पावत है, परमानंद अपारा हो। भागचंद यह सार जान करि, कीजे बारं-बारा हो ॥ आकुलरहित होय० ॥ ३ ॥

८.

राग भैरव।

सुन्दर दशलच्छन वृष, सेय सदा भाई।
जासतैं ततच्छन जन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
क्रोधको निरोध शांत, सुधाको नितांत शोध,
मानको तजौ भजौ स्वभाव कोमलाई ॥ १ ॥
छल बल तजि सदा विमलभाव सरलताई भजि,
सर्व जीव चैन दैन, वैन कह सुहाई ॥ २ ॥

ज्ञान तीर्थ स्नान दान, ध्यान भान हृदय आन,
दया-चरन धारि करन-विषय सब विहाई ॥ ३ ॥
आलस हरि द्वादश तप, धारि शुद्ध मानस करि,
खेहगेह देह जानि, तजौ नेहताई ॥ ४ ॥
अंतरंग बाह्य संग, त्यागि आत्मरंग पागि,
शीलमाल अति विशाल, पहिर शोभनाई ॥ ५ ॥
यह वृष-सोपान-राज, मोक्षधाम चढ़न काज।
तनसुख (?) निज गुनसमाज, केवली बताई ॥ सुन्दर०॥६॥

९.

प्रभाती।

षोड़शकारन सुहृदय, धारन कर भाई !
जिनतें जगतारन जिन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
निर्मल श्रद्धान ठान, शंकादिक मल जघान,
देवादिक विनय सरल,-भावतें कराई ॥ १ ॥
शील निरतिचार धार, मारको सदैव मार,
अंतरंग पूर्ण ज्ञान, रागको विंधाई ॥ २ ॥
यथाशक्ति द्वादश तप, तपो शुद्ध मानस कर,
आर्त रौद्र ध्यान त्यागि, धर्म शुक्क ध्याई ॥ ३ ॥
यथाशक्ति वैयावृत, धार अष्टमान टार,
भक्ति श्रीजिनेन्द्रकी, सदैव चित्त लाई ॥ ४ ॥
आरज आचारजके, वंदि पाद-वारिजकों,
भक्ति उपाध्यायकी, निधाय सौख्यदाई ॥ ५ ॥

प्रवचनकी भक्ति जतनसेति बुद्धि धरो नित्य,
आवश्यक क्रियामें न, हानि कर कदाई ॥ ६ ॥
धर्मकी प्रभावना सु, शर्मकर बढावना सु,
जिनप्रणीत सूत्रमाहिं, प्रीति कर अघाई ॥ ७ ॥
ऐसे जो भावत चित, कलुपता बहावत तसु,
चरनकमल ध्यावत बुध, भागचंद गाई ॥ षोड़श० ॥८॥

१०.

प्रभाती ।

श्रीजिनवर दरश आज, करत सौख्य पाया ।
अष्ट प्रातिहार्यसहित, पाय शांति काया ॥ टेक ॥
वृक्ष है अशोक जहां, भ्रमर गान गाया ।
सुन्दर मन्दार-पहुप,-वृष्टि होत आया ॥ १ ॥
ज्ञानामृत भरी वानि, खिरै भ्रम नसाया ।
विमल चमर ढोरत हरि, हृदय भक्ति लाया ॥ २ ॥
सिंहासन प्रभाचक्र, बालजग सुहाया ।
देव दुंदुभी विशाल, जहां सुर बजाया ॥ ४ ॥
मुक्ताफल माल सहित, छत्र तीन छाया ।
भागचन्द अद्भुत छवि, कही नहीं जाया ॥ श्रीजिन०॥५॥

११.

राग ठुमरी ।

वीतराग जिन महिमा थारी, वरन सकै को जन त्रिभुवनमें ॥ वीतराग० ॥ टेक ॥ तुमरे अतट चतुष्टय प्रगट्यो, निःशेषावरनच्छय छिनमें । मेघ पटल विघटनतैं प्रगटत,

जिमि मार्तंड प्रकाश गगनमें ॥ वीतराग० ॥ १ ॥ अप्रमेय ज्ञेयनके ज्ञायक, नहि परिनमत तदपि ज्ञेयनमें । देखत नयन अनेकरूप जिमि, मिलत नहीं पुनि निज विषयनमें ॥ वीतराग० ॥२॥ निज उपयोग आपनै स्वामी, गाल दिया निश्चल आपनमें । है असमर्थ बाह्य निकसनको, लवन घुला जैसें जीवनमें[1] ॥ वीतराग० ॥ ३ ॥ तुमरे भक्त परम सुख पावत, परत अभक्त अनंत दुखनमें । जैसो मुख देखो तैसौ व्है, भासत जिम निर्मल दरपनमें ॥ वीतराग० ॥ ४ ॥ तुम कषाय विन परम शांत हो, तदपि दक्ष कर्मारिहतनमें । जैसे अतिशीतल तुषार पुनि, जार देत द्रुम भारि गहनमें ॥ वीतराग० ॥ ५ ॥ अब तुम रूप जथारथ पायो, अब इच्छा नहिं अन कुमतनमें । भागचन्द अमृतरस पीकर, फिर को चाहै विष निज मनमें ॥ वीतराग० ॥ ६ ॥

१२.

राग ठुमरी ।

बुधजन पक्षपात तज देखो, साँचा देव कौन है इनमें ॥ बुधजन० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा दंड कमंडलधारी, स्वांत भ्रांत वश सुरनारिनमें । मृगछाला माला मौंजी पुनि, विषयासक्त निवास नलिनमें ॥ बुधजन० ॥ १ ॥ शंभू खट्वांगसहित पुनि, गिरिजा भोगमगन निशदिनमें । हस्त कपाल

---

१ जीवन शब्दका अर्थ जल भी होता है ।

चारी वे ॥ श्रीगुरु छै० ॥ २ ॥ तिनके चरनसरोरुह ध्यावै, भागचन्द अघटारी वे ॥ श्रीगुरु० ॥ ३ ॥

३०.

राग खमाच ।

सारौ दिन निरफल खोयवौ करै छै । नरभव लहिकर प्रानी विनज्ञान, सारौ दिन नि० ॥ टेक ॥ परसंपति लखि निजचितमाहीं, विरथा मूरख रोयवौ करै छै ॥ सारो० ॥ १ ॥ कामानलतैं जरत सदा ही, सुन्दर कामिनी जोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ २ ॥ जिनमत तीर्थस्थान न ठानै, जलसों पुद्गल धोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ ३ ॥ भागचन्द इमि धर्म विना शठ, मोहनींदमें सोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ ४ ॥

३१.

राग परज ।

सम आराम विहारी, साधुजन सम आराम विहारी ॥ ॥ टेक ॥ एक कल्पतरु पुष्पन सेती, जजत भक्ति विस्तारी ॥ एक कंठविच सर्प नाखिया, क्रोध दर्पजुत भारी ॥ राखत एक वृत्ति दोउनमें, सबहीके उपगारी ॥ समआरा० ॥ १ ॥ सारंगी हरिबाल चुखावै, पुनि मराल मंजारी । व्याघ्रबाल-करि सहित नन्दिनी, व्याल नकुलकी नारी ॥ तिनके चरन कमल आश्रयतैं, अरिता सकल निवारी ॥ सम आ० ॥ २ ॥ अक्षय अतुल प्रमोद विधायक, ताकौ धाम अपारी । काम धरा विच गढ़ी सो चिरतैं, आतमनिधि अविकारी ॥ खनत

ताहि लै कर करमें जे,तीक्षण बुद्धि कुदारी ॥ समआराम० ३ निज शुद्धोपयोगरस चाखत, परममता न लगारी । निज सरधान ज्ञान चरनात्मक, निश्चय शिवमगचारी ॥ भागचंद ऐसे श्रीपति प्रति, फिर फिर ढोक हमारी ॥ समआरामवि० ॥४॥

३२.

राग सोरठ ।

इष्टजिन केवली म्हाकै इष्टजिन केवली, जिन सकल कलिमल दली ॥ टेक ॥ शान्ति छवि जिनकी विमल जिमि, चन्द्रदुति मंडली । संत-जन-मनके-कि-तर्पन सघन घनपटली ॥ ॥ इष्टजिन के० ॥ १ ॥ स्यात्पदांकित धुनि सुजिनकी, वदनतें निकली । वस्तुतत्त्वप्रकाशिनी जिमि, भानु किरनावली ॥ इष्टजिन० ॥ २ ॥ जासुपद अरविंदकी, मकरंद अति निरमली । ताहि घ्रान करै नमित हर,-मुकुट-दुति-मनि अली ॥ इष्टजिन० ॥ ३ ॥ जाहि जजत विराग उपजत, मोहनिद्रा टली । ज्ञानलोचनतैं प्रगट लखि, धरत शिववटगली ॥ इष्टजिन० ॥ ४ ॥ जासु गुन नहिं पार पावत, बुद्धि ऋद्धि बली । भागचंद सु अलपमति जन,-की तहां क्या चली ॥ इष्टजिन० ॥ ५ ॥

३३.

राग सोरठ ।

स्वामी मोह अपनो जानि तारौ, या विनती अब चित धारौ ॥ टेक ॥ जगत उजागर करुनासागर, नागर नाम

तिहारौं ॥ स्वामी मोह० ॥ १ ॥ भव अटवीमें भटकत भटकत, अब मैं अति ही हारौं । स्वामी मोह० ॥ २ ॥ भागचन्द स्वच्छन्द ज्ञानमय, सुख अनंत विस्तारौं ॥ स्वामी मोह० ॥ ३ ॥

३४.

राग सोरठ देशी ।

थांकी तो वानीमें हो, निज स्वपरप्रकाशक ज्ञान ॥ टेक ॥ एकीभाव भये जड़ चेतन, तिनकी करत पिछान ॥ थांकी तो० ॥ १ ॥ सकल पदार्थ प्रकाशत जामें, मुकुर तुल्य अमलान ॥ थांकी तो० ॥२॥ जग चूड़ामनि शिव भये ते ही, तिन कीनों सरधान ॥ थांकी तो० ॥ ३ ॥ भागचंद बुधजन ताहीको, निशदिन करत बखान ॥ थांकी तो० ॥४॥

३५.

राग सोरठ मल्हारमें ।

गिरिवनवासी मुनिराज, मन वसिया ह्मारैं हो ॥ टेक ॥ कारनविन उपगारी जगके, तारन-तरन-जिहाज ॥ गिरिवन० ॥१॥ जनम-जरामृत-गद-गंजनको, करत विवेक इलाज ॥ गिरिवन० ॥ २ ॥ एकाकी जिमि रहित केसरी, निरभय स्वगुन समाज ॥ ३ ॥ निर्भूपन निर्वसन निराकुल, सजि रत्नत्रय साज ॥ गिरिवन० ॥ ४ ॥ ध्यानाध्ययनमाहिं तत्पर नित, भागचन्द शिवकाज ॥ गिरिवन० ॥५॥

३६.

राग सोरठ।

म्हांकै घट जिनधुनि अब प्रगटी। जागृत दशा भई अब मेरी, सुप्त दशा विघटी। जगरचना दीसत अब मोकों, जैसी रँहटघटी ॥ म्हांकै घट० ॥ १ ॥ विभ्रम तिमिर-हरन निज दृगकी, जैसी अँजनवटी। तातैं स्वानुभूति प्रापतितैं परपरनति सब हटी ॥ म्हांकै घट० ॥ २ ॥ ताकै विन जो अवगम चाहै, सो तो शठ कपटी। तातैं भागचन्द निशिवासर, इक ताहीको रटी ॥ म्हांकै घट०॥३॥

३७.

राग सोरठ।

आवै न भोगनमें तोहि गिलान ॥ टेक ॥ तीरथनाथ भोग तजि दीनें, तिनतैं मन भय आन। तू तिनतैं कहुँ डरपत नाहीं, दीसत अति बलवान॥ आवै न० ॥१॥ इन्द्रियतृप्ति काज तू भोगै, विषय महा अघखान। सो जैसे घृतधारा डारै, पावकज्वाल बुझान ॥ आवै न० ॥ २ ॥ जे सुख तो तीछन दुखदाई, ज्यों मधुलिप्त-कृपान। तातैं भागचन्द इनको तजि, आतमस्वरूप पिछान॥ आवै न०॥३॥

३८.

राग सोरठ।

स्वामीजी तुम गुन अपरंपार, चन्द्रोज्ज्वल अविकार ॥ टेक ॥ जबै तुम गर्भमाहिं आये, तबै सब सुरगन मिलि आये। रतन नगरीमें वरषाये, अमित अमोघ सुढार ॥ स्वामी

जी० ॥ १ ॥ जन्म प्रभु तुमने जब लीना, न्हवन मंदिरपै हरि कीना। भक्ति करि सची सहित भीना, बोला जयजयकार ॥ स्वामीजी० ॥ २ ॥ जगत छनभंगुर जब जाना, भये तब नगनवृत्ती वाना। स्तवन लौकांतिकसुर ठाना, त्याग राजको भार ॥ स्वामीजी० ॥ ३ ॥ घातिया प्रकृति जबै नासी, चराचर वस्तु सबै भासी। धर्मकी वृष्टि करी खासी, केवलज्ञान भँडार ॥ स्वामीजी० ॥ ४ ॥ अघाती प्रकृति सुविघटाई, मुक्तिकान्ता तब ही पाई। निराकुल आनँद असहाई, तीनलोकसरदार ॥ स्वामीजी० ॥ ५ ॥ पार गनधर हू नहिं पावै, कहां लगि भागचन्द गावै। तुम्हारे चरनांवुज ध्यावै, भवसागरसों तार ॥ स्वामीजी० ॥ ६ ॥

३९.

राग मल्हार।

मान न कीजिये हो परवीन ॥ टेक ॥ जाय पलाय चंचला कमला, तिष्टै दो दिन तीन। धनजोवन छनभंगुर सब ही, होत सुछिन छिन छीन ॥मान न०॥१॥ भरत नरेन्द्र खंड-खट-नायक, तेहु भये मदहीन। तेरी बात कहा है भाई, तू तो सहज हि दीन ॥ मान न० ॥ २ ॥ भागचन्द मार्दव-रससागर, माहिं होहु लवलीन। तातैं जगतजालमें फिर कहुं, जनम न होय नवीन ॥ मान न० ॥ ३ ॥

४०.

राग मल्हार।

अरे हो अज्ञानी, तूने कठिन मनुपभव पायो ॥ टेक ॥

लोचनरहित मनुपके करमें, ज्यों वटेर खग आयो ॥ अरे हो० ॥ १ ॥ सो तू खोवत विषयनमाहीं, धरम नहीं चित लायो ॥ अरे हो० ॥ २ ॥ भागचन्द उपदेश मान अब, जो श्रीगुरु फरमायो ॥ अरे हो० ॥ ३ ॥

४१

राग मल्हार ।

वरसत ज्ञान सुनीर हो, श्रीजिनमुखघनसों ॥ टेक ॥ शीतल होत सुबुद्धिमेदिनी, मिटत भवातप-पीर ॥ वरसत० ॥ १ ॥ स्यादवाद नयदामिनि दमकै, होत निनाद गँभीर ॥ वरसत० ॥ २ ॥ करुनानदी वसै चहुं दिशितैं, भरी सो दोई तीर ॥ वरसत० ॥ ३ ॥ भागचन्द अनुभवमंदिरको, तजत न संत सुधीर ॥ वरसत ॥४॥

४२.

राग मल्हार ।

मेघघटासम श्रीजिनवानी ॥ टेक ॥ स्यात्पद चपला चमकत जामें, वरसत ज्ञान सुपानी ॥ मेघघटा० ॥ १ ॥ धरमसस्य जातें बहु बाढ़ें, शिवआनँदफलदानी ॥ मेघघटा० ॥ २ ॥ मोहन धूल दवी सब यातें, क्रोधानल सुबुझानी ॥ मेघघटा० ॥ ३ ॥ भागचन्द बुधजन केकीकुल, लखि हरखैं चितज्ञानी ॥ मेघ० ॥ ४ ॥

४३.

राग धनाश्री ।

प्रभू थांकों लखि ममचित हरषायो ॥ टेक ॥ सुंदर चिंता-

रतन अमोलक, रंकपुरुष जिमि पायो ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ निर्मलरूप भयो अब मेरो, भक्तिनदीजल न्हायो ॥ प्रभू थांको० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मम करतलमें, अविचल शिवथल आयो ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४४.

राग मल्हार ।

प्रभू म्हांकी सुधि, करुना करि लीजे ॥ टेक ॥ मेरे इक अवलम्बन तुम ही, अब न विलम्ब करीजे ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ अन्य कुदेव तजे सब मैंने, तिनतैं निजगुन छीजे ॥ प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द तुम शरन लियो है, अब निश्चलपद दीजे ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४५.

राग कलिंगड़ा।

ऐसे साधू सुगुरु कब मिल हैं ॥ टेक ॥ आप तरैं अरु परको तारैं, निष्प्रेही निरमल हैं ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ तिल-तुषमात्र संग नहिं जाकै, ज्ञान-ध्यान-गुन-बल हैं ॥ ऐसे साधू० ॥ २ ॥ शान्तदिगम्बर मुद्रा जिनकी, मन्दिरतुल्य अचल हैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ भागचन्द तिनको नित चाहैं, ज्यों कमलनिको अल है ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥

४६.

राग कहरवा कलिंगड़ा ।

केवल जोति सुजागी जी, जब श्रीजिनवरके ॥ टेक ॥ लोकालोक विलोकत जैसे, हस्तामल बड़भागी जी ॥ के० ॥

॥ ३ ॥ जब भ्रमनींद त्याग निजमें निज, हित हेत सम्हारत है। वीतराग सर्वज्ञ होत तब, भागचन्द हितसीख कहै ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

५९.

दोहा।

विश्वभावव्यापी तदपि, एक विमल चिद्रूप।
ज्ञानानंदमयी सदा, जयवंतौ जिनभूप ॥

छन्द चाल।

सफली मम लोचनद्वंद्व। देखत तुमको जिनचंद।
मम तनमन शीतल एम। अम्रतरस सींचत जेम ॥
तुम बोध अमोघ अपारा। दर्शन पुनि सर्व निहारा ॥
आनंद अतिन्द्रिय राजै। बल अतुल स्वरूप न त्याजै ॥
इत्यादिक स्वगुन अनन्ता। अन्तर्लक्ष्मी भगवंता।
बाहिज विभूति बहु सोहै। बरनन समर्थ कवि को है ॥
तुम वृच्छ अशोक सुस्वच्छ। सब शोकहरनको दच्छ ॥
तहां चंचरीक गुंजारैं। मानों तुम स्तोत्र उचारैं ॥
शुभ रत्नमयूख विचित्र। सिंहासन शोभ पवित्र ॥
तहां वीतराग छवि सोहै। तुम अंतरीछ मनमोहै।
वर कुन्दकुन्द अवदात। चामरव्रज सर्व सुहात ॥
तुम ऊपर मघवा ढारै। धर भक्ति भाव अघ टारै।
मुक्ताफल माल समेत। तुम ऊर्द्ध छत्रत्रय सेत ॥
मानों तारान्वित चन्द। त्रय मूर्ति धरी दुति वृन्द ॥
शुभ दिव्य पटह बहु बाजैं। अतिशय जुत अधिक विराजैं।

तुमरो जस घोकैं मानौं । त्रैलोक्यनाथ यह जानौं ॥
हरिचन्दन सुमन सुहाये । दशदिशि सुगंधि महकाये ॥
अलिपुंज विगुंजत जामें । शुभ वृष्टि होत तुम सामें ॥१०॥
भामंडल दीप्ति अखंड । छिप जात कोट मार्तंड ॥
जग लोचनको सुखकारी । मिथ्यातमपटल निवारी ॥
तुमरी दिव्यध्वनि गाजै । विन इच्छा भविहित काजै ॥
जीवादिक तत्त्वप्रकाशी । भ्रमतमहर सूर्यकलासी ॥
इत्यादि विभूति अनंत । वाहिज अतिशय अरहंत ।
देखत मन भ्रमतम भागा । हित अहित ज्ञान उर जागा ॥
तुम सव लायक उपगारी । मैं दीन दुखी संसारी ॥
तातैं सुनिये यह अरजी । तुम शरन लियो जिनवरजी ॥
मैं जीवद्रव्य विन अंग । लागो अनादि विधि संग ॥
ता निमित पाय दुख पाये । हम मिथ्यातादि महा ये ।
निज गुन कवहूं नहिं भाये । सव परपदार्थ अपनाये ।
रति अरति करी सुखदुखमें । व्है करि निजधर्म विमुख मैं १६
पर-चाह-दाह नित दाहौ । नहिं शांत सुधा अवगाहौ ॥
पशु नारक नर सुरगतमें । चिर भ्रमत भयो भ्रमतमें ॥१७॥
कीनें वहु जामन मरना । नहिं पायो सांचो शरना ।
अव भाग उदय मो आयो । तुम दर्शन निर्मल पायो ॥१८॥
मन शांत भयो उर मेरो । वाढ्यो उछाह शिवकेरो ॥
परविषयरहित आनन्द । निज रस चाखो निरद्वन्द ॥१९॥
मुझ काजतनें कारज हो । तुम देव तरन तारन हो ॥
तातैं ऐसी अव कीजे । तुम चरन भक्ति मोह दीजे ॥२०॥

दृग-ज्ञान-चरन परिपूर। पाऊं निश्चय भवचूर॥
दुखदायक विषय कषाय। इनमें परनति नहिं जाय॥२१॥
सुरराज समाज न चाहों। आतम समाधि अवगाहों।
पर इच्छा मो मनमानी। पूरो सब केवलज्ञानी॥ २२॥

दोहा।

गनपति पार न पावहीं, तुम गुनजलधि विशाल।
भागचन्द तुव भक्ति ही, करै हमैं वाचाल॥ २३॥

६०.

गीतिका।

तुम परम पावन देख जिन, अरि-रज-रहस्य विनाशनं। तुम ज्ञान-दृग-जलवीच त्रिभुवन, कमलवत प्रतिभासनं॥ आनंद निजज अनंत अन्य, अचिंत संतत परनये। बल अतुल कलित स्वभावतैं नहिं, खलित गुन अमिलित थये॥ १॥ सब राग रुष हनि परम श्रवन स्वभाव घन निर्मल दशा। इच्छारहित भवहित खिरत, वच सुनत ही भ्रमतम नशा। एकान्त-गहन-सुदहन स्यातपद, बहन मय निजपर दया। जाके प्रसाद विषाद विन, मुनिजन सपदि शिवपद लहा॥ २॥ भूषन वसन सुमनादिविन तन, ध्यानमय मुद्रा दिपै। नासाग्र नयन सुपलक हलय न, तेज लखि खगगन छिपै॥ पुनि वदन निरखत प्रशम जल, वरखत सुहरखत उर धरा। बुधि स्वपर परखत पुन्यआकर, कलिकलिल दुरखत जरा॥ ३॥ इत्यादि वहिरंतर असाधारन, सुविभवनिधान जी। इन्द्रादिवंद पदारविंद, अनिंद

तुम भगवान जी ॥ मैं चिर दुखी परचाहतैं, तुम धर्म नियत न उर धरो ॥ परदेवसेव करी बहुत, नहिं काज एक तहां सरो ॥ ४ ॥ अब भागचन्दउदय भयो, मैं शरन आयो तुम तने । इक दीजिये वरदान तुम जस, स्वपद दायक बुध भने ॥ परमाहिं इष्ट-अनिष्ट-मति तजि, मगन निज गुनमें रहों । दृग-ज्ञान-चर संपूर्ण पाऊं, भागचंद न पर चहों ॥ ५ ॥

६१.

राग दीपचन्दी।

कीजिये कृपा मोह दीजिये स्वपद, मैं तो तेरो ही शरन लीनों है नाथ जी ॥ टेक ॥ दूर करो यह मोह शत्रुको, फिरत सदा जो मेरे साथ जी ॥ कीजिये० ॥ १ ॥ तुमरे वचन कर्मगद-मोचन, संजीवन औषधी क्वाथ जी ॥ ॥ कीजि० ॥ २ ॥ तुमरे चरन कमल बुध ध्यावत, नावत हैं पुनि निजमाथ जी ॥ कीजि० ॥ ३ ॥ भागचंद मैं दास तिहारो, ठाड़ो जोरों जुगल हाथ जी ॥ कीजि० ॥ ४ ॥

६२.

राग दीपचन्दी।

निज कारज काहे न सारै रे, भूले प्रानी ॥ टेक ॥ परिग्रह भारथकी कहा नाहीं, आरत होत तिहारै रे ॥ निज० ॥ १ ॥ रोगी नर तेरी वपुको कहा, तिस दिन नाहीं जारै रे ॥ निज का० ॥ २ ॥ क्रूरकृतांत सिंह कहा जगमें, जीवनको न पछारै रे ॥ निज का० ॥ ३ ॥ करनविषय विष-

भोजनवत कहा, अंत विरसता न धारै रे ॥ निज० ॥ ४ ॥ भागचन्द भवअंधकूपमें, धर्म रतन काहे डारै रे ॥ ॥ निज का० ॥ ५ ॥

६३.

हरी तेरी मति नर कौनें हरी । तजि चिन्तामन कांच ग्रहत शठ ॥ टेक ॥ विषय कषाय रुचत तोकौं नित, जे दुखकरन अरी । हरी तेरी० ॥ १ ॥ सांचे मित्र सुहितकर श्रीगुरु, तिनकी सुधि विसरी । हरी तेरी० ॥ २ ॥ परपरनतिमें आपो मानत, जो अति विपति भरी । हरी तेरी० ॥ ॥ ३ ॥ भागचन्द जिनराज भजन कहुं, करत न एक घरी । हरी तेरी० ॥ ४ ॥

६४.

सुमर मन समवसरन सुखदाई । अशरन शरन धनदकृत प्रभुको ॥ टेक ॥ मानस्तंभ सरोवर सुंदर, विमल सलिलजुत खाई । पुष्पवाटिका तुंगकोट पुनि, नाट्यशाल मनभाई ॥ सुमर मन० ॥ १ ॥ उपवन जुगल विशाल वेदिका, धुजपंकति लहकाई । हाटक कोट कल्पतरुवन पुनि, द्वादश सभा वरनि नहिं जाई ॥ सुमर० ॥ २ ॥ तहँ त्रिपीठपर देव स्वयंभू, राजत श्रीजिनराई । जाहि पुरंदरजुत वृन्दारक-वृन्द सु वंदत आई । भागचन्द इमि ध्यावत ते जन, पावत जगठकुराई ॥ सुमर मन० ॥ ३ ॥

६५.

सोई है सांचा महादेव हमारा । जाके नाहीं रागरोष

गद, मोहादिक विस्तारा ॥ टेक ॥ जाके अंग न भस्म लिप्त हैं, नहिं रुंडनकृत हारा । भूषण व्याल न भाल चन्द्र नहिं, शीस जटा नहिं धारा ॥ सोई है० ॥ १ ॥ जाके गीत न नृत्य न मृत्यु न, वैलतनो न सवारा । नहिं कोपीन न काम कामिनी, नहिं धन धान्य पसारा ॥ सोई है० ॥ २ ॥ सो तो प्रगट समस्त वस्तुको, देखन जाननहारा । भागचन्द ताहीको ध्यावत, पूजत वारंवारा ॥ सोई है० ॥ ३ ॥

६६.

समझाओ जी आज कोई करुनाधरन, आये थे व्याहिन काज वे तो भये, हैं विरागी पशूदया लख लख ॥ टेक ॥ विमल चरन पागी, करन विषय त्यागी, उनने परम ज्ञानानंद चख चख ॥ समझायो० ॥ १ ॥ सुभग मुकति नारी, उनहिं लगी प्यारी, हमसों नेह कछू नहीं रख रख ॥ समझायो० ॥ २ ॥ वे त्रिभुवनस्वामी, मदनरहित नामी, उनके अमर पूजे पद नख नख ॥ समझायो० ॥ ३ ॥ भागचन्द मैं तो तलफत अति जैसे, जलसों तुरत न्यारी जक झख झख ॥ समझायो० ॥ ४ ॥

६७.

गिरनारीपै ध्यान लगाया, चल सखि नेमिचन्द मुनिराया ॥ टेक ॥ संग भुजंग रंग उन लखि तजि, शत्रु अनंग भगाया । बाल ब्रह्मचारी व्रतधारी, शिवनारी चित लाया ॥ गिरनारी० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन मोहनिद्रा बिन, नासादृग मन भाया । आसन धन्य अनन्य वन्य चित, पुष्ट (?)

थूल सम थाया ॥ गिरनारी० ॥ २ ॥ जाहि पुरन्दर पूजन आये, सुन्दर पुन्य उपाया। भागचन्द सम प्राननाथ सो, और न मोह सुहाया ॥ गिरनारी० ॥ ३ ॥

६८.

राग दीपचन्दी परज।

नाथ भये ब्रह्मचारी, सखी घर मैं न रहोंगी ॥ टेक ॥ पाणिग्रहण काज प्रभु आये, सहित समाज अपारी। ततछिन ही वैराग भये हैं, पशुकरुना उर धारी ॥ नाथ० ॥ १ ॥ एक सहस्रअष्टलच्छनजुत, वा छविकी बलिहारी। ज्ञानानंद मगन निशिवासर, हमरी सुरत विसारी ॥ नाथ० ॥ २ ॥ मैं भी जिनदीक्षा धरि हों अव, जाकर श्रीगिरनारी। भागचन्द इमि भनत सखिनसों, उग्रसेनकी कुमारी ॥ नाथ० ॥ ३ ॥

६९.

राग दीपचन्दी कानेर।

जानके सुज्ञानी, जैनवानीकी सरधा लाइये ॥ टेक ॥ जा विन काल अनंते भ्रमता, सुख न मिलै कहुं प्रानी ॥ ॥ जानके० ॥ १ ॥ स्वपर विवेक अखंड मिलत है, जाहीके सरधानी ॥ जानके० ॥ २ ॥ अखिलप्रमानसिद्ध अविरुद्धत, स्यातपद शुद्ध निशानी ॥ जानके० ॥ ३ ॥ भागचन्द सत्यारथ जानी, परमधरमरजधानी ॥ जानके० ॥ ४ ॥

अडंबर, लावत भरभर कर जोरी। उड़त गुलाल निर्जरा निर्भर, दुखदायक भवथिति टोरी ॥ सहज० ॥ २ ॥ परमानंद मृदंगादिक धुनि, विमल विरागभावधोरी। भागचंद दृग-ज्ञान-चरनमय, परिनत अनुभव रँग बोरी ॥ सहज० ॥ ३ ॥

८७.

सत्ता रंगभूमिमें, नटत ब्रह्म नटराय ॥ टेक ॥ रत्नत्रय आभूषणमंडित, शोभा अगम अथाय। सहज सखा निःशंकादिक गुन, अतुल समाज बढ़ाय ॥ सत्ता रंग० ॥ ॥ १ ॥ समता बीन मधुररस बोलै, ध्यान मृदंग बजाय। नदत निर्जरा नाद अनूपम, नूपुर संवर ल्याय ॥ सत्ता रंग० ॥ २ ॥ लय निज-रूप-मगनता ल्यावत, नृत्य सुज्ञान कराय। समरस गीतालापन पुनि जो, दुर्लभ जगमहँ आय ॥ सत्ता रंग० ॥ ३ ॥ भागचन्द आपहि रीझत तहाँ, परम समाधि लगाय। तहाँ कृतकृत्य सु होत मोक्षनिधि, अतुल इनामहिं पाय ॥ सत्ता० ॥ ४ ॥

इति श्रीभागचन्द्रपदावली समाप्ता।

श्रीवीतरागाय नमः ।

पदसंग्रह–तृतीयभाग ।

अर्थात्

आगरानिवासी कविवर भूधरदासजीकृत पदविनतियोंका संग्रह ।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके मालिकने

बम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें बाळकृष्ण रामचंद्र घाणेकरके

प्रबंधसे छपाया ।

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४३५ । ईस्वी सन् १९०९ ।

प्रथमावृत्ति] [न्योछावर ५ आने ।

प्रस्तावना ।

लीजिये, पाठक! आज पदसंग्रहका यह तीसरा भाग भी उपस्थित है। इसमें कविवर भूधरदासजीके सब मिलाकर ८० पदों तथा विनतियोंका संग्रह है। यह संग्रह हमको अपने एक मित्रके द्वारा प्राप्त हुआ है। उन्होंने इसे भूधरविलासपरसे उतारकर भेजा है। उनके कथनके अनुसार भूधरदासजीके इनके सिवाय और पद विनतियां नहीं हैं, परन्तु हमारी समझमें यह कथन ठीक नहीं है। हमको स्वयं तीन चार पद और दो तीन विनतियां उक्त संग्रहके सिवाय मिल गई थीं, जिन्हें हमने इसमें शामिल कर दी हैं। हमारी समझमें भूधरदासजीके बहुतसे पद ऐसे होंगे, जो इस संग्रहमें नहीं आये होंगे, और वे यदि हमारे पाठक सहायता करें, तो एकत्र हो सकते हैं। जो सज्जन ऐसे पदोंको हमारे पास भेजनेकी कृपा करेंगे, उनका हम बहुत बड़ा आभार मानेंगे।

दूसरी शुद्ध प्रतिके अभावसे हमको इस पुस्तकके संशोधनमें बहुत परिश्रम करना पड़ा है, तोभी जैसा चाहिये वैसा संतोषके योग्य संशोधन नहीं हुआ है। बहुतसे स्थान भ्रमयुक्त रह गये हैं। पाठकोंको यदि किसी पदका शुद्ध पाठ आता हो, तो सूचित कर देवें, जिससे कि दूसरी वार छपाते समय उसका संशोधन हो जावे।

कविवर भूधरदासजी विक्रमकी अठारहवीं सदीमें हो गये हैं। उन्होंने अपना पार्श्वपुराण नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ संवत् १७८९ में पूर्ण किया था। पार्श्वपुराण, भूधरजैनशतक, और भूधरविलास

ये तीन ही ग्रन्थ अभीतक आपके बनाये हुए प्रसिद्ध हैं। इन ग्रन्थोंके पढनेसे आपकी सरल सरस और हृदयग्राही कविताका सहज ही अनुभव हो सकता है। पहले दो ग्रन्थ हमारे यहां छप चुके हैं और तीसरे भूधरविलासमेंका एक अंश यह प्रकाशित किया जाता है।

पदसंग्रह का चौथा भाग जिसमें कविवर द्यानतरायजीके पदोंका संग्रह है छप रहा है। पांचवें छट्ठे भाग भी तयार करनेका प्रबन्ध हो रहा है। अलमतिविस्तरेण—८–६–०९ ई०।

सरस्वतीसेवक—

नाथूराम प्रेमी।

श्रीजिनाय नमः।

पदसंग्रह–तृतीयभाग।

अर्थात्

कविवर भूधरदासजीकृत भजनोंका संग्रह।

१. राग सोरठ।

लगी लौं नाभिनंदनसों। जपत जेम चकोर चकई, चन्द भरताकों॥ लगी लौं० ॥ १॥ जाउ तन धन जाउ जोवन, प्रान जाउ न क्यों। एक प्रभुकी भक्ति मेरे, रहो ज्यांकी त्यों॥२॥ लगी लौं०॥ और देव अनेक सेये, कछु न पायो हों। ज्ञान खोयो गांठिको, धन करत कुवनिज ज्यों॥३॥ लगी लौं०॥ पुत्र मित्र कलत्र ये सब सगे अपनी गों। नरककूपउद्धरन श्रीजिन, समझ भूधर यों॥४॥ लगी लौं०॥

---

१ बुरा व्यापार. २ गरज.

नर धार रे । रटि नाम राजुलरमनको, पशुबंध छोड़नहार रे ॥ मेरे मन० ॥ ४ ॥

७. राग सोरठ ।

भलो चेत्यो वीर नर तू, भलो चेत्यो वीर ॥ टेक ॥ समुझि प्रभुके शरण आयो, मिल्यो ज्ञान वजीर ॥ भलो० ॥ १ ॥ जगतमें यह जनम हीरा, फिर कहां थो धीर । भली वार विचार छाँड़्यो, कुमति कामिनि सीर[1] ॥ भलो० ॥ २ ॥ धन्य धन्य दयाल श्रीगुरु सुमरि, गुणगंभीर । नरक परतैं राखि लीनों, बहुत कीनी भीर[2] ॥ भलो० ॥ ३ ॥ भक्ति नौका लही भागनि, कितक[3] भवदधिनीर । ढील अब क्यों करत भूधर, पहुँच पैली तीर ॥ भलो० ॥४॥

८. राग सोरठ ।

सुन ज्ञानी प्राणी, श्रीगुरु सीख सयानी ॥ टेक ॥ नरभव पाय विषय मति सेवो, ये दुरगति अगवानी ॥ सुन० ॥ १ ॥ यह भव कुल यह तेरी महिमा, फिर समझी जिनवानी ।

---

१ साँझा २ सहाय. ३ कितना.

इस अवसरमें यह चपलाई, कौन समझ उर आनी ॥ सुन० ॥ २ ॥ चंदन काठ-कनकके भाजन, भरि गंगाका पानी । तिल खलि राँधत मंदमती जो, तुझ क्या रीस बिरानी ॥ सुन० ॥ ३ ॥ भूधर जो कथनी सो करनी, यह बुधि है सुखदानी । ज्यों मशालची आप न देखै, सो मति करै कहानी ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

९. राग सोरठ ।

सुनि ठगनी माया, तैं सब जग ठग खाया ॥ टेक ॥ टुक विश्वास किया जिन तेरा, सो मूरख पिछताया ॥ सुनि० ॥ १ ॥ आपा तनक दिखाय बीज[1] ज्यों, मूढमती ललचाया । करि मद अंध धर्म हर लीनौं, अंत नरक पहुँचाया ॥ सुनि० ॥ २ ॥ केते कंथ किये तैं कुलटा, तो भी मन न अघाया । किसहीसौं नहिं प्रीति निवाही, वह तजि और लुभाया ॥ सुनि० ॥ ३ ॥ भूधर छलत फिरै यह सबकों, भौंदू करि जग पाया । जो इस ठगनीकों ठग बैठे, मैं तिसको सिर नाया ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

---

१ बिजलीके समान.

१०.

वे कोई अजब तमासा, देख्या बीच जहान वे, जोर तमासा सुपनेकासा ॥ टेक ॥ एकोंके घर मंगल गावैं, पूगी[1] मनकी आसा । एक वियोग भरे बहु रोवैं, भरि भरि नैंन निरासा ॥ वे कोई० ॥ १ ॥ तेज तुरंगनिपै चढ़ि चलते, पहिरैं मलमल खासा । रंक भये नागे अति डोलैं, ना कोइ देय दिलासा[2] ॥ वे कोई० ॥ २ ॥ तरकैं[3] राज तख्तपर[4] बैठा, था खुशवक्त खुलासा । ठीक दुपहरी मुद्दत आई, जंगल कीना वासा ॥ वे कोई० ॥ ३ ॥ तन धन अथिर निहायत[5] जगमें, पानीमाहिं पतासा । भूधर इनका गरव करैं जे, फिट[6] तिनका जनमासा[7] ॥ वे कोई० ॥ ४ ॥

११. राग ख्याल ।

जगमें जीवन थोरा, रे अज्ञानी जागि ॥टेक॥ जनम ताड़ तरुतैं पड़ै, फल संसारी जीव । मौत महीमें आय हैं, और न ठौर सदीव ॥ जगमें०

---

१ पूरी हुई. २ धीरज. ३ सवेरे. ४ सिंहासन. ५ सर्वथा. ६ धिक्. ७ मनुष्यजन्म.

॥ १ ॥ गिर–सिर दिवला जोइया, चहुँदिशि वाजै पौन । बलत अचंभा मानिया, बुझत अचंभा कौन ॥ जगमें० ॥ २ ॥ जो छिन जाय सो आयुमें, निशि दिन ढूकै काल । बांधि सकै तो है भला, पानी पहिली पाल ॥ जगमें० ॥३॥ मनुषदेह दुर्लभ्य है, मति चूकै यह दाव । भूधर राजुलकंतकी, शरण सितावी आव ॥ जगमें० ॥ ४ ॥

१२. राग ख्याल ।

गरव नहिं कीजे रे, ऐ नर निपट गँवार ॥ टेक ॥ झूठी काया झूठी माया, छाया ज्यों लखि लीजे रे ॥ गरव० ॥ १ ॥ कै छिन सांझ सुहागरु जोवन, कै दिन जगमें जीजै रे ॥ गरव० ॥ २ ॥ वेगा चेत विलम्ब तजो नर, बंध बढे थिति छीजै रे ॥ गरव० ॥ ३ ॥ भूधर पलपल हो है भारी, ज्यों ज्यों कमरी भींजै रे ॥ गरव० ॥ ४ ॥

१३. राग ख्याल ।

थांकी कथनी म्हांनैं प्यारी लगै जी, प्यारी

---

१ दीपक. २ चलै. ३ निकट आवै. ४ श्रीनेमिनाथकी. ५ जीवेंगे. ६ जल्दी. ७ आयु.

लगै म्हांरी भूल भगै जी ॥ टेक ॥ तुमहित हांक विना हो श्रीगुरु, सूतो जियरो काईं[1] जगै जी ॥ थांकी० ॥ १ ॥ मोहनिधूलि मेलि म्हारे[2] माथै[3], तीन रतन म्हांरा[4] मोह ठगै जी । तुम पद ढोकंत[5] सीस झरी रज, अब ठगको कर नाहिं वगै जी ॥ थांकी० ॥ २ ॥ टूट्यो चिर मिथ्यात महाज्वर, भागां[6] मिल गया वैद मगै[7] जी । अंतर अरुचि मिटी मम आतम, अब अपने निजदर्व पगै जी ॥ थांकी० ॥ ३ ॥ भव वन भ्रमत बढ़ी तिसना तिस, क्योंहि बुझै नहिं हियरा[8] दगै[9] जी । भूधर गुरुउपदेशामृतरस, शान्तमई आनँद उमगै जी ॥ थांकी० ॥ ४ ॥

१४. राग ख्याल ।

मा विलंब न लांव[10] पठाव[11] तहाँ[12] री, जहँ जगपति पिय प्यारो ॥ टेक ॥ और न मोहि सुहाय कछू अब, दीसै जगत अँधारो री ॥ मा विलंब०

---

१ कैसे. २ मेरे. ३ सिरपर. ४ मेरा. ५ प्रणाम करनेसे. ६ भाग्यसे. ७ मार्गमें. ८ हृदय. ९ जलता है. १० कर. ११ भेज दे. १२ उसी जगह.

॥ १ ॥ मैं श्रीनेमिदिवाकरको[1] कब, देखों वदन उजारो। विन देखैं मुरझाय रह्यो है, उर अरविंद[2] हमारो री! ॥ मा विलंव० ॥२॥ तन छाया ज्यौं संग रहौंगी, वे छांड़हिं तो छांरो। विन अपराध दंड मोहि दीनो, कहा चलै मेरो चारो ॥ मा विलम्ब० ॥ ३ ॥ इहि विधि रागउदय राजुल नैं, सह्यो विरह दुख भारो । पीछैं ज्ञान-भान[3] वल विनश्यो, मोह महातम कारो री ॥ मा विलंव० ॥४॥ पियके पैंड़े पैंड़ौ कीनों, देखि अथिर जग सारो। भूधरके प्रभु नेमि पियासौं, पाल्यौ नेह करारो री ॥ मा विलंव० ॥ ५ ॥

१७. राग ख्याल ।

देख्यो री! कहीं नेमिकुमार ॥ टेक ॥ नैंननि प्यारो नाथ हमारो, प्रानजीवन प्राननआ-धार ॥ देख्यो० ॥१॥ पीव वियोग विथा[4] बहु पीरी[5], पीरी भई हलदी उनहार[6] । होउं हरी तबही जब भेटौं, श्यामवरन सुंदर भरतार ॥ देख्यो० ॥२॥

---

१ सूरज. २ कमल. ३ सूर्य. ४ पीड़ा की. ५ पीली. ६ समान.

सुकच्छकुमारी। सोई पंथ गहो पिय पाछैं, हूजौ संजमधारी ॥ अरज० ॥ २ ॥ तुम विन एक पलक जो प्रीतम, जाय पहर सौ भारी। कैसैं निशदिन भरौं नेमिजी !, तुम तो ममता डारी। याको ज्वाब देहु निरमोही !, तुम जीते मैं हारी ॥ अरज० ॥ ३ ॥ देखो रैनवियोगिनि चकई, सो विलखै निशि सारी। आश बाँधि अपनो जिय राखै, प्रात मिलैं पिय प्यारी। मैं निराश निरधारिनि कैसैं, जीवों अती दुखारी ॥ अरज० ॥ ४ ॥ इह विधि विरह नदीमें व्याकुल, उग्रसेनकी बारी। धनि धनि समुदविजयके नंदन, बूड़त पार उतारी। करहु दयाल दया ऐसी ही, भूधर शरन तुम्हारी ॥ अरज० ॥५॥

२९. राग धामल सारंग।

हूं तो कहा करूं कित जाउं, सखी अब कासौं पीर कहूं री ! ॥टेक॥ सुमति सती सखियनिके आगैं, पियके दुख परकासै। चिदानन्दवल्लभकी वनिता, विरह वचन मुख भासै ॥ हूं तो० ॥ १ ॥ कंत विना कितने दिन बीते, कौलौं

धीर धरौं री। पर घर हाँडे निज घर छांडे, कैसी विपति भरौं री॥ हूं तो० ॥२॥ कहत कहावतमें सब यों ही, वे नायक हम नारी। पै सुपनें न कभी मुँह बोले, हमसी कौन दुखारी॥ हूं तो० ॥ ३ ॥ जइयो नाश कुमति कुलटाको, विरमायो पति प्यारो। हमसौं विरचि रच्यो रँग वाके, असमझ (?) नाहिं हमारो॥ हूं तो० ॥४॥ सुंदर सुघर कुलीन नारि मैं, क्यों प्रभु मोहि न लोरें। सत हू देखि दया न धरें चित, चेरीसों हित जोरें॥ हूं तो० ॥५॥ अपने गुनकी आप बड़ाई, कहत न शोभा लहिये। ऐरी! वीर चतुर चेतनकी, चतुराई लखि कहिये॥ हूं तो० ॥६॥ करिहों आजि अरज जिनजीसों, प्रीतमको समझावें। भरता भीख दई गुन मानों, जो बालम घर आवें॥ हूं तो० ॥७॥ सुमति वधू यों दीन दुहागनि, दिन दिन झुरत निरासा। भूधर पीउ प्रसन्न भये विन, वसै न तिय घरवासा॥ हूं तो० ॥ ८ ॥

---

१ भटकै. २ प्रेम करैं.

३०. राग सोरठ।

चित! चेतनकी यह विरियाँ रे ॥ टेक॥ उत्तम जनम सुतन तरुनापौ[1], सुकृत[2] बेल फल फरियाँ रे ॥ चित०॥१॥ लहि सत संगतिसौं सब समझी, करनी खोटी खरियाँ रे। सुहित सँभालि शिथिलता तजिकै, जाहैं बेली झरियाँ रे॥ चित० ॥ २ ॥ दल बल चहल महल रूपेका, अर कंचनकी कलियाँ रे। ऐसी विभव बढ़ी कै बढ़ि है, तेरी गरज क्या सरियाँ रे॥ चित० ॥ ३ ॥ खोय न वीर विषय खल साटैं[3], ये कोरनकी[4] घरियाँ रे। तोरि न तनक तगाहित[5] भूधर, मुकताफलकी लरियाँ[6] रे ॥ चित० ॥ ४ ॥

३१. राग पंचम।

आज गिरिराजके शिखर सुंदर सखी, होत है अतुल कौतुक महा मनहरन ॥ टेक ॥ नाभिके नंदकौं जगतके चन्दकौं, ले गये इन्द्र मिलि जन्म-मंगल करन ॥ आज०॥१॥ हाथ हाथन धरे सुरन

---

१ जवानी. २ पुण्य. ३ बदलेमें. ४ करोड़ोंकी. ५ धागा, डोराके लिये. ६ लड़ीं.

कंचन धरे, छीरसागर भरें नीर निरमल वरन। सहस अर आठ गिन एक ही वार जिन, सीस सुरईशके करन लागे ढरन ॥ आज० ॥ २ ॥ नचत सुरसुन्दरीं रहस रससौं भरीं, गीत गावैं अरी देहिं ताली करन। देव दुंदभि वजै वीन वंसी सजे, एकसी परत आनंद घनकी भरन ॥ आज० ॥ ३ ॥ इन्द्र हर्षित हिये नेत्र अंजुल किये, तृपति होत न पिये रूपअम्रतझरन। दास भूधर भनें सुदिन देखें वनैं, कहि थकें लोक लख जीभ न सकै वरन ॥ आज० ॥ ४ ॥

३२

ऐसी समझके सिर धूल ॥ ऐसी० ॥ टेक ॥ धरम उपजन हेत हिंसा, आचरैं अघमूल ॥ ऐसी० ॥ १ ॥ छके मत-मद-पान पीके, रहे मनमें फूल। आम चाखन चहैं भोंदू, वोय पेड़ वँबूल ॥ ऐसी० ॥ २ ॥ देव रागी लालची गुरु, सेय सुखहित भूल। धर्म नगकी परख नाहीं, भ्रम हिंडोले झूल ॥ ऐसी० ॥ ३ ॥ लाभकारन

---

१ घड़े—कलश. २ रतकी.

रतन विणजे, परखको नहिं सूल। करत इहि विधि वणिज भूधर, विनस जै है मूल ॥ ऐसी० ॥ ४ ॥

३३.

अब पूरीकर नींदड़ी, सुन जीया रे! चिरकाल तू सोया ॥ सुन० ॥ टेक ॥ माया मैली रातमें, केता काल विगोया[2] ॥ अब० ॥ १ ॥ धर्म न भूल अयान रे! विषयोंवश वाला। सार सुधारस छोड़के, पीवै जहर पियाला ॥ अब० ॥ २ ॥ मानुष भवकी पैठमैं, जग विणजी आया। चतुर कमाई कर चले, मूढ़ौं मूल गुमाया ॥ अब० ॥ ३ ॥ तिसना तज तप जिन किया, तिन बहु हित जोया। भोगमगन शठ जे रहे, तिन सरवस खोया ॥ अब० ॥ ४ ॥ काम विथापीड़ित जिया, भोगहि भले जानैं। खाज खुजावत अंगमें, रोगी सुख मानैं ॥ अब० ॥ ५ ॥ राग उरगनी[3] जोरतैं, जग डसिया भाई! सब जिय गाफ़िल हो रहे, मोह लहर चढ़ाई ॥

१ शहूर. २ खोया. ३ सर्पनी.

अव० ॥ ६ ॥ गुरु उपगारी गारुड़ी, दुख देख निवारैं । हित उपदेश सुमंत्रसों, पढ़ि जहर उतारैं ॥ अव० ॥ ७ ॥ गुरु माता गुरु ही पिता, गुरु सज्जन भाई । भूधर या संसारमें, गुरु शरन-सहाई ॥ अव० ॥ ८ ॥

३४. राग बंगाला ।

जगमें श्रद्धानी जीव जीवनमुकत हैंगे ॥ टेक ॥ देव गुरु सांचे मानैं, सांचो धर्म हिये आनैं, ग्रंथ ते ही सांचे जानैं, जे जिनउकत हैंगे ॥ जगमें ॥ १ ॥ जीवनकी दया पालैं, झूठ तजि चोरी टालैं; परनारी भालैं नैंन जिनके लुकत हैंगे ॥ जगमें ॥ २ ॥ जीयमैं सन्तोष धारैं हियें समता विचारैं, आगैं को न बंध पारैं, पाछैंसों चुकत हैंगे ॥ जगमैं ॥ ३ ॥ वाहिज क्रिया अराधैं, अन्तर सरूप साधैं, भूधर ते मुक्त लाधैं, कहूं न रुकत हैंगे ॥ जगमैं ॥ ४ ॥

---

१ जहर उतारनेवाले. २ इस पदकी चारों टेकें निंकाल डालनेसे एक घनाक्षरी (३२ वर्ण) कवित्त बन जाता है. ३ उक्त, प्रणीत, कहे हुए. ४ देखनेमें. ५ छिपते हैं, लज्जित होतें हैं.

३५. राग बंगाला।

आया रे बुढापो मानी सुधि बुधि विसरानी ॥टेक॥ श्रवनकी शक्ति घटी, चाल चालै अटपटी, देह लटी भूख घटी, लोचन झरत पानी॥ आया रे० ॥१॥ दाँतनकी पंक्ति टूटी, हाड़नकी संधि छूटी, कायाकी नगरि लूटी, जात नहिं पहिचानी ॥ आया रे० ॥ २ ॥ वालोंने वरन फेरा, रोगने शरीर घेरा, पुत्रहू न आवै नेरा, औरोंकी कहा कहानी ॥ आया रे० ॥३॥ भूधर समुझि अब, स्वहित करैगो कब, यह गति है है जब, तब पिछतैहै प्रानी ॥ आया रे० ॥ ४ ॥

३६. राग सोरठ।

अन्तर उज्जल करना रे भाई! ॥ टेक ॥ कपट कृपान तजै नहिं तबलौं, करनी काज न सरना रे ॥ अन्तर० ॥ १ ॥ जप तप तीरथ जज्ञ व्रतादिक, आगमअर्थउचरना रे । विपय कषाय कीच नहिं धोयो, यों ही पचि पचि मरना रे ॥

---

१ इसकी भी टेकें निकाल देनेसे घनाक्षरी बन जाता है.
२ कमजोर हुई. ३ रंग. ४ निकट.

अन्तर० ॥ २ ॥ बाहिर भेप किया उर शुचिसों कीयें पार उतरना रे। नाहीं है सब लोक रंजना, ऐसे वेदन वरना रे ॥ अन्तर० ॥ ३ ॥ कामादिक मनसौं मन मैला, भजन किये क्या तिरना रे। भूधर नीलवसनपर कैसें, केसररंग उछरना रे ॥ अन्तर० ॥ ४ ॥

३७. राग सोरठ।

वीरा! थारी बान बुरी परी रे, वरज्यो मानत नाहिं ॥ टेक ॥ विषय विनोद महा बुरे रे, दुख दाता सरवंग। तू हटसौं ऐसें रमै रे, दीवे पड़त पतंग ॥ वीरा० ॥ १ ॥ ये सुख हैं दिन दोयके रे, फिर दुखकी सन्तान। करै कुहाड़ी लेइके रे, मति मारै पैंग जानि ॥ वीरा० ॥ २ ॥ तनक न संकट सहि सकै रे! छिनमें होय अधीर। नरक विपति बहु दोहली रे, कैसे भरि है वीर ॥ वीरा० ॥ ३ ॥ भव सुपना हो जायगा रे, करनी रहेगी निदान। भूधर फिर पछतायगा रे, अब ही समुझि अजान ॥ वीरा० ॥४॥

१ कालेकपडेपर २ दीपकमें. ३ अपने हाथसे. ४ अपने पैरपर.

॥ २ ॥ कुशलवृक्ष दल उलास, इहि विधि बहु गुणनिवास, भूधरकी भरहु आस, दीन दासके सो ॥ पारस० ॥ ३ ॥

४८. राग धनासरी।

शेष सुरेश नरेश रटैं तोहि, पार न कोई पावै जू ॥ टेक ॥ कौंपै[1] नपत व्योम[2] विलसतसौं[3], को तारे गिन लावै जू ॥ शेष० ॥ १ ॥ कौन सुजान मेघ बूंदनकी, संख्या समुझि सुनावै जू ॥ शेष० ॥ २ ॥ भूधर सुजस गीत संपूरन, गैनपति[4] भी नहिं गावै जू ॥ शेष० ॥ ३ ॥

४९. राग रामकली।

आदि पुरुष मेरी आस भरो जी। औगुन मेरे माफ करो जी॥टेक॥ दीनदयाल विरद विसरो जी, कै विनती मोरी श्रवण धरो जी ॥ १ ॥ काल अनादि वस्यो जगमाहीं, तुमसे जगपति जानें नाहीं। पाँय न पूजे अन्तरजामी, यह अपराध क्षमा कर स्वामी ॥ आदि० ॥ २ ॥ भक्ति प्रसाद परम पद है है, बंधी बंध दशा मिट जै है।

---

१ किससे? २ आकाश. ३ विलसतसे. ४ गणधर.

तव न करौं तेरी फिर पूजा, यह अपराध खमों प्रभु दूजा ॥ आदि० ॥ ३ ॥ भूधर दोष किया वकसावै[1], अरु आगेकौं लारे लावै। देखो सेवककी ढिठवाई[2], गरुवे साहिवसों वनियांई[3] ॥ आदि० ॥ ४ ॥

५०. राग ख्याल काफी कानड़ी।

तुम सुनियो साधो!, मनुवा मेरा ज्ञानी। सत गुरु भैंटा संसा[4] मेटा, यह नीकै करि जानी ॥टेक॥ चेतनरूप अनूप हमारा, और उपाधि विरानी॥ तुम सुनियो० ॥ १ ॥ पुदगल भांडा आतम खांडा, यह हिरदै ठहरानी। छीजौ भीजौ कृत्रिम काया, मैं निरभय निरवानी॥ तुम सुनियो०॥२॥ मैं ही देखौं मैं ही जानौं, मेरी होय निशानी। शबद फरस रस गंध न धारौं, ये बातैं विज्ञानी॥ तुम सुनियो० ॥ ३ ॥ जो हम चीन्हां सो थिर कीन्हां, हुए सुदृढ़ सरधानी। भूधर अब कैसें उतरैगा, खड़ग चढ़ा जो पानी ॥ तुम सुनियो० ॥ ४ ॥

---

१ माफ़ कराता है. २ ढीटता. ३ वनियांपन. ४ संदेह.

५१. राग काफी।

प्रभु गुन गाय रे, यह औसर फेर न पाय रे॥ टेक॥ मानुष भव जोग दुहेला, दुर्लभ सतसंगति मेला। सब बात भली बन आई, अरहन्त भजौ रे भाई॥ प्रभु०॥ १॥ पहलैं चित-चीर सँभारो, कामादिक मैल उतारो। फिर प्रीति फिटकरी दीजे, तब सुमरन रंग रँगीजे॥ प्रभु०॥२॥ धन जोर भरा जो कूवा, परवार बढ़ैं क्या हूवा। हाथी चढ़ि क्या कर लीया, प्रभु नाम विना धिक जीया॥ प्रभु०॥ ३॥ यह शिक्षा है व्यवहारी, निहचैकी साधनहारी। भूधर पैड़ी पग धरिये, तब चढ़नेको चित करिये॥ प्रभु०॥ ४॥

५२. राग हागीर कल्याण।

सुनि सुजान! पांचों रिपु वश करि, सुहित करन असमर्थ अवश करि॥ टेक॥ जैसें जड़ खखारको कीड़ा, सुहित सम्हाल सकैं नहिं फँस करि॥ सुनि०॥१॥ पांचनको मुखिया मन चंचल, पहले ताहि पकर रस (?) कस करि। समझ देखि

१ वस्त्र. २ पांचोंइन्द्री. ३ कफ.

नायकके जीतें, जै है भाजि सहज सब लसकरि॥ सुनि० ॥ २ ॥ इंद्रियलीन जनम सब खोयो, बाकी चल्यो जात है खस करि । भूधर सीख मान सतगुरुकी, इनसों प्रीति तोरि अब वश करि ॥ सुनि० ॥ ३ ॥

७३. राग गौरी ।

देखो भाई! आतमदेव विराजै ॥ टेक ॥ इसही हूठ हाथ देवलमैं, केवलरूपी राजै॥ देखो० ॥ १ ॥ अमल उदास जोतिमय जाकी, मुद्रा मंजुल छाजै । मुनिजनपूज अचल अविनाशी, गुण वरनत बुधि लाजै॥ देखो० ॥ २ ॥ परसंजोग समल प्रतिभासत, निज गुण मूल न त्याजै । जैसे फटिक पखान हेतसों, श्याम अरुन दुति साजै ॥ देखो० ॥ ३ ॥ 'सोऽहं' पद समतासों ध्यावत, घटहीमैं प्रभु पाजै । भूधर निकट निवास जासुको, गुरु विन भरम न भाजै ॥ देखो० ॥ ४ ॥

---

१ लश्कर—सेना. २ साढ़ेतीन हाथके शरीररूपी मंदिरमें.

५४. राग ख्याल ।

अब नित नेमि नाम भजौ ॥ टेक ॥ सच्चा साहिब यह निज जानौ, और अदेव तजौ॥अब०॥ ॥ १ ॥ चंचल चित्त चरन थिर राखो, विषयनतैं वरजौ ॥ अब० ॥२॥ आननतैं[1] गुन गाय निरन्तर, पानन[2] पांय जैजौ[3] ॥ अब० ॥३॥ भूधर जो भवसागर तिरना, भक्ति जहाज सजौ ॥ अब०॥

५५. राग श्रीगौरी ।

"माया काली नागिनि जिन डसिया सब संसार हो" यह चाल ।

काया गागरि जोजरी[4], तुम देखो चतुर विचार हो ॥ टेक ॥ जैसें कुल्हिया कांचकी, जाके विनसत नाहीं बार हो ॥ काया० ॥ १ ॥ मांसमयी माटी लई अरु, सानी रुधिर लगाय हो । कीन्हीं करम कुम्हारने, जासों काहूकी न वसाय हो ॥ काया० ॥ २ ॥ और कथा याकी सुनौं, यामैं अध उरध दश ठेह हो । जीव सलिल तहां थंभ रह्यौ भाई, अद्भुत अचरज येह

---

१ मुखसे. २ हाथजोड़कर. ३ नमन करो. ४ जरजरित, टूटी फूटी.

हो ॥ काया० ॥३॥ यासौं ममत निवारकैं, नित रहिये प्रभु अनुकूल हो। भूधर ऐसे ख्यालका भाई, पलक भरोसा मूल हो॥ काया० ॥ ४ ॥

५६. राग ख्याल बरवा।

"देखनेको आई लाल मैं तो तेरे देखनेकों आई" यह चाल।

हों तो थाकी आज महिमा जानी॥ टेक॥ अब लों नहिं उर आनी॥ हों तो० ॥१॥ काहेकों भव वनमें भ्रमते, क्यों होते दुखदानी॥ हों तो० ॥ २ ॥ नामप्रताप तिरे अंजनसे, कीचकसे अभिमानी॥ हों तो० ॥ ३ ॥ ऐसी साख बहुत सुनियत है, जैनपुराण बखानी॥हों तो० ॥४॥ भूधरको सेवा वर दीजे, मैं जांचक तुम दानी॥ हों तो० ॥ ५ ॥

५७. राग विहाग।

अरे मन चल रे, श्रीहथनापुरकी जात[1]॥ टेक॥ रामा[2] रामा धन धन करते, जावै जनम विफल रे॥ अरे० ॥१॥ करि तीरथ जप तप जिन-पूजा, लालच वैरी दल रे॥ अरे० ॥ २॥ शांति

१ यात्राको. २ स्त्री.

कुंथु अर तीनों जिनका, चारु कल्याणकथल रे ॥ अरे० ॥ ३ ॥ जा दरसत परसत सुख उपजत, जाहिं सकल अघ गल रे ॥ अरे० ॥ ४॥ देश दिशन्तरके जन आवैं, गावैं जिन गुन रल रे॥ अरे० ॥५॥ तीरथ गमन सहामी मेला, एक पंथ द्वै फल रे ॥ अरे० ॥ ६ ॥ कायाके संग काल फिरै है, तन छायाके छल रे ॥ अरे० ॥ ७ ॥ माया मोह जाल बंधनसौं, भूधर वेगि निकल रे ॥ अरे० ॥ ८ ॥

५८. राग विहाग।

जगत जन जूवा हारि चले ॥ टेक ॥ काम कुटिल सँग बाजी माँड़ी, उन करि कपट छले। जगत० ॥ १ ॥ चार कषायमयी जहँ चौपरि, पांसे जोग रले। इत सरवस उत कामिनि कौड़ी, इह विधि झटक चले। जगत० ॥ २ ॥ कूर खिलार विचार न कीन्हों, ह्वै हैं ख्वार भले। विना विवेक मनोरथ काके, भूधर सफल फले। जगत० ॥ ३ ॥

५९. राग विहाग।

तहां ले चल री! जहां जादौपति प्यारो ॥ टेक ॥ नेमि निशाकर विन यह चन्दा, तन मन दहत सकल री। तहां० ॥ १ ॥ किरन किधौं नाविक-शर-तति कै, ज्यों पावककी झल री। तारे हैं कि अँगारे सजनी, रजनी राकसदल[1] री। तहां० ॥ २ ॥ इह विधि राजुल राजकुमारी, विरह तपी वेकल री। भूधर धन्न शिवासुत[2] वादर[3], वरसायो समजल[4] री। तहां० ॥ ३ ॥

६०. राग ख्याल।

अरे! हां चेतो रे भाई ॥ टेक ॥ मानुप देह लही दुलही, सुघरी उघरी सतसंगति पाई। अरे हां० ॥ १ ॥ जे करनी वरनी करनी नहिं, ते समझी करनी समझाई। अरे हां० ॥ २ ॥ यों शुभ थान जग्यो उर ज्ञान, विषैविषपान तृषा न वुझाई। अरे हां० ॥ ३ ॥ पारस पाय सुधा-

१ राक्षस. २ शिवदेवीके पुत्र नेमि. ३ वादल-मेघ. ४ शम समतारूपी जल. ५ टेक छोड़कर पढ़नेसे इस पदका एक मत्त-गयन्द (तईसा) सवैया वन जाता है.

आदि प्रजा प्रतिपाली, सकल जननकी आरति टाली ॥ आरती० ॥ १ ॥ वांछापूरन सबके स्वामी, प्रगट भये प्रभु अंतरजामी ॥ आरती० ॥ २ ॥ कोटभानुद्युत आभा तनकी, चाहत चाह मिटै नहिं तनकी ॥ आरती० ॥ ३ ॥ नाटक निरखि परम पद ध्यायो, राग थान वैराग उपायो ॥ आरती० ॥ ४ ॥ आदि जगतगुरु आदि विधाता, सुरग मुकति मारगके दाता ॥ आरती० ॥ ५ ॥ दीनदयाल दया अब कीजे, भूधर सेवकको ढिग लीजे ॥ आरती० ॥ ६ ॥

६९. राग सलहामारू।

सुनि सुनि हे साथनि! म्हारे मनकी बात। सुरति सखीसों सुमति राणी यों कहै जी। बीत्यो है साथनि म्हारी! दीरघकाल, म्हारो सनेही म्हारे घर ना रहै जी ॥ १ ॥ ना वरज्यो रहै साथनि म्हारी चेतनराव, कारज अधम अचेतनके करै जी। दुरमति है साथनि म्हारी जात कुजात, सोई चिदातम पियको

निरग्रंथ त्रिकाल । मार्‌यो काम खवीसको, स्वामी परम दयाल ॥ ते गुरु० ॥ ४ ॥ पंच महाव्रत आदरैं, पांचों सुमति समेत । तीन गुपत्ति पालैं सदा, अजर अमर पद हेत ॥ ते गुरु० ॥५ धर्म धरैं दशलक्षणी, भावैं भावना सार । सहैं परीसह बीस द्वै, चारित-रतन-भँडार ॥ ते गुरु० ॥ ६ ॥ जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सरवरनीर । शैल-शिखर मुनि तप तपैं, दाझैं नगन शरीर ॥ ते गुरु० ॥ ७ ॥ पावस रैन डरावनी, वरसै जलधर-धार । तरुतल निवसैं साहसी, बाजै झंझावार ॥ ते गुरु० ॥ ८ ॥ शीत पड़ै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय । ताल तरंगनिके तटै, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ते गुरु० ॥ ९ ॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनों कालमँझार । लागे सहज सरूपमें, तनसों ममत निवार ॥ ते गुरु० ॥१०॥ पूरव भोग न चिंतवैं, आगम वांछा नाहिं । चहुँगतिके दुखसों डरैं, सुरति लगी शिव-

१ तेजीसे । २ जलावैं । ३ चलती है । ४ बरसाती हवाको झंझा कहते हैं ।

पृष्ठ		पदसंख्या
	क।	
१	कर कर आतमहित रे	१
१६	कर रे कर रे कर रे तू आ०	२९
३१	कहत सुगुरु कर सुहित	५८
५३	कहिवेको मन सूरमा, कर०	१०२
६०	कहै राघौ सीता चलहु०	११५
६०	कहै सीताजी सुनो रामच०	११६
६५	कर सतसंगति रे भाई	१२७
७४	कहुं दीठा नेमिकुमार	१४५
७५	कहैं भरतजी सुन हो राम	१४७
८३	कर मन निज आतम०	१५७
१०१	कहारी करौं कित जाऊं	१८३
१०४	कब हौं मुनिवरको व्रत०	१९२
१२७	करुना कर देवा	२६१
१३५	कहा री कहूं कछु कहत	२८७
१३७	कर मन वीतरागको ध्या०	२९३
१४६	कर्मनिको पेलै	३१५
१५०	कलिमें ग्रन्थ बड़े उपगारी	३१९
६	काहेको सोचत अति भा०	११
३९	कारज एक ब्रह्म ही सेती	७५
९५	काया तू चल संग हमा०	१७२
११३	काम सरे सब मेरे [illegible]	२२०
९८	किसकी भगति किये हि०	१७६
१५१	कीजे हो भाईयनिसों	३२०
१२८	कोढ़ी पुरुष कनकतन की०	२६५
१५३	क्रोध कषाय न मैं करों	३२१
१०७	कौन काम अब मैंने की०	२०१
१४१	कौन काम मैंने कीनो	३०४

पृष्ठ		पदसंख्या
	ख।	
१४५	खेलौंगी होरी	३११
	ग।	
३	गलतानमता कब आवै०	५
६८	गहु सन्तोष सदा मन रे	१३३
११६	गिरनारिपै नेमि विराजत	२२९
२०	गुरु समान दाता नहिं०	३८
१२३	गोतम स्वामी जी मोहि	२५१
	घ।	
२५	घटमें परमातम ध्याइये	४८
	च।	
७	चल देखें प्यारी नेमि०	१३
१२५	चल पूजा कीजे बनारसमें	२५४
११८	चाहत है सुख पै न गाह०	२३५
४०	चेतन खेलै होरी	७६
६६	चेत रे प्रानी चेत रे तेरी०	१२९
७८	चेतन प्राणी चेतिये हो	१५२
१०४	चेतन मान हमारी बति०	१९१
१०५	चेतन तुम चेतो भाई	१९५
१०६	चेतन जी तुम जोरत हो	१९७
१११	चेतन मान ले बात हमा०	२१३
१४६	चेतन नागर हो तुम	३१६
१३८	चौवीसोंको वन्दना हमा०	२९५
	ज।	
२	जानत क्यों नहिं रे	२
९	जगतमें सम्यक उत्तम भा०	१५
४६	जय जय नेमिनाथ प०	८८
७०	जब बानी खिरी महा०	१३८

पृष्ट		पदसंख्या
१३०	जग ठग मित्र न कोय वे	२७२
११७	जानो धन्य सो धन्य सो०	२३१
१२९	जाको इंद अहमिंद भ०	२७०
१४४	जानो पूरा ज्ञानी सोई	३०८
४	जिन नाम सुमर मन०	७
१२	जियको लोभ महादुख०	२१
१८	जिनके हिरदै भगवान	३३
१९	जिनके हिरदै प्रभुनाम	३६
६२	जिनके भजनमें मगन०	११९
८९	जिनराय मोह भरोसो	१६५
११०	जिनवानी प्रानी जान ले	२०९
१११	जिन साहिब मेरे हो	२१२
११४	जिनरायके पाँय सदा	२२२
११७	जिन जपि जिन जपि	२३२
१२५	जिनवर मूरति तेरी, शो०	२५७
१३२	जिनपद चाहैं नाहीं कोय	२७८
२७	जीवा शूं कहिये तनैं	५१
२८	जीव तैं मूढपना कित०	५३
९६	जीव तैं मेरी सार न०	१७३
६६	जैन नाम भज भाई रे	१२८
९१	जैन धरम धर जीयरा	१६७
५५	जो तैं आतम हित नाहिं	१०६
	झ ।	
९७	झूठा सपना यह संसार	१७५
	त ।	
१०१	तजि जो गये पिय मोह	१८१
१२६	तारि ले मोहि शीतल०	२५८
१२६	तारनको जिनवानी	२५९
१०३	त्यागो त्यागो मिथ्यातम	१८७
१००	त्रिभुवनमें नामी कर क०	१७९
१३	तुम प्रभु कहियत दीन द०	२३
३८	तुम ज्ञानविभव फूली	७३
५९	तुमको कैसे सुख है मीत	११३
१०९	तुम तार करुनाधार	२०८
१२८	तुम अधमउधारनहार	२६४
१४०	तुम चेतन हो	३०२
५	तू जिनवरस्वामी मेरा	८
२५	तू तो समझ समझ रे भाई	४७
१३९	तू ही मेरा साहिब सच्चा	२९८
११३	तेरो संजम विन रे नरभव	२२१
१३६	तेरे मोह नहीं	२९२
१४६	तेरी भगति विना धिक है	३१४
११३	तैं चेतन करुना न करी रे	२१९
१४०	तैं कहुं देखे नेमिकुमार	३०३
	द ।	
३५	दरसन तेरा मन भावै	६७
१२२	दास तिहारो हूं मोहि०	२५०
१२२	दिखैं दान महा सुख पा०	२४६
१०३	दुरगतिगमन निवारिये	१८९
२३	देख्या मैंने नेमिजी प्यारा	४४
४४	देखो भाई श्रीजिनराज	८५
४५	देखो भाई आतम वि०	८६
४८	देखो भेक फूल ले नि०	९१
५४	देखे सुखी सम्यकवान	१०४
१०८	देखे जिनराज आज	२०३

पृष्ठ पदसंख्या

११९ देखो नाभिनन्दन जग० २३६
१२४ देखे धन्य घरी २५२

ध।

२१ धनि ते साधु रहत वनमा० ४०
३० धनि धनि ते मुनि गिरि० ५७
२७ धिक धिक जीवन समकि० ५०

न।

२४ नहिं ऐसो जनम वारंवार ४६
१४५ नगरमें होरी हो रही हो ३१०
१११ निज जतन करो गुन० २१४
११५ निरविकलप जोति प्रका० २२७
३४ नेमि नवल देखें चल री ६३
१०६ नेमिजी तो केवलज्ञानी १९६
१२१ नेमि मोहि आरत तेरी २४४
१४१ नेमीश्वर खेलन चले ३०५

प।

१७ परमगुरु बरसत ज्ञान० ३०
९९ परमेसुरकी कैसी रीत १७७
११४ परमारथपंथ सदा पक० २२३
२९ प्रभु अब हमको होहु स० ५५
३२ प्रभु मैं किहि विधि थु० ६०
५१ प्रभु तेरी महिमा किहि ९८
५२ प्रभु तेरी महिमा कही न ९९
५२ प्रभु तुम सुमरनहीमें तारे१००
१२७ प्रभु तुम चरन शरन० २६२
१२९ प्रभु तुम नैननगोचर २६८
१३६ प्रभुजी मोहि फिकर अ० २९१
१४४ प्रभु जी प्रभू सुपास ३०९

पृष्ठ पदसंख्या

६७ पायो जी सुख आतम १३१
१२५ पावापुर भवि वन्दो २५६
१२२ प्यारे नेमसों प्रेम किया २४८
३३ प्राणी लाल धरम अगाऊ ६२
८० प्राणी लाल छांड़ो मन १५४
९० प्रानी यह संसार असार १६६
१०५ प्राणी सोहं सोहं ध्याय हो १९४
१०६ प्राणी तुम तो आप सु० १९८
१४८ प्राणी आतमरूप अनूप ३१७
११९ पिय वैराग्य लियो है २३७
११९ पिय वैराग लियो है २३८
१४५ पिया विन कैसे खेलों० ३१२

फ।

३८ फूली वसन्त जहँ आदी० ७२

ब।

१५ वन्दों नेमि उदासी २७
३० वसि संसारमें मैं ५६
४९ वन्दे तू वन्दगी कर याद ९३
४९ वन्दे तू वन्दगी ना भूल ९४
१०७ वीतत ये दिन नीके हमको२००
७१ ये कोई निपट अनारी० १३९

भ।

११ भम्यो जी भम्यो संसार० २०
३३ भजश्री आदिचरन मन० ६१
३४ भवि पूजौ मनवच श्रीजि० ६४
६१ भवि कीजे हो आतम सँभार११७
७९ भजि मन प्रभु श्रीनेमिको १५३
८४ भजो आतम देव रे जि० १५९

पृष्ठ	पदसंख्या
८८ भज रे भज रे मन आदि०	१६३
१३३ भज जम्बूस्वामी अन्तर०	२८१
१३३ भज रे मन वा प्रभु पारस०	२८२
१३४ भजो जी भजो जिनचरन०	२८३
१४६ भली भई यह होरी आई	३१३
९ भाई अब मैं ऐसा जाना	१६
१९ भाई आज आनन्द कछु०	३४
४२ भाई ज्ञानी सोई कहिये	८१
४३ भाई कौन धरम हम पालैं	८२
४८ भाई आपन पाप कमाये	९२
५० भाई ज्ञानका राह दुहेल०	९६
५१ भाई ज्ञानका राह सुहेला रे	९७
८१ भाई ज्ञान विना दुख पाया	१५५
८२ भाई कहा देख गरवाना	१५६
८३ भाई जानो पुद्गल न्यारा	१५८
८५ भाई ब्रह्मज्ञान नहिं जाना	१६०
९३ भाई ब्रह्म विराजै कैसा ?	१७०
९४ भाई कौन कहै घर मेरा	१७१
११५ भाई धनि मुनि ध्यान ल०	२२६
१५४ भाई काया तेरी दुखकी०	३२२
६२ भैया सो आतम जानो रे	१२०
४० भोर भयो भज श्रीजि०	७७
१३२ भोर उठ तेरो मुख देखों	२७७

म ।

१० मन मेरे रागभाव निवार	१८
३५ मगन रहु रे शुद्धातममें	६५
११७ महावीर जावजीव	२३३
१९ माई आज आनंद कछु कहे०	३४
१९ माई आज आनंद है या	३५
५६ मानुष जनम सफल भयो	१०८
७७ मानुषभव पानी दियो	१५०
१०३ मानों मानों जी चेतन	१८८
७३ मिथ्या यह संसार है	१४३
१२० मूरतिपर वारी रे नेमि०	२४१
१७ मेरी बेर कहा ढील करी	३२
३७ मोहि तारो हो देवाधिदेव	७०
५७ मेरे मन कब ह्वै है वैराग	११०
१३१ मेरी मेरी करत जनम	२७४
१३ मैं नेमिजीका बन्दा	२४
१४ मैं निज आतम कब ध्या०	२५
६४ मैं एक शुद्धज्ञाता	१२४
१०२ मैं नूं भावे जी प्रभु चेत०	१८५
१०३ मैं बन्दा स्वामी तेरा	१८६
१४० मैं न जान्यो री जीव	३०१
४ मोहि कब ऐसा दिन आय	६
१२२ मोहि तारि लै पारस०	२४५
१२३ मोहि तारो जिन साहि०	२४९
१५४ मंगल आरती कीजे भोर	३२३

य ।

१३१ यारी कीजे साधो नाल	२७५
११० ये दिन आछे लहे जी	२१०

र ।

७४ राम भरतसों कहैं सुभाइ	१४६
३६ री मेरे घट ज्ञानघनागम	६८
५७ री चल वंदिये चल वंदि०	१०९
१२० री मा नेमि गये किह ठा०	२३९

॥ चल० ॥ ४ ॥ केवलज्ञान आदि गुण प्रगटे, नेकु न मान किया री ॥ चल० ॥ ५ ॥ प्रभुकी महिमा प्रभु न कहि सकैं, हम तुम कौन विचारी ॥ चल० ॥ ६ ॥ द्यानत नेमिनाथ विन आली, कह मोकौं को तारी ॥ चल० ॥ ७ ॥

१४ । राग—सोरठ कड़खा ।

रुल्यो चिरकाल, जगजाल चहुँगति विषैं, आज जिनराज-तुम शरन आयो ॥ टेक ॥ सह्यो दुख घोर, नहिं छोर आवै कहत, तुमसौं कछु छिप्यो नहिं तुम बतायो ॥ रुल्यो० ॥ १ ॥ तु ही संसारतारक नहीं दूसरो, ऐसो मुह भेद न किन्ही सुनायो ॥ रुल्यो० ॥ २ ॥ सकल सुर असुर नरनाथ वंदत चरन, नाभिनन्दन निपुन मुनिन ध्यायो ॥ रुल्यो० ॥ ३ ॥ तु ही अरहन्त भगवन्त गुणवन्त प्रभु, खुले मुझ भाग अब दरश पायो ॥ रुल्यो० ॥ ४ ॥ सिद्ध हौं शुद्ध हौं बुद्ध अविरुद्ध हौं, ईश जगदीश बहु गुणनि गायो ॥ रुल्यो० ॥ ५ ॥ सर्व चिन्ता गई बुद्धि निर्मल भई, जब हि चित जुगलचरननि लगायो ॥ रुल्यो० ॥ ६ ॥ भयो निहचिन्त द्यानत चरन शर्न गहि, तार अब नाथ तेरो कहायो ॥ रुल्यो० ॥ ७ ॥

१५ । राग—मल्हार ।

जगतमें सम्यक उत्तम भाई ॥ टेक ॥ सम्यकसहित प्रधान नरकमें, धिक शठ सुरगति पाई ॥ जगत० ॥ १ ॥ श्रावकव्रत मुनिव्रत जे पालैं, ममता बुधि अधिकाई । तिनतैं अधिक असंजमचारी, जिन आतम लव लाई ॥ जगत० ॥ २ ॥ पंच-परावर्तन तैं कीनै, बहुत बार दुखदाई । लख चौरासि स्वांग धरि नाच्यौ, ज्ञानकला नहिं आई ॥ जगत० ॥ ३ ॥ सम्यक बिन तिहुं जग दुखदाई, जहँ भावै तहँ जाई । द्यानत सम्यक आतम अनुभव, सद्गुरु सीख बताई ॥ जगत० ॥४॥

१६ । राग—गौड़ी ।

भाई ! अब मैं ऐसा जाना ॥ टेक ॥ पुद्गल दरब अचेत भिन्न है, मेरा चेतन बाना ॥ भाई० ॥ १ ॥ कलप[1] अनन्त सहत दुख बीते, दुखकौं सुख कर माना । सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मनतैं आना[2] ॥ भाई० ॥ २ ॥ जहाँ भोर था तहाँ भई निशि, निशिकी ठौर बिहाना । भूल मिटी निजपद पहिचाना, परमानन्द-निधाना ॥ भाई० ॥ ३ ॥ गूंगे का गुड़ खाँय कहैं किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना । द्यानत जिन देख्या ते जानैं, मेंडक हंस पखाना[3] ॥ भाई० ॥ ४ ॥

---

१ कल्पकाल । २ अन्य, निराला । ३ कहावत । मेंडक और हंसकी लोकोक्ति ।

१७ । राग—ख्याल ।

आतम जान रे जान रे जान ॥ टेक ॥ जीवनकी इच्छा करै, कबहुँ न मांगै काल । (प्राणी !) सोई जान्यो जीव है, सुख चाहै दुख टाल ॥ आतम० ॥१॥ नैन वैनमें कौन है, कौन सुनत है बात । (प्राणी) देखत क्यों नहिं आपमें, जाकी चेतन जात ॥ आतम० ॥ २ ॥ बाहिर ढूंढ़ैं दूर है, अंतर निपट नजीक । (प्राणी !) ढूंढनवाला कौन है, सोई जानो ठीक ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तीन भवनमें देखिया, आतम सम नहिं कोय । (प्राणी !) द्यानत जे अनुभव करैं, तिनकौं शिवसुख होय ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१८ । राग—सोरठा ।

मन ! मेरे राग भाव निवार ॥ टेक ॥ राग चिक्कनतैं लगत है कर्मधूलि अपार ॥ मन० ॥ १ ॥ राग आस्रव मूल है, वैराग्य संवर धार । जिन न जान्यो भेद यह, वह गयो नरभव हार ॥ मन० ॥ २ ॥ दान पूजा शील जप तप, भाव विविध प्रकार । राग विन शिव सुख करत हैं, रागतैं संसार ॥ मन० ॥ ३ ॥ वीतराग कहा कियो, यह बात प्रगट निहार । सोइ कर सुखहेत द्यानत, शुद्ध अनुभव सार ॥ मन० ॥ ४ ॥

१९ । राग–रामकली ।

हम न किसीके कोई न हमारा, झूठा है जगका ब्योहारा ॥ टेक ॥ तनसंबंधी सब परवारा, सो तन हमने जाना न्यारा ॥ हम० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सुखका बढ़वारा, पाप उदय दुख होत अपारा । पाप पुन्य दोऊ संसारा, मैं सब देखन जाननहारा ॥ हम० ॥ २ ॥ मैं तिहुँ जग तिहुँ काल अकेला, पर संजोग भया बहु मेला । थिति पूरी करि खिर खिर जांहीं, मेरे हर्ष शोक कछु नाहीं ॥ हम न० ॥ ३ ॥ राग भावतैं सज्जन मानैं, दोष भावतैं दुर्जन जानैं । राग दोष दोऊ मम नाहीं, द्यानत मैं चेतनपदमाहीं ॥ हम न० ॥ ४ ॥

२० । राग–पंचम ।

भम्यो जी भम्यो, संसार महावन, सुख तो कबहुँ न पायो जी ॥ टेक ॥ पुदगल जीव एक करि जान्यो, भेद-ज्ञान न सुहायो जी ॥ भम्यो० ॥ १ ॥ मनवचकाय जीव संहारे[1], झूठो वचन बनायो जी । चोरी करके हरष बढ़ायो, विषयभोग गरवायो जी ॥ भम्यो० ॥२॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, साधारण[2] बसि आयो जी । गरभ जनम नरभव दुख देखे, देव मरत बिललायो जी ॥ भम्यो० ॥ ३ ॥ द्यानत अब जिनवचन सुनै मैं,

---

१ घाते । २ साधारण वनस्पति ।

भवमल पाप वहायो जी । आदिनाथ अरहन्त आदिगुरु, चरनकमल चित लायो जी ॥ भस्यो० ॥ ४ ॥

२१ । राग—रामकली ।

जियको लोभ महा दुखदाई, जाकी शोभा (?)वरनी न जाई ॥ टेक ॥ लोभ करै मूरख संसारी, छांड़ै पण्डित शिव अधिकारी ॥ जियको० ॥ १ ॥ तजि घरवास फिरै वनमाहीं, कनक कामिनी छांड़ै नाहीं । लोक रिझावनको व्रत लीना, व्रत न होय ठगाई सा कीना ॥ जियको० ॥ २ ॥ लोभवशात जीव हत डारै, झूठ बोल चोरी चित धारै । नारि गहै परिग्रह विसतारै, पांच पाप कर नरक सिधारै ॥ जियको ॥ ३ ॥ जोगी जती गृही वनवासी, वैरागी दरवेश[1] सन्यासी । अजस खान जसकी नहिं रेखा, द्यानत जिनकै लोभ विशेखा[2] ॥ जियको० ॥ ४ ॥

२२ ।

रे मन ! भज भज दीनदयाल ॥ टेक ॥ जाके नाम लेत इक छिनमैं, कटैं कोट अघजाल ॥ रे मन० ॥१॥ परमब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखैं होत निहाल । सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजै काल ॥ रे मन० ॥ २ ॥ इंद फनिंद चक्रधर[3] गावैं, जाको नाम रसाल ।

---

१ फकीर । २ विशेषता । ३ चक्रवर्ती ।

जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्याजाल ॥ रे मन० ॥ ३ ॥ जाके नाम समान नहीं कछु, ऊरध मध्य पताल। सोई नाम जपो नित द्यानत, छांड़ि विषय विकराल ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

२३।

तुम प्रभु कहियत दीनदयाल ॥ टेक ॥ आपन जाय मुकतमैं बैठे, हम जु रुलत जगजाल ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुमरो नाम जपैं हम नीके, मन वच तीनौं काल। तुम तो हमको कछू देत नहिं, हमरो कौन हवाल ॥ तुम० ॥ २ ॥ बुरे भले हम भगत तिहारे, जानत हो हम चाल। और कछू नहिं यह चाहत हैं, राग दोषकौं टाल ॥ तुम० ॥ ३ ॥ हमसौं चूक परी सो बकसो[1], तुम तो कृपाविशाल। द्यानत एक बार प्रभु जगतैं, हमको लेहु निकाल ॥ तुम० ॥ ४ ॥

२४। राग—ख्याल।

मैं नेमिजीका बंदा, मैं साहबजीका बंदा ॥ टेक ॥ नैंन चकोर दरसको तरसैं, स्वामी पूरनचंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ १ ॥ छहौं दरबमें सार बतायो, आतम आनँदकन्दा। ताको अनुभव नित प्रति कीजे, नासै सब दुख दंदा ॥ मैं नेमिजी ॥ २ ॥ देत धरम उपदेश

---

१ बख्शो साफ करो।

भविक प्रति, इच्छा नाहिं करंदा । राग दोष मद मोह नहीं नहिं, क्रोध लोभ छल छंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ३ ॥ जाको जस कहि सकैं न क्योंही, इंद फनिंद नरिन्दा । सुमरन भजन सार है द्यानत, और बात सब धंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ४ ॥

२५ ।

मैं निज आतम कब ध्याऊंगा ॥ टेक ॥ रागादिक परिनाम त्यागकै, समतासौं लौ लाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ १ ॥ मन वच काय जोग थिर करकै, ज्ञान समाधि लगाऊंगा । कब हौं[1] खिपकश्रेणि[2] चढ़ि ध्याऊं, चारित मोह नशाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ २ ॥ चारों करम घातिया खय[3] करि, परमातम पद पाऊंगा । ज्ञान दरश सुख बल भंडारा, चार अघाति बहाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ३ ॥ परम निरंजन सिद्ध शुद्धपद, परमानंद कहाऊंगा । द्यानत यह सम्पति जब पाऊं, बहुरि न जगमें आऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ४ ॥

२६ ।

अरहंत सुमर मन बावरे ! ॥ टेक ॥ ख्याति[4] लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लाव रे ॥ अरहंत० ॥१॥ नरभव पाय अकारथ खोवै, विषय भोग जु बढ़ाव रे ।

---

१ मैं । २ क्षपकश्रेणी । ३ नाशकर । ४ यश, कीर्ति ।

प्राण गये पछितैहै मनवा, छिन छिन छीजै आवं रे ॥ अरहंत० ॥ २ ॥ जुवती तन धन सुत मित परिजनं, गज तुरंग रथ चाव रे। यह संसार सुपनकी माया, आंख मीचि दिखराव रे ॥ अरहंत० ॥ ३ ॥ ध्याव ध्याव रे अब है दावरे, नाहीं मंगल गाव रे। द्यानत बहुत कहां लौं कहिये, फेर न कछू उपाव रे ॥ अरहंत० ॥ ४ ॥

२७।

वन्दौ नेमि उदासी, मद मारिवेकौं ॥ टेक ॥ रजमतसी जिन नारी छाँरी, जाय भये वनवासी ॥ वन्दौं० ॥ १ ॥ हय गय रथ पायक सब छांड़े, तोरी ममता फाँसी। पंच महाव्रत दुद्धर धारे, राखी प्रकृति पचासी ॥ वन्दौं० ॥ २ ॥ जाकै दरसन ज्ञान विराजत, लहि वीरज सुखरासी। जाकौं वंदत त्रिभुवन-नायक, लोकालोकप्रकासी ॥ वन्दौं० ॥ ३ ॥ सिद्ध शुद्ध परमातम राजैं, अविचल थान निवासी। द्यानत मन अलि प्रभु पद-पंकज, रमत रमत अघ जासी ॥ वन्दौं० ॥ ४ ॥

२८।

आतम अनुभव कीजै हो ॥ टेक ॥ जनम जरा अरु मरन नाशकै, अनत काल लौं जीजै हो ॥ आतम०

---

१ आयु। २ स्त्री। ३ मित्र। ४ नौकरचाकर। ५ भ्रमर। ६ नाश होगा।

॥ १ ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, कुगुरु आदि तज दीजै हो । छहौं दरव नव तत्त्व परखकै, चेतन सार गहीजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ दरव करम नो करम भिन्न करि, सूक्षमदृष्टि धरीजै हो । भाव करमतैं भिन्न जानिकै, वुधि विलास न करीजै हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ आप आप जानै सो अनुभव, द्यानत शिवका दीजै हो । और उपाय वन्यो नाहिं वनि है, करै सो दक्ष कहीजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

२९ ।

कर रे! कर रे! कर रे!, तू आतम हित कर रे ॥ टेक ॥ काल अनन्त गयो जग भमतैं, भव भवके दुख हर रे ॥ कर रे० ॥ १ ॥ लाख कोटि भव तपस्या करतैं, जितो कर्म तेरो जर रे । स्वास उस्वासमाहिं सो नासै, जब अनुभव चित धर रे ॥ कर रे० ॥ २ ॥ काहे कष्ट सहै वन माहीं । राग दोष परिहर[1] रे । काज होय समभाव विना नाहिं, भावौ[2] पचि पचि मर रे ॥ कर रे ॥ ३ ॥ लाख सीखकी सीख एक यह, आतम निज, पर पर रे । कोट ग्रंथको सार यही है, द्यानत लख भव तर रे ॥ कर रे ॥ ४ ॥

---

१ त्याग । २ चाहे ।

छल लोभ न जानैं, राग दोष नाहीं उनमाहीं । अमल अखंडित चिद्गुणमंडित, ब्रह्मज्ञानमें लीन रहाहीं ॥ धनि० ॥ ३ ॥ तेई साधु लहैं केवलपद, आठ-काठ दह शिवपुर जाहीं । द्यानत भवि तिनके गुण गावैं, पावैं शिवसुख दुःख नसाहीं ॥ धनि० ॥ ४ ॥

४१ ।

अब हम आतमको पहिचान्यौ ॥ टेक ॥ जबहीसेती मोह सुभट बल, खिनक एकमें भान्यौ ॥ अब० ॥ १ ॥ राग-विरोध-विभाव भजे झर, ममता भाव पलान्यौ । दरसन ज्ञान चरनमें चेतन, भेदरहित परवान्यौ ॥ अब० ॥ २ ॥ जिहि देखैं हम अवर न देख्यो, देख्यो सो सरधान्यौ । ताकौ कहो कहैं कैसें करि, जा जानै जिन जान्यौ ॥ अब० ॥ ३ ॥ पूरव भाव सुपनवत देखे, अपनो अनुभव तान्यौ । द्यानत ता अनुभव स्वादत ही, जनम सफल करि मान्यौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

४२ ।

हमको प्रभु श्रीपास सहाय ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखत जब ही, पातक जाय पलाय ॥ हमको० ॥ १ ॥ जाको इंद फनिंद चक्रधर, वंदैं सीस नवाय । सोई

---

१ आत्मीक । २ अष्टकर्मरूपी ईंधन । ३ जिस समयसे । ४ झड़कर, निर्जरा होकर । ५ पाप ।

स्वामी अन्तरजामी, भव्यनिको सुखदाय॥ हमको०॥२॥ जाके चार घातिया बीते, दोष जु गये विलाय। सहित अनन्त चतुष्टय साहब, महिमा कही न जाय॥ हमको० ॥ ३ ॥ तकि या बड़ो मिल्यो है हमको, गहि रहिये मन लाय। द्यानत औसर बीत जायगो, फेर न कछू उपाय॥ हमको० ॥ ४ ॥

४३।

ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी, नेमिजी! तुम ही हो ज्ञानी ॥टेक॥ तुम्हीं देव गुरु तुम्हीं हमारे, सकल दरब जानी ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ तुम समान कोउ देव न देख्या, तीन भवन छानी। आप तरे भविजीवनि तारे, ममता नहिं आनी ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ और देव सब रागी द्वेषी, कामी कै मानी। तुम हो वीतराग अकषायी, तजि राजुल रानी॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ यह संसार दुःख ज्वाला तजि, भये मुकतथानी। द्यानतदास निकास जगततैं, हम गरीब प्रानी॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

४४।

देख्या मैंने नेमिजी प्यारा॥ टेक॥ मूरति ऊपर करौं निछावर, तन धन जीवन जोबन सारा॥ देख्या० ॥ १ ॥ जाके नखकी शोभा आगैं, कोटि काम छवि डारौं वारा। कोटि संख्य रवि चन्द छिपत हैं, वपुकी

द्युति है अपरंपारा ॥ देख्या० ॥२॥ जिनके वचन सुनें जिन भविजन, तजि गृह मुनिवरको व्रत धारा । जाको जस इन्द्रादिक गावैं, पावैं सुख नासैं दुख भारा ॥ देख्या० ॥३॥ जाके केवलज्ञान विराजत, लोकालोक प्रकाशन हारा । चरन गहेकी लाज निवाहो, प्रभुजी द्यानत भगत तुम्हारा ॥ देख्या ॥ ४ ॥

४५ ।

आतमरूप अनूपम है, घटमाहिं विराजै हो ॥ टेक ॥ जाके सुमरन जापसों, भव भव दुख भाजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ केवल दरसन ज्ञानमैं, थिरतापद छाजै हो । उपमाको तिहुँ लोकमें, कोऊ वस्तु न राजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ सहै परीषह भार जो, जु महाव्रत साजै हो । ज्ञान विना शिव ना लहै, बहुकर्म उपाजै[1] हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तिहूँ लोक तिहुँ कालमें, नाहिं[2] और इलाजै हो । द्यानत ताकों जानिये, निज स्वारथ-काजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

४६ ।

नाहिं ऐसो जनम वारंवार ॥ टेक ॥ कठिन कठिन लह्यो मनुष भव, विषय भजि मति हार ॥ नाहिं० ॥१॥ पाय चिन्तामन रतन शठ, छिंपत[3] उदधिमँझार । अंध

---

१ उपार्जित करै, कमावै । २ नहीं । ३ फैंकता है ।

हाथ बटेर आई, तजत ताहि गँवार ॥ नहिं० ॥ २ ॥ कबहुँ नरक तिरजंच कबहूँ, कबहुँ सुरगविहार । जगतमहिं चिरकाल भमियो, दुलभ नर अवतार ॥ नहिं० ॥ ३ ॥ पाय अम्रत पाँय धोवै, कहत सुगुरु पुकार । तजो विषय कषाय द्यानत, ज्यों लहो भवपार ॥ नहिं० ॥ ४ ॥

४७ ।

तू तो समझ समझ रे! भाई ॥ टेक ॥ निशिदिन विषय भोग लपटाना, धरम वचन न सुहाई ॥ तू तो० ॥ १ ॥ कर मनका[1] लै आसन मार्यो, वाहिज लोक रिझाई । कहा भयो बक-ध्यान धरेतैं, जो मन थिर न रहाई ॥ तू तो० ॥ २ ॥ मास मास उपवास किये तैं, काया बहुत सुखाई । क्रोध मान छल लोभ न जीत्या, कारज कौन सराई ॥ तू तो० ॥ ३ ॥ मन वच काय जोग थिर करकैं, त्यागो विषयकषाई । द्यानत सुरग मोख सुखदाई, सद्गुरु सीख बताई ॥ तू तो० ॥ ४ ॥

४८ ।

घटमें परमातम ध्याइये हो, परम धरम धनहेत । ममता बुद्धि निवारिये हो, टारिये भरम निकेत ॥ घटमें० ॥ १ ॥ प्रथमहिं अशुचि निहारिये हो, सात धातुमय

---

१ मालाके गुरिया ।

देह । काल अनन्त सहे दुख जानैं, ताको तजो अब नेह ॥ घटमें० ॥ २ ॥ ज्ञानावरनादिक जमरूपी, निजतैं भिन्न निहार । रागादिक परनति लख न्यारी, न्यारो सुबुध विचार ॥ घटमें० ॥ ३ ॥ तहाँ शुद्ध आतम निरविकलप, ह्वै करि तिसको ध्यान । अलप कालमें घांति[1] नसत हैं, उपजत केवलज्ञान ॥ घटमें० ॥ ४ ॥ चार अघाति नाशि शिव पहुँचे, विलसत सुख जु अनन्त । सम्यकदरसनकी यह महिमा, द्यानत लह भव अन्त ॥ घटमें० ॥ ५ ॥

४९ ।

समझत क्यों नहिं वानी, अज्ञानी जन ॥ टेक ॥ स्यादवाद-अंकित सुखदायक, भाषी केवलज्ञानी ॥ समझत० ॥ १ ॥ जास लखैं निरमल पद पावै, कुमति कुगतिकी हानी । उदय भया जिहिमें परगासी, तिहि जानी सरधानी ॥ समझत० ॥ २ ॥ जामें देव धरम गुरु वरनें, तीनौं मुकतिनिसानी । निश्चय देव धरम गुरु आतम, जानत विरला प्रानी ॥ समझत० ॥ ३ ॥ या जगमाहिं तुझे तारनको, कारन नाव वखानी । द्यानत सो गहिये निहचैसों, हूजे ज्यों शिवथानी ॥ समझत० ॥ ४ ॥

---

१ घातिया कर्म ।

५० ।

धिक ! धिक ! जीवन समकित विना ॥ टेक ॥ दान शील तप व्रत श्रुतपूजा, आतम हेत न एक गिना ॥ धिक० ॥ १ ॥ ज्यों विनु कन्त[1] कामिनी शोभा, अंबुज[2] विनु सरवर ज्यों सुना । जैसे विना एकड़े[3] विन्दी, त्यों समकित विन सरव गुना ॥ धिक० ॥ २ ॥ जैसे भूप विना सब सेना, नींव विना मंदिर चुनना । जैसे चन्द विहूनी[4] रजनी[5], इन्हैं आदि जानो निपुना ॥ धिक० ॥ ३ ॥ देव जिनेन्द्र, साधु गुरु, करुना, धर्मराग व्योहार भना । निहचै देव धरम गुरु आतम, द्यानत गहि मन वचन तना ॥ धिक० ॥ ४ ॥

५१ । गुजरातीभाषा—गीत ।

जीवा ! शुं[6] कहिये तनैं[7] भाई ॥ टेक ॥ पोतानूं[8] रूप अनूप तजीनें[9], शांमाटें[10] विषयी थाई[11] ॥ जीवा० ॥ १ ॥ इन्द्रीना विषय विषथकी मोटा, ज्ञाननूं अम्रत गाई । अमृत छोड़ीनें विषय विष पीधा, साता तो नथी पाई[12] ॥ जीवा० ॥ २ ॥ नरक निगोदना दुख सह आव्यो, वली[13] तिहनें[14] मग धाई । एहवी[15] वात रूड़ी[16] न छै तमनें,

---

१ पति, भर्तार । २ कमल । ३ एक (१) का अंक । ४ रहित । ५ रात्रि । ६ क्या । ७ तुझे । ८ अपना । ९ तज करके । १० किसलिये । ११ हुआ । १२ नहीं प्राप्त हुई । १३ पुनः । १४ उसी । १५ ऐसी । १६ अच्छी ।

देखि त्रिपति नहिं सुरपति, नैन हजार वनावै ॥ दरसन० ॥ १ ॥ समोसरनमें निरखै सचिंपति, जीभ सहस गुन गावै । कोड़ कामको रूप छिपत है, तेरो दरस सुहावै ॥ दरसन० ॥ २ ॥ आँख लगै अंतर है तो भी, आनँद उर न समावै । ना जानों कितनों सुख हरिको, जो नहिं पलक लगावै ॥ दरसन० ॥ ३ ॥ पाप नासकी कौन वात है, द्यानत सम्यक पावै । आसन ध्यान अनूपम स्वामी, देखैं ही वन आवै ॥ दरसन० ॥ ४ ॥

६८ ।

री ! मेरे घट ज्ञान घनागम छायो ॥ री० ॥ टेक ॥ शुद्ध भाव वादल मिल आये, सूरज मोह छिपायो ॥ री० ॥ १ ॥ अनहद घोर घोर गरजत है, भ्रम आताप मिटायो । समता चपला चमकनि लागी, अनुभौ-सुख झर लायो ॥ री० ॥ २ ॥ सत्ता भूमि वीज समकितको, शिवपद खेत उपायो । उद्धत (?) भाव सरोवर दीसै, मोर सुमन हरपायो ॥ री० ॥ ३ ॥ भव-प्रदेशतैं वहु दिन पीछैं, चेतन पिय घर आयो । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, यह पावस मोहि भायो ॥ री० ॥ ४ ॥

६९ ।

हो स्वामी ! जगत जलधितैं तारो ॥ हो० ॥ टेक ॥

---

१ इन्द्र । २ इन्द्रको ।

मोह मच्छ अरु काम कच्छतैं, लोभ लहरतैं उवारो ॥ हो० ॥ १ ॥ खेद खारजल दुख दावानल, भरम भँवर भय टारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत वार वार यौं भापै, तू ही तारनहारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

७० । राग—वसन्त ।

मोहि तारो हो देवाधिदेव, मैं मनवचतनकरि करौं सेव ॥ टेक ॥ तुम दीनदयाल अनाथनाथ, हमहूको राखो आप साथ ॥ मोह० ॥ १ ॥ यह मारवाड़ संसार देश, तुम चरनकलपतरु हर कलेश ॥ मोह० ॥ २ ॥ तुम नाम रसायन जीय पीय, द्यानत अजरामर भव त्रितीय ॥ मोह० ॥ ३ ॥

७१ । राग—केदारो ।

रे जिय! क्रोध काहे करै ॥ टेक ॥ देखकै अविवेकि प्रानी, क्यों विवेक न धरै ॥ रे जिय० ॥ १ ॥ जिसे जैसी उदय आवै, सो क्रिया आचरै । सहज तू अपनो विगारै, जाय दुर्गति परै ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ होय संगति-गुन सवनिकों, सरव जग उचरै । तुम भले कर भले सवको, बुरे लखि मति जरै ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ वैद्य परविप हर सकत नाहिं, आप भखि को मरै । बहु कपाय निगोद-वासा, छिमा द्यानत तरै ॥ रे जिय० ॥४॥

---

१ इस पदमें दो पद्धरी छन्द हैं । २ स्वभाव ।

७२ ।

फूली वसन्त जहँ आदीसुर शिवपुर गये ॥ टेक ॥ भारतभूप वहत्तर जिनगृह, कनकमयी सब निरमये ॥ फूली० ॥ १ ॥ तीन चौवीस रतनमय प्रतिमा, अंग रंग जे जे भये । सिद्ध समान सीस सम सबके, अदभुत शोभा परिनये ॥ फूली० ॥ २ ॥ वालि आदि आहूठ कोड़ मुनि, सबनि मुकति सुख अनुभये । तीन अठाई फागनि (?) खग मिल, गावैं गीत नये नये ॥ फूली० ॥३॥ वसुं जोजन वसु पैड़ी (?) गंगा, फिरी वहुत सुरआलये । द्यानत सो कैलास नमौं हौं, गुन कापै जाँ वरनये ॥ फूली० ॥ ४ ॥

७३ ।

तुम ज्ञानविभव फूली वसन्त, यह मन मधुकर सुखसों रमन्त ॥ टेक ॥ दिन वड़े भये वैराग भाव, मिथ्यामत रजनीको घटाव ॥ तुम० ॥ १ ॥ वहु फूली फैली सुरुचि वेलि, ज्ञाताजन समता संग केलि ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत वानी पिक मधुररूप, सुरनरपशुआनँदघनसुरूप ॥ तुम० ॥ ३ ॥

---

१ जहां (कैलाशगिरिपर) । २ वनवाये । ३ साड़े तीन कोटि । ४ आठ । ५ किसेस । ६ जावें । ७ भ्रमर । ८ रात्रि । ९ कोयल ।

७४।

ज्ञानी जीव-दया नित पालैं ॥ टेक ॥ आरँभतैं पर-घात होत है, क्रोध घात निज टालैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ हिंसा त्यागि दयाल कहावै, जलै कषाय वदनमें। बाहिर त्यागी अन्तर दागी, पहुँचै नरकसदनमें[1] ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ करै दया कर आलस भावी, ताको कहिये पापी। शांत सुभाव प्रमाद न जाकै, सो परमारथ-व्यापी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ शिथिलाचार निरुद्यम[2] रहना, सहना बहु दुख भ्राता। द्यानत बोलन डोलन जीमनैं[3], करैं जतनसों ज्ञाता ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

७५।

कारज एक ब्रह्महीसेती ॥ टेक ॥ अंग संग नाहिं वहिरभूत सब, धन दारा[4] सामग्री तेती ॥ कारज० ॥ १ ॥ सोल सुरग नव ग्रैविकमें दुख, सुखित सातमें[5] ततका[6] वेती। जा शिवकारन मुनिगन ध्यावैं, सो तेरे घट आनँदखेती ॥ कारज० ॥ २ ॥ दान शील जप तप व्रत पूजा, अफल ज्ञान विन किरिया केती। पंच दरव तोतैं नित न्यारे, न्यारी रागदोष विधि जेती ॥ कारज० ॥ ३ ॥ तू अविनाशी जगपरकासी, द्यानत भासी

---

१ नरकरूपी घरमें। २ उद्योगहीन। ३ भोजन, भक्षण। ४ स्त्री। ५ सातवें नरकमें। ६ तत्त्वका जाननेवाला।

सुकलावेती । तजौ लाल! मनके विकलप सब, अनुभव-मगन सुविधा एती ॥ कारज० ॥ ४ ॥

७६ ।

चेतन खेलै होरी ॥ टेक ॥ सत्ता भूमि छिमा वसन्तमें, समता प्रानप्रिया सँग गोरी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ मनको माट प्रेमको पानी, तामें करुना केसर घोरी । ज्ञान ध्यान पिचकारी भरिभरि, आपमें छोरै होरा होरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरुके वचन मृदंग वजत हैं, नय दोनों डफ ताल टकोरी । संजम अतर विमल व्रत चोवा, भाव गुलाल भरै भर झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ धरम मिठाई तप बहु मेवा, समरस आनँद अमल कटोरी । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, चिरजीवो यह जुगजुग जोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७७ ।

भोर[1] भयो भज श्रीजिनराज, सफल होंहिं तेरे सब काज ॥ टेक ॥ धन सम्पत मनवांछित भोग, सब विधि आन बनैं संजोग ॥ भोर० ॥ १ ॥ कलपवृच्छ ताके घर रहै, कामधेनु नित सेवा वहै । पारस चिन्तामनि समुदाय, हितसों आय मिलैं सुखदाय ॥ भोर० ॥ २ ॥ दुर्लभतैं सुलभ्य ह्वै जाय, रोग सोग दुख दूर पलाय । सेवा देव करैं मन लाय, विघन उलट मंगल

१ इस पदकी सब तुकें १५ मात्राकी चौपाई होती हैं ।

ठहराय ॥ भोर० ॥ ३ ॥ डाँयन भूत पिशाच न छलै, राजचोरको जोर न चलै । जस आदर सौभाग्य प्रकास, द्यानत सुरग मुकतिपदवास ॥ भोर० ॥ ४ ॥

७८।

आयो सहज वसन्त खेलैं सब होरी होरा ॥ टेक ॥ उत बुधि दया छिमा बहु ठाढ़ीं, इत जिय रतन सजै गुन जोरा ॥ आयो० ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान डफ ताल बजत हैं, अनहद शब्द होत घनघोरा । धरम सुराग गुलाल उड़त हैं, समता रंग दुहूंने घोरा ॥ आयो० ॥ २ ॥ परसंन उत्तर भरि पिचकारी, छोरत दोनों करि करि जोरा । इततैं कहैं नारि तुम काकी, उततैं कहैं कौनको छोरा ॥ आयो० ॥ ३ ॥ आठ काठ अनुभव पावकमें, जल बुझ शांत भई सब ओरा । द्यानत शिव आनन्दचन्द छवि, देखैं सज्जन नैन चकोरा ॥ आयो० ॥ ४ ॥

७९।

अजितनाथसों मन लावो रे ॥ टेक ॥ करसों ताल वचन मुख भाषों, अर्थमें चित्त लगावो रे ॥ अजित० ॥ १ ॥ ज्ञान दरस सुख बल गुनधारी, अनन्त चतुष्टय ध्यावो रे । अवगाहना अबाध अमूरत, अगुरु अलघु

१ प्रश्न । २ इधरसे । ३ किसकी ? । ४ उधरसे । ५ लड़का ।

बतलावो रे ॥ अजित० ॥ २ ॥ करुनासागर गुनरत-नागर, जोतिउजागर भावो रे । त्रिभुवननायक भव-भयघायक, आनँददायक गावो रे ॥ अजित० ॥ ३ ॥ परमनिरंजन पातकभंजन, भविरंजन ठहरावो रे । द्यानत जैसा साहिब सेवो, तैसी पदवी पावो रे ॥ अजित० ॥ ४ ॥

८० । राग–आसावरी ।

अब हम अमर भये न मरैंगे ॥ टेक ॥ तन-कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों करि देह धरैंगे ॥ अब० ॥ १ ॥ उपजै मरै कालतैं प्रानी, तातैं काल हरैंगे । राग दोष जग बंध करत हैं, इनको नाश करैंगे ॥ अब० ॥ २ ॥ देह विनाशी मैं अविनाशी, भेदज्ञान पकरैंगे । नासी जासी हम थिरवासी, चोखे हो निखरैंगे ॥ अब० ॥ ३ ॥ मरे अनन्त बार बिन समझैं, अब सब दुख बिसरैंगे । द्यानत निपट निकट दो अक्षर, बिन सुमरैं सुमरैंगे ॥ अब० ॥ ४ ॥

८१ । राग–आसावरी ।

भाई ! ज्ञानी सोई कहिये ॥ टेक ॥ करम उदय सुख दुख भोगेतैं, राग विरोध न लहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ कोऊ ज्ञान क्रियातैं कोऊ, शिवमारग बतलावै ।

१ रत्नोंकी खानि । २ शुद्धचिदानंद । ३ "आत्मा" ।

नय निहचै विवहार साधिकै, दोऊ चित्त रिझावै॥ भाई०॥ २॥ कोई कहै जीव छिनभंगुर, कोई नित्य वखानै। परजय दरवित नय परमानै, दोऊ समता आनै॥ भाई०॥ ३॥ कोई कहै उदय है सोई, कोई उद्यम बोलै। द्यानत स्यादवाद सुतुलामें[1], दोनों वस्तैं[2] तोलै॥ भाई०॥ ४॥

८२। राग—आसावरी।

भाई! कौन धरम हम पालैं॥ टेक॥ एक कहैं जिहि कुलमें आये, ठाकुरको कुल गा लैं॥ भाई०॥१॥ शिवमत बौध सु वेद नयायक, मीमांसक अरु जैना। आप सराहैं आगम गाहैं, काकी[3] सरधा ऐना॥ भाई०॥ २॥ परमेसुरपै हो आया हो, ताकी वात सुनी जै। पूछैं वहुत न बोलैं कोई, वड़ी फिकर क्या कीजै॥ भाई०॥ ३॥ जिन सव मतके मत संचय करि, मारग एक वताया। द्यानत सो गुरु पूरा पाया, भाग हमारा आया॥ भाई०॥ ४॥

८३। राग—गौरी।

हमारो कारज कैसें होय॥ टेक॥ कारण पंच मुकति मारगके, तिनमेंके हैं दोय॥ हमारो०॥ १॥ हीन संघनन लघु आयूषा, अल्प मनीषा[4] जोय। कच्चे

---

१ उत्तम तराजूमें। २ वस्तुएँ। ३ किसकी। ४ बुद्धि।

९५ ।

आतमरूप सुहावना, कोई जानै रे भाई। जाके जानत पाइये, त्रिभुवनठकुराई ॥ टेक ॥ मन इन्द्री न्यारे करौ, मन और विचारौ। विषय विकार सबै मिटैं, सहजैं सुख धारौ ॥ आतम० ॥ १ ॥ बाहिरतैं मन रोककैं, जब अन्तर आया। चित्त कमल सुलझ्यो तहाँ, चिन्मूरति पाया ॥ आतम० ॥ २ ॥ पूरक कुंभक रेचतैं, पहिलैं मन साधा। ज्ञान पवन मन एकता, भई सिद्ध समाधा ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जिनि इहि विध मन वश किया, तिन आतम देखा। द्यानत मौनी व्है रहे, पाई सुखरेखा ॥ आतम० ॥ ४ ॥

९६ । राग—सोरठ ।

भाई! ज्ञानका राह दुहेला[1] रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ मैं ही भगत बड़ा तपधारी, ममता गृह झकझेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ मैं कविता सब कवि सिरऊपर, बानी पुद्गल-मेला रे। मैं सब दानी माँगै सिर द्यौं, मिथ्याभाव सकेला रे ॥ भाई०॥२॥ मृतक देह बस फिर तन आऊं, मार जिवाऊं छेला रे। आप जलाऊं फेर दिखाऊं, क्रोध लोभतैं खेला रे॥ भाई० ॥ ३ ॥ वचन सिद्ध भाषै सोई है, प्रभुता वेलन वेला रे। द्यानत चंचल चित पारा थिर, करै सुगुरुका चेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

१ कठिन—दुर्धर ।

९७

भाई ! ज्ञानका राह सुहेला[1] रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ दरव न चहिये देह न दहिये, जोग भोग न नवेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ लड़ना नाहीं मरना नाहीं, करना वेला तेला रे । पढ़ना नाहीं गढ़ना नाहीं, नाच न गावन मेला रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ न्हानां[2] नाहीं खांना नाहीं, नाहिं कमाना धेला रे । चलना नाहीं जलना नाहीं, गलना नाहीं देला रे ॥भाई० ॥ ३ ॥ जो चित चाहै सो नित दाहै, चाह दूर करि खेला रे । द्यानत यामें कौन कठिनता, वे परवाह अकेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

९८ ।

प्रभु तेरी महिमा किहि मुख गावैं ॥ टेक ॥ गरभ छमास अगाउ कनक नग (?) सुरपति नगर बनावैं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ क्षीर उदधि जल मेरु सिंहासन, मल मल इन्द्र न्हुलावैं[3] । दीक्षा समय पालकी बैठो, इन्द्र कहार कहावैं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ समोसरन रिध ज्ञान महातम, किहिविधि सरव बतावैं । आपन जातकी बात कहा शिव, बात सुनैं भवि जावैं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ पंच कल्यानक थानक स्वामी, जे तुम मन वच ध्यावैं । द्यानत तिनकी कौन कथा है, हम देखैं सुख पावैं ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ सहज । २ स्नान करना । ३ अभिषेक करावैं ।

९९

प्रभु तेरी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ थुति करि सुखी दुखी निंदातैं, तेरैं समता भाय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जो तुम ध्यावै थिर मन लावै, सो किंचित् सुख पाय । जो नहिं ध्यावै ताहि करत हो, तीन भवनको राय ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ अंजन चोर महाअपराधी, दियो स्वर्ग पहुँचाय । कथानाथ श्रेणिक समदृष्टी, कियो नरक दुखदाय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ सेव असेव कहा चलै जियकी, जो तुम करो सु न्याय । द्यानत सेवक गुन गहि लीजै, दोष सबै छिटकाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

१०० । राग—विलावल ।

प्रभु तुम सुमरनहीमें तारे ॥ टेक ॥ सूअर सिंह नौल[1] वानरने, कहौ कौन व्रत धारे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ सांप जाप करि सुरपद पायो, स्वान श्याल भय जारे । भेक[2] बोक[3] गज अमर कहाये, दुरगति भाव विदारे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भील चोर मातंग[4] जु गनिका, बहुतनिके दुख टारे । चक्री भरत कहा तप कीनौ, लोकालोक निहारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ उत्तम मध्यम भेद न कीन्हों, आये शरन उबारे । द्यानत राग दोष विन स्वामी, पाये भाग हमारे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ न्योला । २ मेंडक । ३ बकरा । ४ चांडाल ।

१०१ । राग—भैरों ।

ऐसो सुमरन कर मेरे भाई, पवन थँभै मन कितहूँ न जाई ॥ टेक ॥ परमेसुरसों साँच रही जै, लोकरंजना भय तज दीजै ॥ ऐसो० ॥ १ ॥ जंम[1] अरु नेम[2] दोउ विधि धारो, आसन प्राणायाम सँभारो । प्रत्याहार धारना कीजै, ध्यान-समाधि-महारस पीजै ॥ ऐसो० ॥ २ ॥ सो तप तपो वहुरि नहिं तपना, सो जप जपो वहुरि नहिं जपना । सो व्रत धरो वहुरि नहिं धरना, ऐसे मरो वहुरि नहिं मरना ॥ ऐसो० ॥ ३ ॥ पंच परावर्तन लखि लीजै, पाँचों इन्द्रीको न पँतीजै[3] । द्यानत पांचों लच्छि लहीजै, पंच परम गुरु शरन गहीजै ॥ ऐसो० ॥४॥

१०२ । राग—विलावल ।

कहिवेकों मन सूरँमा[4], करवेकों काचा ॥ टेक ॥ विषय छुड़ावै औरपै, आपन अति माँचा[5] ॥ कहिवे० मिश्री मिश्रीके कहैं, मुँह होय न मीठा । नीम कहैं मुख कटु हुआ, कहुँ सुना न दीठा[6] ॥ कहिवे० ॥ २ ॥ कहनेवाले वहुत हैं, करनेकों कोई । कथनी लोक-रिझावनी, करनी हित होई ॥ कहिवे० ॥ ३ ॥ कोड़ि जनम कथनी कथै, करनी विनु दुखिया । कथनी विनु करनी करै, द्यानत सो सुखिया ॥ कहिवे० ॥ ४ ॥

---

१ यम । २ नियम । ३ विश्वास कीजिये । ४ शूरवीर । ५ मग्न हुआ । ६ देखा ।

१०३ । राग—विलावल ।

श्रीजिननाम अधार, सार भजि ॥ टेक ॥ अगम अतट संसार उदधितैं, कौन उतारै पार ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कोटि जनम पातक कटैं, प्रभु नाम लेत इक वार । ऋद्धि सिद्धि चरननिसों लागै, आनँद होत अपार ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ पशु ते धन्य धन्य ते पंखी, सफल करैं अवतार । नाम विना धिक् मानवको[1] भव, जल वल है है छार ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ नाम समान आन नाहिं जग सब, कहत पुकार पुकार । द्यानत नाम तिहूँ-पन जपि लै, सुरगमुकतिदातार ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

१०४ ।

देखे सुखी सम्यकवान ॥ टेक ॥ सुख दुखको दुखरूप विचारैं, धारैं अनुभवज्ञान ॥ देखे० ॥ १ ॥ नरक सातमेंके दुख भोगैं, इन्द्र लखैं तिन[2]-मान । भीख मांगके उदर भरैं, न करैं चक्रीको ध्यान ॥ देखे० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदकों नाहिं चावैं, जदपि उदय अप्रमान । कुष्ट आदि बहु व्याधि दहत न, चहत मकर[3]ध्वज-थान ॥ देखे० ॥ ३ ॥ आधि व्याधि निरवाध अनाकुल, चेतनजोति पुमान । द्यानत मगन सदा तिहि-माहीं, नाहीं खेद निदान ॥ देखे० ॥ ४ ॥

---

१ मनुष्यभव । २ तिनकेके बराबर । ३ कामदेव ।

१०५ ।

सब जगको प्यारा, चेतनरूप निहारा ॥ टेक॥ दरब भाव नो करम न मेरे, पुदगल दरब पसारा ॥ सब० ॥ १ ॥ चार कषाय चार गति संज्ञा, बंध चार परकारा। पंच वरन रस पंच देह अरु, पंच भेद संसारा ॥ सब० ॥ २ ॥ छहों दरब छह काल छलेश्या, छमत[1] भेदतैं पारा । परिग्रह मारगना[2] गुन-थानक, जीवथानसों न्यारा ॥ सब० ॥ ३ ॥ दरसनज्ञानचरनगुनमण्डित, ज्ञायक चिह्न हमारा । सोऽहं सोऽहं और सु औरै, द्यानत निहचै धारा ॥ सब० ॥ ४ ॥

१०६ । राग—विहागरा ।

जो तैं आतमहित नहिं कीना ॥ टेक ॥ रामा[3] रामा धन धन कीना, नरभव फल नहिं लीना ॥ जो तैं० ॥ १ ॥ जप तप करकैं लोक रिझाये, प्रभुताके रस भीनाँ[4] । अंतरगत परिनाम न सोधे, एको[5] गरज सरी[6] ना ॥ जो तैं० ॥ २ ॥ बैठि सभामें बहु उपदेशे, आप भये परवीना । ममता डोरी तोरी नाहीं, उत्तमतैं भये हीना ॥ जो तैं० ॥ ३ ॥ द्यानत मन वच काय लायके, जिन अनुभव चित दीना। अनुभव धारा ध्यान विचारा, मंदर कलश नवीना ॥ जो तैं० ॥ ४ ॥

---

१ षट्मत । २ मार्गणा । ३ स्त्री । ४ मगन होकर । ५ एक भी । ६ सिद्ध न हुई ।

१०७ । राग—विलावल ।

ऋषभदेव जनम्यौ धन घरी ॥ टेक ॥ इन्द्र नचैं गंधर्व बजावैं, किन्नर वहु रस भरी ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ पट आभूषन पुहुप[1]मालसों, सहसवाहु सुरतरु[2] ह्वै हरी। दश अवतार स्वांग विधि पूरन, नाच्यो शक्र[3] भगति उर धरी ॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ हाथ हजार सवनिपै अपछर, उछरत नभमें चहुँदिशि फरी। करी करन अपछरी उछारत, ते सब नटैं गगनमें[5] खरी ॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ प्रगट गुपत भूपर अंवर[4]में, नाचैं सवै अमर[6] अमँरी[7]। द्यानत घर चैत्यालय कीनौं, नाभिरायजी हो लहरी ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥

१०८ ।

मानुष जनम सफल भयो आज ॥ टेक ॥ सीस सफल भयो ईस[8] नमत ही, श्रवन सफल जिनवचन समाज ॥ मानुष० ॥ १ ॥ भाल[9] सफल जु दयाल तिलकतैं, नैन सफल देखे जिनराज। जीभ सफल जिनवानि गानतैं, हाथ सफल करि पूजन आज ॥ मानुष० ॥ २ ॥ पाँय[10] सफल जिन भौन गौनतैं[11], काय सफल नाचैं वल गाज। वित्त[12] सफल जो प्रभुकौं लागै, चित्त

---

१ फूलोंकी माला। २ कल्पवृक्ष। ३ इन्द्र। ४ आकाशमें। ५ आकाशमें। ६ देव। ७ देवाङ्गना। ८ ईश्वर, अरहन्तदेव। ९ ललाट। १० पांव। ११ जानेसे। १२ द्रव्य।

सफल प्रभु ध्यान इलाज ॥ मानुष० ॥ ३ ॥ चिन्तामनि चिंतित-वर-दाई, कलपवृच्छ कलपनतैं काज । देत अचिंत अकल्प महासुख, द्यानत भक्ति गरीबनिवाज ॥ मानुष० ॥ ४ ॥

१०९ । राग—ख्याल ।

री चल वंदिये चल वंदिये, री, महावीर जिनराय ॥ पाप निकन्दिये महावीर जिनराय, वारी वारी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ विपुलाचल परवतपर आया, समवसरन बहु भाय ॥ री चलि० ॥ १ ॥ गौतमरिखँसे गनधर जाके, सेवत सुरनर पाय ॥ री चल० ॥ २ ॥ बिल्ली मूसे गाय सिंहसों, प्रीति करै मन लाय ॥ री चल० ॥ ३ ॥ भूपतिसहित चेलना रानी, अंग अंग हुलसाय ॥ री चल० ॥ ४ ॥ द्यानत प्रभुको दरसन देखैं, सुरग मुकति सुखदाय ॥ री चल० ॥ ५ ॥

११० । राग—सारंग ।

मेरे मन कब ह्वै है वैराग ॥ टेक ॥ राज समाज अकाज विचारौं, छारौं विषय कारे नाग ॥ मेरे० ॥ १ ॥ मंदिर वास उदास होयकैं, जाय बसौं वन बाग ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब यह आसा कांसा फूटै, लोभ भाव जाय भाग ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ आप समान सबै जिय जा-

१ ऋषिसरीखे ।

नौं, राग दोपकों त्याग ॥ मेरे० ॥ ४ ॥ द्यानत यह विधि जब बनि आवै, सोई घड़ी बड़भाग ॥ मेरे० ॥५॥

१११ । राग—ख्याल ।

लागा आतमरामसों नेहरा ॥ टेक ॥ ज्ञानसहित मरना भला रे, छूट जाय संसार । धिक! परो यह जीवना रे, मरना बारंबार ॥ लागा० ॥ १ ॥ साहिब साहिब मुंहतैं कहते, जानैं नाहीं कोई । जो साहिबकी जाति पिछानैं, साहिब कहिये सोई ॥ लागा० ॥ २ ॥ जो जो देखौ नैनोंसेती, सो सो विनसै जाई । देखनहारा मैं अविनाशी, परमानन्द सुभाई ॥ लागा० ॥३॥ जाकी चाह करैं सब प्रानी, सो पायो घटमाहीं । द्यानत चिन्तामनिके आये, चाह रही कछु नाहीं ॥ लागा० ॥ ४ ॥

११२ । राग—गौरी ।

सबको एक ही धरम सहाय ॥ टेक ॥ सुर नर नारक तिरयक् गतिमें, पाप महा दुखदाय ॥ सबको० ॥ १ ॥ गज हरि[1] दह अहि[2] रण गद[3] वारिधि[4], भूपति भीर पलाय । विघन उलटि आनन्द प्रगट ह्वै, दुलभ सुलभ ठहराय ॥ सबको० ॥ २ ॥ शुभतैं दूर बसत ढिग आवै, अघतैं करतैं जाय । दुखिया धर्म करत दुख नासै, सुखिया सुख अधिकाय ॥ सबको० ॥ ३ ॥ ताड़न

१ सिंह । २ सर्प । ३ बीमारी । ४ समुद्र ।

तापन छेदन कसना, कनकपरीच्छा भाय। द्यानत देव धरम गुरु आगम, परखि गहो मनलाय ॥ सबको०॥४॥

११३ । राग—गौरी ।

तुमको कैसे सुख है मीत ! ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग बहु दुख पायो, तिनहीसों अति प्रीति ॥ तुमको० ॥ १ ॥ उद्यमवान बाग[1] चलनेको, तीरथसों भयभीत । धरम कथा कथनेको मूरख, चतुर मृषा[2]-रस-रीत ॥ तुमको० ॥ २ ॥ नाट[3] विलोकनमें बहु समझौं, रंच न दरस[4]-प्रतीत। परमागम सुन ऊंघन लागौं, जागौं विकथा गीत ॥ तुमको० ॥ ३ ॥ खान पान सुनके मन हरषै, संजम सुन है ईत । द्यानत तापर चाहत होगे, शिवपद सुखित निचींत[5] ॥ तुमको० ॥ ४ ॥

११४ ।

वीर ! री पीर कासों कहिये ॥ टेक ॥ ध्रौव्य[6] अनूपम अचल मुकति गति, छांड़ि चहूँगति दुख क्यों सहिये ॥ वीर० ॥ १ ॥ चेतन अमल शरीर मलिन जड़, तासों प्रीति कहाँ क्यों चहिये । अनुभव अम्रत[7] विषय विषम फल, त्यागि सुधारसँ विष क्यों गहिये ॥ वीर० ॥ २ ॥ तिहुँ जगठाकर रतनत्रयनिधि, चाकर

---

१ बगीचेकी शैर करनेको तयार । २ झूठ । ३ नाटक । ४ जिनदर्शन । ५ निश्चिन्त । ६ नित्य, स्थिर । ७ अमृत ।

१२३

आतमज्ञान लखैं सुख होइ ॥ टेक ॥ पंचेन्द्री सुख मानत भोंदू, यामें सुखको लेश न कोइ ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसे खाज खुजावत मीठी, पीछैं दुखतैं दे रोइ। रुधिरपान करि जोंक सुखी है, सूँतत[1] वहुदुख पावै सोइ ॥ आतम० ॥ २ ॥ फरस दन्ति[2]-रस मीन-गंध अलि[3], रूप शलभ[4] मृग नाद हि लोइ। एक एक इन्द्र नितैं प्राणी, दुखिया भये गये तन खोइ ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जैसे कूकर हाड़ चचोरै, त्यों विषयी नर भोगैं[5] भोइँ ॥ द्यानत देखो राज त्यागि नृप, वन वसि सहैं परीषह जोइ ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१२४

मैं एक शुद्ध ज्ञाता, निरमलसुभावराता ॥ टेक ॥ दृग[6]ज्ञान चरन धारी, थिर चेतना हमारी ॥ मैं० ॥१॥ तिहुँ काल परसों न्यारा, निरद्वंद निरविकारा ॥ मैं० ॥ २ ॥ आनन्दकन्द चन्दा, द्यानत जगत सदंदा ॥ ॥ ३ ॥ अब चिदानन्द प्यारा, हम आपमें निहारा ॥ मैं० ॥ ४ ॥

१२५

सुन ! जैनी लोगो, ज्ञानको पंथ कठिन है ॥ टेक ॥

---

१ पिया हुआ खून खैंचकर वाहिर निकालते समय। २ हाथी। ३ भौंरा। ४ पतंग। ५ भोग। ६ दर्शन।

सब जग चाहत है विषयनिको, ज्ञानविषै अनबन है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ राज काज जग घोर तपत है, जूझ मरैं जहा रन है। सो तो राज हेय[1] करि जानैं, जो कौड़ी गाँठ न है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ कुवचन बात तनकसी ताको, सह न सकै जग जन है। सिरपर आन चलावैं आरे, दोष न करना मन है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ ऊपरकी सब थोथी बातैं, भावकी बातैं कम है। द्यानत शुद्ध भाव है जाकै, सो त्रिभुवनमें धन है ॥ सुनो० ॥ ४ ॥

१२६। राग–मलार।

सुनो जैनी लोगो! ज्ञानको पंथ सुगम है ॥ टेक ॥ टुक आतमके अनुभव करतैं, दूर होत सब तम है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ तनक ध्यान करि कठिन करम गिरि, चचंल मन उपशम है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ द्यानत नैंसुक राग दोष तज, पास न आवै जम है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥

१२७। राग–धनासरी।

कर सतसंगति रे भाई! ॥ टेक ॥ पांन परत नरपतकर सो तो, पाननिसों कर असनाई[2] ॥ कर० ॥ १ ॥ चंदन पास नींम चन्दन है, काठ चढ़यो लोह[3] तर जाई। पारस परस कुधातु कनक है, बूंद उदधि–पदवी पाई ॥ कर०॥ २ ॥ करई तूंबरि संगतिके फल, मधुर मधुर सुर

१ त्यागने योग्य। २ पत्ता पानोंकी (ताम्बूलकी) मित्रतासे राजाके हाथमें पहुंच जाते हैं। ३ लोहा।

करि गाई । विष गुन करत संग औषधके, ज्यों वच खाय मिटै वाई[1] ॥ कर० ॥ ३ ॥ दोष घटै प्रगटै गुन मनसा, निरमल ह्वै तजि चपलाई । द्यानत धन्य धन्य जिनके घट, सतसंगति सरधा आई ॥ कर० ॥ ४ ॥

१२८ । राग—धनासरी ।

जैन नाम भज भाई रे ! ॥ टेक ॥ जा दिन तेरा कोई नाहीं, ता दिन नाम सहाई रे ॥ जैन० ॥ १ ॥ अगनि नीर ह्वै शत्रु वीर[2] ह्वै, महिमा होत सवाई । दारिद जावै धन बहु आवै, जा मन नाम दुहाई रे ॥ जैन० ॥ ॥ २ ॥ सोई साध सन्त सोई धन, जिन प्रभुसों लौ लाई । सोई जती सती सो ताकी, उत्तम जात कहाई रे ॥ जैन० ॥ ३ ॥ जीव अनेक तरे सुमरनसों, गिनती गनिय न जाई । सोई नाम जपो नित द्यानत, तजि विकथा दुखदाई रे ॥ जैन० ॥ ४ ॥

१२९ । राग—गौरी ।

चेत रे ! प्रानी ! चेत रे !, तेरी आव है थोरी ॥ टेक ॥ सागरथिति धरि खिर गये, बँधे कालकी डोरी ॥ चेत० ॥ १ ॥ पाप अनेक उपायकै, माया बहु जोरी । अन्त समय सँग ना चलै, चलै पापकी बौरी[3] ॥ चेत० ॥ २ ॥ मात पिता सुत कामिनी, तू कहत है मोरी । देहकी देह तेरी नहीं जासों, प्रीति है तोरी ॥ चेत० ॥ ३ ॥

---

१ वायुरोग । २ भाई । ३ पोटरी ।

सिख सुन ले तू कान दे, हो धरमके धोरी। कहै द्यानत यह सार है, सब बातैं कोरी ॥ चेत० ॥ ४ ॥

१३०। राग—गौरी।

रे भाई! सँभाल जगजालमें काल दरहाल रे ॥ रे भाई० ॥ टेक ॥ कोड़ जोधाको जीतै छिनमें, एकलो एक हि सूर। कोड़ सूर अस धूर कर डारै, जमकी भौंह करूर ॥ रे भाई० ॥१॥ लोहमें कोट सौ कोट बनाओ, सिंह रखो चहुँओर। इंद फनिंद नरिंद चौकि दैं, नाहिं छोड़ै मृतु जोर ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ शैल जलै जस आग बलै सो, क्यों छोड़ै तिन सोय॥ देव सबै इक काल भखै है, नरमें क्या बल होय ॥ रे भाई० ॥३॥ देहधारी भये भूपर जे जे, ते खाये सब मौत। द्यानत धर्मको धार चलो शिव, मौतको करके फौत ॥ रे भाई० ॥ ४ ॥

१३१।

पायो जी सुख आतम लखकै ॥ पायो० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वरको प्रभु, सो हम देख्यो आप हरखकै ॥ पायो० ॥ १ ॥ देखनि जाननि समझनिवाला, जान्यो आपमें आप परखकै ॥ पायो० ॥२॥ द्यानत सब रस विरस लगें हैं, अनुभौ ज्ञानसुधारस चखकैं ॥ पायो०॥३॥

१३२। राग—गौरी।

सबसों छिमा छिमा कर जीव! ॥ टेक ॥ मन वच तनसों वैर भाव तज, भज समता जु सदीव ॥ सबसों०

॥ १ ॥ तपतरु उपशम जल चिर सींच्यो, तापस शिव-फल हेत । क्रोध अगनि छनमाहिं जरावै, पावै नरक-निकेत ॥ सबसौं० ॥ २ ॥ सब गुनसहित गहत रिस मनमें, गुन औगुन है जात । जैसैं प्रानदान भोजन है, सविष भये तन घात ॥ सबसौं० ॥ ३ ॥ आप समान जान घट घटमें, धर्ममूल यह वीर । द्यानत भवदुख-दाह बुझावै, ज्ञानसरोवरनीर ॥ सबसौं० ॥ ४ ॥

१३३ । राग—आसावरी ।

गहु सन्तोष सदा मन रे ! जा सम और नहीं धन रे ॥ गहु० ॥ टेक ॥ आसा कांसा भरा न कबहूं, भर देखा बहुजन रे । धन संख्यात अनन्ती तिसना, यह बानक किमि बन रे ॥ गहु० ॥ १ ॥ जे धन ध्यावैं ते नाहिं पावैं, छांड़ैं लगत चरन रे । यह ठगहारी साधुनि डारी, छरद अहारी निधन रे ॥ गहु० ॥ २ ॥ तरुकी छाया नरकी माया, घटै बढ़ै छन छन रे । द्यानत अवि-नाशी धन लागैं, जागैं त्यागैं ते धन रे ॥ गहु० ॥ ३ ॥

१३४ । राग—आसावरी ।

रे भाई ! मोह महा दुखदाता ॥ टेक ॥ वसत वि-रानी अपनी मानैं, विनसत होत असाता ॥ रे भाई० ॥ १ ॥ जास मास जिस दिन छिन विरियाँ, जाको

होसी[1] घाता। ताको राखन सकै न कोई, सुर नर नाग विख्याता ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ सब जग मरत जात नित प्रति नहिं, राग विना विललाता। वालक मरैं करै दुख धाय न, रुदन करै बहु माता ॥ रे भाई० ॥३॥ मूसे[2] हनैं विलाव दुखी नहिं, मुरग हनैं रिसैं[3] खाता (?)। द्यानत मोह-मूल ममताको, नास करै सो ज्ञाता ॥ रे भाई० ॥४॥

१३५। राग—आसावरी।

सोग न कीजे वावरे! मरें पीतम[4] लोग ॥ सोग० ॥ टेक ॥ जगत जीव जलवुदवुदा, नदि नाव सँजोग ॥ सोग० ॥ १ ॥ आदि अन्तको संग नहिं, यह मिलन वियोग। कई वार सवसों भयो, सनवंध मनोग ॥ सोग० ॥ २ ॥ कोट वरप लौं रोइये, न मिलै वह जोग। देखैं जानैं सव सुनैं, यह तन जमभोग ॥ सोग० ॥ ३ ॥ हरिहर ब्रह्मासे खये, तू किनमें टोग (?)। द्यानत भज भगवन्त जो, विनसै यह रोग ॥ सोग० ॥ ४ ॥

१३६। राग—रामकली।

रे जिया! सील सदा दिढ़ राखि हिये ॥ टेक ॥ जाप जपत तप तपत विविध विधि, सील विना धिक्कार जिये ॥ रे जि० ॥ १ ॥ सील सहित दिन एक जीवनो, सेव करैं सुर अरघ दिये। कोटि पूर्व थिति सील विहीना, नारकी दैं दुख वज्र लिये ॥ रे जि० ॥ २ ॥ ले ब्रत भंग

---

१ होगा। २ चूहेके। ३ क्रोध। ४ प्रियजन।

करत जे प्रानी, अभिमानी मदपान पिये । आपद पावैं विघन वढ़ावैं, उर नहिं कछु लेखा[1]न किये ॥ रे जि० ॥ ३ ॥ सील समान न को[2] हित जगमें, अहित न मैथुन सम गिनिये । द्यानत रतन जतनसों गहिये, भवदुख दारिद-गन दहिये ॥ रे जि० ॥ ४ ॥

१३७ । राग—आसावरी ।

श्रीजिनधर्म सदा जयवन्त ॥ श्री० ॥ टेक ॥ तीन लोक तिहुँ कालनिमाहीं, जाको नाहीं आदि न अन्त ॥ श्री० ॥ १ ॥ सुगुन छियालिस दोप निवारैं, तारन तरन देव अरहंत । गुरु निरग्रंथ धरम करुनाँ[3]मय, उपजैं त्रेसठ पुरुष महंत ॥ श्री० ॥ २ ॥ रतनत्रय दशलच्छन सोलह,-कारन साध सराँ[4]वक सन्त । छहौं दरव नव तत्त्व सरधकै, सुरग मुकतिके सुख विलसन्त ॥ श्री० ॥ ३ ॥ नरक निगोद भम्यो वहु प्रानी, जान्यो नाहिं धरम-विरतंत । द्यानत भेदज्ञान सरधातैं, पायो दरव अनादि अनन्त ॥ श्री० ॥ ४ ॥

१३८ ।

जब वानी खिरी महावीरकी तव, आनँद भयो अ-पार ॥ जव० ॥ टेक ॥ सव प्रानी मन ऊपजी हो, धिक धिक यह संसार ॥ जव० ॥ १ ॥ वहुतनि सम-कित आदर्यो हो, श्रावक भये अनेक । घर तजकैं वहु

१ हिसाब । २ कोई दूसरा । ३ दयामयी । ४ श्रावक ।

वन गये हो, हिरदै धस्यो विवेक ॥ जब० ॥ २ ॥ केई भावैं भावना हो, केई गहैं तप घोर । केई जपैं प्रभु नामको ज्यों, भाजैं कर्म कठोर ॥ जब० ॥ ३ ॥ बहुतक तप करि शिव गये हो, बहुत गये सुरलोक । द्यानत सो वानी सदा ही, जयवन्ती जग होय ॥ जब० ॥ ४ ॥

१३९ । राग—ख्याल ।

ये कोई निपट अनारी, देख्या आतमराम ॥ ये० ॥ टेक ॥ जिनसों मिलना फेरि बिछुरना, तिनसों कैसी यारी । जिन कामोंमें दुख पावै है, तिनसों प्रीति करारी ॥ ये० ॥ १ ॥ बाहिर चतुर मूढ़ता घरमें, लाज सबै परिहारी । ठगसों नेह वैर साधुनिसों[1], ये बातैं विसतारी ॥ ये० ॥ २ ॥ सिंह डाढ़ भीतर सुख मानैं, अक्कल सबै विसारी । जा तरु आग लगी चारौं दिश, बैठि रह्यो तिहँ डारी[2] ॥ ये० ॥ ३ ॥ हाड़ मांस लोहूकी थैली, तामें चेतनधारी । द्यानत तीनलोकको ठाकुर, क्यों हो रह्यो भिखारी ॥ ये० ॥ ४ ॥

१४० । राग—बिलावल ।

आतम काज सँवारिये, तजि विषय किलोलैं ॥ आतम० ॥ टेक ॥ तुम तो चतुर सुजान हो, क्यों करत अलोलैं ॥ आतम० ॥ १ ॥ सुख दुख आपद सम्पदा, ये

---

१ साधु (सज्जन) पुरुषोंसे. २ डाली, शाखा.

न आवै गोधन धाम ॥ अब० ॥ १ ॥ जिहँ जान्या विन दुख बहु सह्यो, सो गुरुसंगति सहजैं लह्यो ॥ अब० ॥ २ ॥ किये अज्ञानमाहिं जे कर्म, सब नाशे प्रगट्यो निज धर्म ॥ अब० ॥ ३ ॥ जास न रूप गंध रस फास, देख्यो करि अनुभौ अभ्यास ॥ अब० ॥ ४ ॥ जो परमातम सो ममरूप, जो मम सो परमातम भूप ॥ अब० ॥ ५ ॥ सर्व जीव हैं मोहि समान, मेरे वैर नहीं तिन-मान ॥ अब० ॥ ६ ॥ जाको ढूंढ़ै तीनौं लोक, सो मम घटमें है गुण थोक ॥ अब० ॥ ७ ॥ जो करना था सो कर लिया, द्यानत निज गह पर तज दिया ॥ अब० ॥ ८ ॥

१५२ । राग—धमाल ।

चेतन प्राणी चेतिये हो, अहो भवि प्रानी चेतिये हो, छिन छिन छीजत आव ॥ टेक ॥ घड़ी घड़ी घड़ियाल रटत है, कर निज हित अब दाव ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ १ ॥ जो छिन विषय भोगमें खोवत, सो छिन भजि जिन नाम । वातैं नरकादिक दुख पैहै, यातैं सुख अभिराम ॥ चेतन० ॥ २ ॥ विषय भुजंगमके डसे हो, रुले बहुत संसार । जिन्हैं विषय व्यापै नहीं हो, तिनको जीवन सार ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चार गतिनिमें दुर्लभ नर भव, नर विन मुकति न होय । सो तैं पायो भाग उदय हो, विषयनि—सँग मति खोय ॥ चेतन०

॥ ४ ॥ तन धन लाज कुटुँबके कारन, मूढ़ करत है पाप। इन ठगियोंसे ठगायकै हो, पावै वहु दुख आप ॥ चेतन० ॥ ५ ॥ जिनको तू अपने कहै हो, सो तो तेरे नाहिं। कै तो तू इनकौं तजै हो, कै ये तुझे तज जाहिं ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पलक एककी सुध नही हो, सिरपर गाजै काल। तू निचिन्त क्यों वावरे हो, छांड़ि दे सब भ्रमजाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ भजि भगवन्त महन्तको हो, जीवन-प्राणअधार। जो सुख चाहै आपको हो, द्यानत कहै पुकार ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

१५३। राग—विलावल।

भजि मन प्रभु श्रीनेमिको, तजी राजुल नारी ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखतैं, भाजै दुख भारी ॥ भजि० ॥ १ ॥ ज्ञान भयो जिनदेवको, इन्द्र अवधि विचारी। धनपतिने समोसरनकी, कीनी विधि सारी ॥ भजि० ॥ ॥ २ ॥ तीन कोट चहुं थंभश्री, देखैं दुखहारी। द्वादश कोटे वीचमें, वेदी विस्तारी ॥ भजि० ॥३॥ तामैं सोहैं नेमिजी, छ्यालिस गुणधारी। जाकी पूजा इन्द्रने, करी अष्टप्रकारी ॥ भजि० ॥ ४ ॥ सकल देव नर जिहिं भजैं, वानी उच्चारी। जाको जस जम्पंत मिलै, सम्पत अविकारी ॥ भजि० ॥ ५ ॥ जाकी वानी सुनि भये, केवल दुतिकारी। गनधर मुनि श्रावक सुधी, ममतावुधि डारी

१ गानेसे।

॥ भजि० ॥ ६ ॥ राग दोष मद मोह भय, जिन तिन्हा टारी । लोक अलोक त्रिकालकी, परजाय निहारी ॥ भजि० ॥ ७ ॥ ताको मन वच कायसों, वन्दना हमारी। द्यानत ऐसे स्वामिकी, जइये बलिहारी ॥ भजि० ॥ ८ ॥

१५४ ।

प्राणी लाल ! छांड़ो मन चपलाई ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ देखो तन्दुलमच्छ[1] जु मनतैं, लहै नरक दुखदाई ॥ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ धारै मौन दया जिनपूजा, काया बहुत तपाई । मनको शल्य[2] गयो नहिं जब लौं, करनी सकल गंवाई ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ बाहूबल मुनि ज्ञान न उपज्यो, मनकी खुटक न जाई । सुनतैं मान तज्यो मनको तब, केवलजोति जगाई ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ प्रसनचंद रिषि नरक जु जाते, मन फेरत शिव पाई । तनतैं वचन वचनतैं मनको, पाप कह्यो अधिकाई ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ देहिं दान गहि शील फिरैं बन, परनिन्दा न सुहाई । वेद पढ़ैं निरग्रंथ रहैं जिय, ध्यान बिना न बड़ाई ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ त्याग फरस रस गंध वरण सुर, मन इनसों लौ लाई । घर ही कोस पचास भ्रमत ज्यों, तेलीको वृषै[3] भाई ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ मन कारण है सब कारजको, विकलप बंध बढ़ाई । निरविकलप मन मोक्ष करत है, सूधी बात बताई ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ द्यानत

१ महामच्छके कर्णमें रहनेवाला मच्छ । २ शल्य खटक । ३ बैल

जे निज मन वश करि हैं, तिनको शिवसुख थाई। बार बार कहुं चेत संवेरो, फिर पाछैं पछताई॥ प्राणी०॥८॥

१५५। राग–काफी।

भाई! ज्ञान विना दुख पाया रे॥ भाई०॥ टेक॥ भव दश आठ उस्वास स्वासमें, साधारन लपटाया रे॥ भाई०॥ १॥ काल अनन्त यहां तोहि वीते, जब भई मंद कषाया रे। तब तू तिस निगोद सिंधूतैं, थावर होय निसारा रे॥ भाई०॥ २॥ क्रम क्रम निकस भयो विकलत्रय, सो दुख जात न गाया रे। भूख प्यास परवश सहि पशुगति, वार अनेक विकाया रे॥ भाई०॥ ३॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, पुतरी अगन जलाया रे। सीत तपत दुरगंध रोग दुख, जानैं श्रीजिनराया रे॥ भाई०॥ ४॥ भ्रमत भ्रमत संसार महावन, कबहूँ देव कहाया रे। लखि परविभौ सह्यौ दुख भारी, मरन समय विललाया रे॥ भाई०॥ ५॥ पाप नरक पशु पुन्य सुरग वसि, काल अनन्त गमाया रे। पाप पुन्य जब भये बराबर, तब कहुँ नरभव पाया रे॥ ॥ भाई०॥ ६॥ नीच भयो फिर गरभ खयो फिर, जनमत काल सताया रे। तरुणपनै तू धरम न चेतै, तन-धन-सुत लौ लाया रे॥ भाई०॥ ७॥ दरबलिंग

१ जल्दी। २ निकला।

धरि धरि वहु मरि तू, फिरि फिरि जग भमि आया रे। द्यानत सरधाजुत गहि मुनिव्रत, अमर होय तजि काया रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५६ । राग—काफी ।

भाई! कहा देख गरवाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ गहि अनन्त भव तैं दुख पायो, सो नहिं जात वखाना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ माता रुधिर पिताके वीरज, तातैं तू उपजाना रे । गरभ वास नवमास सहे दुख, तल सिर पांव उचाना रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ मात अहार चिगल मुख निगल्यो, सो तू असन गहाना रे। जंती तार सुनार निकालै, सो दुख जनम सहाना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ आठ पहर तन मलि मलि धोयो, पोष्यो रैन विहाना रे। सो शरीर तेरे संग चल्यो नाहिं, खिनमें खाक समाना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जनमत नारी, वाढ़त भोजन, समरथ दरव नसाना रे । सो सुत तू अपनो कर जानै, अन्त जलावै प्राना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ देखत चित्त मिलाप हरै धन, मैथुन प्राण पलाना रे । सो नारी तेरी है कैसे, मूवें प्रेत प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ पांच चोर तेरे अन्दर पैठे, तैं ठाना मित्राना रे । खाय पीय धन ज्ञान लूटके, दोष तेरे सिर ठाना रे ॥ भाई० ॥७॥ देव धरम गुरु रतन अमोलक, कर अन्तर सरधाना रे।

द्यानत ब्रह्मज्ञान अनुभव करि, जो चाहै कल्याना रे।
॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५७। राग—काफी।

कर मन! निज-आतम-चिंतौन ॥ कर० ॥ टेक ॥
जिहि विनु जीव भम्यो जग-जौन ॥ कर० ॥ १ ॥
आतममगन परम जे साधि, ते ही त्यागत करम उपाधि ॥ कर० ॥ २ ॥ गहि व्रत शील करत तन शोख, ज्ञान विना नहिं पावत मोख ॥ कर० ॥ ३ ॥ जिहितैं पद अरहन्त नरेश, राम काम हरि इंद फणेश ॥ कर० ॥ ४ ॥ मनवांछित फल जिहितैं होय, जिहिकी पटतर अवर न कोय ॥ कर० ॥ ५ ॥ तिहूँ लोक तिहुँकाल-मँझार, वरन्यो आतमअनुभव सार ॥ कर० ॥ ६ ॥ देव धरम गुरु अनुभव ज्ञान, मुकति नीव पहिली सो[1]पांन ॥ कर० ॥ ७ ॥ सो जानैं छिन व्है शिवराय, द्यानत सो गहि मन वच काय ॥ कर० ॥ ८ ॥

१५८। राग—काफी।

भाई! जानो पुद्गल न्यारा रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥
क्षीर नीर जड़ चेतन जानो, धातु पखान विचारा रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ जीव करमको एक जानतो, भाख्यो श्रीगणधारा[2] रे। इस संसार दुःखसागरमें, तोहि भ्रमावनहारा रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ ग्यारह अंग पढ़े सब

१ पैड़ी। २ गणधरने।

पूरव, भेद-ज्ञान न चितारा रे । कहा भयो सुवटाकी[1] नाईं, रामरूप न निहारा रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ भवि उपदेश मुकत पहुँचाये, आप रहे संसारा रे । ज्यों मलाह[2] पर पार उतारै, आप वारका वारा रे ॥ भाई० ॥४॥ जिनके वचन ज्ञान परगासैं, हिरदै मोह अपारा रे । ज्यों मशालची और दिखावै, आप जात अँधियारा रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ वात सुनैं पातक मन नासै, अपना मैल न झारा रे । वांदी[3] परपद मलि मलि धोवै, अपनी सुधि न सँभारा रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ ताको कहा इलाज कीजिये, बूड़ा अम्बुधि धारा रे । जाप जप्यो बहु ताप तप्यो पर, कारज एक न सारा रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ तेरे घटअन्तर चिनमूरति, चेतनपदउजियारा रे । ताहि लखै तासौं वनि आवै, द्यानत लहि भव पारा रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५९ । राग—सोरठ ।

भजो आतमदेव, रे जिय ! भजो आतमदेव ॥ रे जिय० ॥ टेक ॥ लहो शिवपद एव ॥ रे जिय० ॥ ॥ १ ॥ असंख्यात प्रदेश जाके, ज्ञान दरस अनन्त । सुख अनन्त अनन्त वीरज, शुद्ध सिद्ध महन्त ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ अमल अचलातुल अनाकुल, अमन अवच अदेह । अजर अमर अखय अभय प्रभु, रहित-

१ तोतेके समान । २ मल्लाह । ३ दासी ।

विकलप नेह॥ रे जिय० ॥३॥ क्रोध मद वल लोभ न्यारो, वंध मोख विहीन। राग दोष विमोह नाहीं, चेतना गुणलीन ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥ फरस रस सुर गंध सपरस, नाहिं जामें होय। लिंग मारगना नहीं, गुणथान नाहीं कोय ॥ रे जिय० ॥ ५ ॥ ज्ञान दर्शन चरनरूपी, भेद सो व्योहार। करम करना क्रिया निहचै, सो अभेद विचार॥ रे जिय०॥६॥ आप जाने आप करके, आपमाहीं आप। यही व्योरा मिट गया तव, कहा पुन्यरु पाप॥ रे जिय० ॥ ७ ॥ है कहै है नहीं नाहीं, स्यादवाद प्रमान। शुद्ध अनुभव समय द्यानत, करौ अम्रतपान॥ रे जिय० ॥८॥

१६० । राग—आसावरी ।

भाई ब्रह्मज्ञान नहिं जाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ सव संसार दुःख सागरमें, जामन मरन कराना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ तीन लोकके सव पुद्गल तैं, निगल निगल उगलाना रे। छँर्दि डारके फिर तू चाखै, उपजै तोहि न ग्लाना रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ आठ प्रदेश विना तिहुँ जगमें, रहा न कोइ ठिकाना रे। उपजा मरा जहां तू नाहीं, सो जानै भगवाना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ भव भवके नख केस नालका, कीजे जो इक ठाना रे। होंय अधिक ते गिरि सुमेरुतैं, भाखा वेद पुराना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जननी थँन-पय जनम जनमको, जो तैं कीना पाना रे। सो तो

---

१ कै वमन। २ स्तनका दूध।

अधिक सकल सागरतैं, अजहूं नाहिं अघाना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ तोहि मरण जे माता रोईं, आसूँ जल सगलाना रे। अधिक होय सब सागरसेती, अजहूँ त्रास न आना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ गरभ जनम दुख बाल विरध दुख, वार अनन्त सहाना रे। दरवलिंग धरि जे तन त्यागे, तिनको नाहिं प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ विन समभाव सहे दुख एते, अजहूँ चेत अयाना रे। ज्ञान-सुधारस पी लहि द्यानत, अजर अमरपद थाना रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१६१ । राग—धमाल ।

साधो ! छांड़ो विषय विकारी । जातैं तोहि महा दुखकारी ॥ साधो० ॥ टेक ॥ जो जैनधर्मको ध्यावै, सो आतमीक सुख पावै ॥ साधो० ॥ १ ॥ गज फरस-विषैं दुख पाया, रस मीन गंध अलि[1] गाया । लखि दीप शलभ[2] हित कीना, मृग नाद सुनत जिय दीना ॥ साधो० ॥ २ ॥ ये एक एक दुखदाई, तू पंच रमत है भाई । यह कौनें, सीख बताई, तुमरे मन कैसैं आई ॥ साधो० ॥ ३ ॥ इनमाहिं लोभ अधिकाई, यह लोभ कुगतिको भाई । सो कुगतिमाहिं दुख भारी, तू त्याग विषय मतिधारी ॥ साधो० ॥ ४ ॥ ये सेवत सुखसे लागैं, फिर अन्त प्राणको त्यागैं । तातैं ये विषफल

१ भ्रमर । २ पतंग ।

कहिये, तिनको कैसे कर गहिये ॥ साधो० ॥ ५ ॥ तबलौं विषया रस भावै, जबलौं अनुभव नहिं आवै । जिन अमृत पान ना कीना, तिन और रसन चित दीना ॥ साधो० ॥ ६ ॥ अब बहुत कहां लौं कहिए, कारज कहि चुप ह्वै रहिये । ये लाख बातकी एक, मत गहो विषयकी टेक ॥ साधो० ॥ ७ ॥ जो तजै विषयकी आसा, द्यानत पावै शिववासा । यह सतगुरु सीख बताई, काहू विरले जिय आई ॥ साधो० ॥ ८ ॥

१६२ । राग—आसावरी ।

हमको कैसें शिवसुख होई ॥ हमको० ॥ टेक ॥ जे जे मुकत जानके कारण, तिनमेंको नहि कोई ॥ हमको० ॥ १ ॥ मुनिवरको हम दान न दीना, नहिं पूज्यो जिनराई । पंच परम पद वन्दे नाहीं, तपविधि बन नहिं आई ॥ हमको० ॥ २ ॥ आरत रुद्र कुध्यान न त्यागे, धरम शुकल नहिं ध्याई । आसन मार करी आसा दिढ़, ऐसे काम कमाई ॥ हमको० ॥ ३ ॥ विषय कषाय विनाश न हूआ, मनको पंगु न कीना । मन वच काय जोग थिर करकैं, आतमतत्त्व न चीना ॥ हमको० ॥ ४ ॥ मुनि श्रावकको धरम न धार्‌यो, समता मन नहिं आनी । शुभ करनी करि फल अभिलाष्यो, ममतानुध अधिकानी ॥ हमको० ॥ ५ ॥ रामा रामा धन धन कारन, पाप अनेक उपायो । तब हू तिसना भई न पूरन,

॥ जैन० ॥ ७ ॥ घातैं घातैं जीवको, रख लेहु उबार । द्यानत धर्म न भूलिये, संसार असार ॥ जैन० ॥ ८ ॥

१६८ । राग—आसावरी जोगिया ।

ज्ञानी ऐसो ज्ञान विचारै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ राज सम्पदा भोग भोगवै, वंदीखाना धारै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ धन जोबन परिवार आपतैं, ओछी ओर निहारै । दान शील तप भाव आपतैं, ऊंचेमाहिं चितारै ॥ ज्ञानी० ॥ ॥ २ ॥ दुख आये धीरज धर मनमें, सुख वैराग सँभारै । आतम दोष देखि नित झूरै, गुन लखि गरव विडारै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ आप बड़ाई परकी निन्दा, मुखतैं नाहिं उचारै । आप दोष परगुन मुख भाषै, मनतैं शल्य निवारै ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ परमारथ विधि तीन जोगसौं, हिरदै हरष विथारै । और काम न करै जु करै तो, जोग एक दो हारै ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥ गई वस्तुको सोचै नाहीं, आगमचिन्ता[1] जारै । वर्तमान वर्तै विवेकसौं, ममता बुद्धि विसारै ॥ ज्ञानी० ॥ ६ ॥ बालपने विद्या अभ्यासै, जोवन तप विस्तारै । वृद्धपने सन्यास लेयकै, आतम काज सँभारै ॥ ज्ञानी० ॥ ७ ॥ छहों दरब नव तत्त्वमाहिंतैं, चेतन सार निकारै । द्यानत मगन सदा तिसमाहीं, आप तरै पर तारै ॥ ज्ञानी० ॥ ८ ॥

---

१ आगामी-भविष्यकी चिन्ता ।

चेतन० ॥ टेक ॥ ऐसो नरभव पायकैं, काहे विषया लवलाई ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नाहीं तुमरी लाइकी, जोबन धन देखत जाई। कीजे शुभ तप त्यागकै, द्यानत हूजे अकषाई ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९६।

नेमिजी तो केवलज्ञानी, ताहीको ध्याऊं ॥ नेमिजी० ॥ टेक ॥ अमल अखंडित चेतनमंडित, परमपदारथ पाऊं ॥ नेमिजी० ॥ १ ॥ अचल अबाधित निज गुण छाजत, वचनमें कैसे बताऊं। द्यानत ध्याइये शिवपुर जाइये, बहुरि न जगमें आऊं ॥ नेमि० ॥ २ ॥

१९७।

चेतनजी! तुम जोरत हो धन, सो धन चलत नहीं तुम लार ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ जाको आप जान पोषत हो, सो तन जलकै ह्वै है छार ॥ चेतन० ॥ १ ॥ विषय भोगके सुख मानत हो, ताको फल है दुःख अपार। यह संसार वृक्ष सेंमरको, मान कह्यो हौं कहत पुकार ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९८।

प्राणी! तुम तो आप सुजान हो, अब जी सुजान हो ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ अशुचि अचेत विनश्वर रूपी,

---

१ योग्यता। २ सेमर वृक्षके फूल देखनेमें सुन्दर होते हैं, परन्तु उनमें जो फल लगते हैं, वे निस्सार होते हैं।

पुद्गल तुमतैं आन हो । चेतन पावन अखय अरूपी, आतमको पहिचान हो ॥ प्राणी० ॥१॥ नाव धरेकी लाज निवाहो, इतनी विनती मान हो। भव भव दुखको जल दे द्यानत, मित्र! लहो शिवथान हो ॥ प्राणी० ॥ २ ॥

१९९।

आपमें आप लगा जी सु हौं तो ॥ आप० ॥ टेक ॥ सुपनेका सुख दुख किसके, सुख दुख किसके, मैं तो अनुभवमाहिं जगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ १ ॥ पुद्गल तो ममरूप नहीं, ममरूप नहीं, जैसेका तैसा सगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ २ ॥ द्यानत मैं चेतन वे जड़, वे जड़ हैं, जड़सेती पगा जी, सु हौं तो ॥ आप० ॥ ३ ॥

२००।

वीतत ये दिन नीके, हमको ॥ वीतत० ॥ टेक ॥ भिन्न दरब तत्वनितैं धारे, चेतन गुण हैं जीके ॥ वीतत० ॥ १ ॥ आप सुभाव आपमैं जान्यो, सोइ धर्म है टीके ॥ वीतत० ॥ २ ॥ द्यानत निज अनुभव रस चाख्यो, पररस लागत फीके ॥ वीतत० ॥ ३ ॥

२०१।

कौन काम अब मैंने कीनों, लीनों सुर अवतार हो ॥ कौन० ॥टेक॥ गृह तजि गहे महाव्रत शिवहित, विफल फल्यो आचार हो ॥ कौन० ॥१॥ संयम शील ध्यान तप

खय भयो, अव्रत विषय दुखकार हो । द्यानत कव यह थिति पूरी है, लहों मुकतपद सार हो ॥ कौन० ॥२॥

२०२ ।

रे ! मन गाय लै, मन गाय लै, श्रीजिनराय ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ भवदुख चूरैं आनंद पूरैं, मंगलके समुदाय ॥ रे मन० ॥ १ ॥ सबके स्वामी अन्तरजामी, सेवत सुरपति पाय । कर ले पूजा और न दूजा, द्यानत मन-वच-काय ॥ रे मन० ॥ २ ॥

२०३ । राग—प्रभाती ।

देखे जिनराज आज, राजऋद्धि पाई ॥ देखे० ॥ टेक ॥ पहुपवृष्टि महा इष्ट, देवदुंदुभी सुमिष्ट, शोक करै भ्रष्ट सो, अशोकतरु बड़ाई ॥ देखे० ॥ १ ॥ सिंहासन झलमलात, तीन छत्र चित सुहात, चमर फरहरात मनो, भगति अति बढ़ाई ॥ देखे० ॥ २ ॥ द्यानत भामण्डलमें, दीसैं परजाय सात, बानी तिहुँकाल झरै, सुरशिवसुखदाई ॥ देखे० ॥ ३ ॥

२०४ ।

साधजीने बानी तनिक सुनाई ॥ साधजी० ॥ टेक ॥ गौतम आदि महा मिथ्याती, सरधा निहचै आई ॥ साधजी० ॥ १ ॥ नृप विभूति छयवान विचारी, बारह भावन भाई ॥ साधजी० ॥ २ ॥ द्यानत हीन शकति हू देखौ, श्रावक पदवी पाई ॥ साधजी० ॥ ३ ॥

२०५।

वे प्राणी! सुज्ञानी, जान जान जिनवानी ॥ वे० ॥ ॥ टेक ॥ चन्द सूर हू दूर करैं नाहिं, अन्तरतमकी हानी ॥ वे० ॥ १ ॥ पच्छ सकल नय भच्छ करत है, स्याद्-वादमें सानी ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीनभवन-मन्दिरमें, दीवट एक वखानी ॥ वे० ॥ ३ ॥

२०६।

लाग रह्यो मन चेतनसों जी ॥ लाग० ॥ टेक ॥ सेवक सेवसेव सेवक मिल, सेवा कौंन करै पनसों जी ॥ लाग० ॥ १ ॥ बात सुधा पी वम्यो विषय विष, क्यों कर लागि सकै तनसौं जी ॥ लाग० ॥२॥ द्यानत आप-आप निरविकलप, कारज कवन भवन नियसों जी ॥ लाग० ॥ ३ ॥

२०७।

हम आये हैं जिनभूप!, तेरे दरसनको ॥ हम० ॥ टेक ॥ निकसे घर आरतिकूप, तुम पद परसनको ॥ हम० ॥ १ ॥ वैननिसों सुगुन निरूप, चाहैं दरसनकों ॥ हम० ॥ २ ॥ द्यानत ध्यावै मन रूप, आनँद वरसन को ॥ हम० ॥ ३ ॥

२०८।

तुम तार करुनाधार स्वामी! आदिदेव निरंजनो ॥ ॥ तुम० ॥ टेक ॥ सार जग आधार नामी, भविक जन-

मनरंजनो ॥ तुम० ॥ १ ॥ निराकार जंमी[1] अकामी, अमल देह अमंजनो ॥ तुम० ॥ २ ॥ करौ द्यानत मुकतिगामी, सकल भव-भय-भंजनो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

२०९ ।

जिनवानी प्रानी! जान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ छहों दरव परजाय गुन सरव, मन नीके सरधान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ १ ॥ देव धरम गुरु निहचै धर उर, पूजा दान प्रमान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ द्यानत जान्यो जैन वखान्यो, ॐ अक्षर मन आन लै रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

२१० । राग—ललित ।

ये दिन आछे लहे जी लहे जी ॥ ये० ॥ टेक ॥ देव धरम गुरूकी सरधा करि, मोह मिथ्यात दहे जी दहे जी ॥ ये० ॥ १ ॥ प्रभु पूजे सुने आगमको, सतसंगतिमाहिं रहे जी रहे जी ॥ ये० ॥ २ ॥ द्यानत अनुभव ज्ञानकला कछु, संजम भाव गहे जी गहे जी ॥ ये० ॥ ३ ॥

२११ ।

इक अरज सुनो साहिब मेरी ॥ इक० ॥ टेक ॥ चेतन एक बहुत जड़ घेरयो, दई आपदा बहुतेरी ॥ ॥ इक० ॥ १ ॥ हम तुम एक दोय इन कीने, विन कारन वेरी गेरी ॥ इक० ॥ २ ॥ द्यानत तुम तिहुँ ज-

१ यमी यावज्जीवत्यागी ।

गके राजा, करो जु कछू खातिर मेरी ॥ इक० ॥ ३ ॥

२१२ ।

जिन साहिब मेरे हो, निबाहिये दासको ॥ जिन० ॥ टेक ॥ मोह महातम घेर रह्यो है, कीजिये ज्ञान प्रकासको ॥ जिन० ॥ १ ॥ लोभरोगके वैद प्रभूजी, औषध द्यो गर्द नासको ॥ जिन० ॥ २ ॥ द्यानत क्रोध-की आग बुझावो, बरस छिमा जलरासको ॥ जिन० ॥ ॥ ३ ॥

२१३ ।

चेतन ! मान लै बात हमारी ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ पुद्गल जीव जीव पुद्गल नहिं, दोनोंकी विधि न्यारी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ चहुँगतिरूप विभाव दशा है, मोख-माहिं अविकारी । द्यानत दरवित सिद्ध विराजै, सोहं जपि सुखकारी ॥ चेतन० ॥ २ ॥

२१४ ।

निज जतन करो गुन-रतननिको, पंचेन्द्रीविषय सभी तसकर ॥ निज० ॥ टेक ॥ सत्य कोट खाई करुनामय, बाग विराग छिमा भुवि भर ॥ निज० ॥ १ ॥ जीव भूप तन नगर बसै है, तहँ कुतवाल धरमको कर ॥ ॥ निज० ॥ २ ॥ द्यानत जब भंडार न जावै, तब सुख पावै साहु अमर ॥ निज० ॥ ३ ॥

---

१ बीमारी ।

२१५।

आतम जाना, मैं जाना ज्ञानसरूप ॥ आतम० ॥ टेक ॥ पुद्गल धर्म अधर्म गगन जंम, सब जड़ मैं चिद्रूप ॥ आतम० ॥ १ ॥ दरव भाव नोकर्म नियारे, न्यारो आप अनूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ द्यानत पर-परनति कब विनसै, तब सुख विलसै भूप ॥ आतम० ॥ ३ ॥

२१६।

सांचे चन्द्रप्रभू सुखदाय ॥ सांचे० ॥ टेक ॥ भूमि सेत अम्रतवरषाकरि, चंद नामतैं शोभा पाय ॥ सांचे० ॥ १ ॥ नर वरदाई कौन वड़ाई, पशुगन तुरत किये सुरराय ॥ सांचे० ॥ २ ॥ द्यानत चन्द असंखनिके प्रभु, सारेथ नाम जपों मन लाय ॥ सांचे० ॥ ३ ॥

२१७।

ए मान ये मन कीजिये भज प्रभु तज सब वात हो॥ ए मन० ॥ टेक॥ मुख दरसत सुख वरसत प्रानी, विघन विमुख है जात हो ॥ ए मन० ॥ १ ॥ सार निहार यही शुभ गतिमें, छह मत मानै ख्यात हो ॥ ॥ ए मन० ॥ २ ॥ द्यानत जानत स्वामि नाम धन, जस गावैं उठि प्रात हो ॥ ए मन० ॥ ३ ॥

२१८।

सो हां दीव (सोभा देवें ?) साधु तेरी वातड़ियां॥

---

१ कालद्रव्य। २ यथा नाम तथा गुण।

पिय० ॥ टेक ॥ व्याहन आये पशु छुटकाये, तजि रथ जन पुर गाऊं॥ पिय० ॥ १ ॥ मैं सिंगारी वे अविकारी, क्यों नभं मुठियँ समाऊं ॥ पिय० ॥ २ ॥ द्यानत जोगनि है विरमाऊं, कृपा करैं निज ठाऊं ॥ पिय० ॥ ३ ॥

२३९ ।

री मा ! नेमि गये किंह ठाऊं ॥ री मा० ॥ टेक ॥ दिल मेरा कित हू लगता नाहिं, ढूंढ़ौ सब पुर गाऊं ॥ री मा० ॥ १ ॥ भूषण वसन कुसुम न सुहावें, कहा करूं कित जाऊं ॥ री मा० ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, लागि रहौं प्रभु पाऊं ॥ री मा० ॥ ३ ॥

२४० ।

एरी सखी ! नेमिजीको मोहि मिलावो ॥ एरी० ॥ टेक ॥ व्याहन आये फिर कित धाये, ढूंढ़ि खबर किन लावो ॥ एरी० ॥ १ ॥ चोवा चन्दन अतर अरगजा, काहेको देह लगावो ॥ एरी० ॥ २ ॥ द्यानत प्रान वसैं पियके ढिग, प्रानके नाथ दिखावो॥एरी०॥३॥

२४१ ।

मूरतिपर वारी रे नेमि जिनिंद ॥ मूरति० ॥ टेक ॥ छपन कोटि यादवकुलमंडन, खंडन कामनरिंद ॥ मूरति० ॥ १ ॥ जाको जस सुरनर सब गावैं, ध्यावैं

---

१ ग्राम । २ आकाश । ३ मुट्ठीमें । ४ एक प्रतिमें 'नीमा' और एकमें 'नामा' पाठ है ।

ध्यान मुनिंद ॥ मूरति० ॥ २ ॥ द्यानत राजुल-प्रानन-प्यारे, ज्ञान-सुधाकर-इंद ॥ मूरति० ॥ ३ ॥

२४२ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ खग मृग जीवन बंध छुड़ाये, मैं दुखिया निरधार ॥ अब० ॥ १ ॥ मात तात तुम नाथ साथ दी, और कौन रखवार । द्यानत दीनदयाल दया करि, जगतैं लेहु निकार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४३ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ चहुगँत चौरासी लख जौंनी, दुखको वार न पार ॥ अब० ॥ १ ॥ करम रोग तुम वैद अकारन, औषध बैन-उचार । द्यानत तुम पद-यंत्र धारधर, भव-ग्रीषम-तप-हार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४४ । राग—परज ।

नेमि ! मोहि आरति तेरी हो ॥ नेमि० ॥ टेक ॥ पशू छुड़ाये हम दुख पाये, रीत अनेरी[1] हो ॥ नेमि० ॥ १ ॥ जो जानत हे[2] जोग धरेंगे, मैं क्यों घेरी हो । द्यानत हम हू संग लीजिये, विनती मेरी हो ॥ नेमि० ॥ २ ॥

---

१ अनोखी । २ थे ।

२४५ ।

मोहि तारि लै पारस स्वामी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ पारस परस कुधातु[1] कनक है, भयो नाम तैं नामी ॥ मोहि० ॥ १ ॥ पदमावति धरनिंदँ रिधि तुमतैं, जरत नाग जुग पामी । तुम संकटहर प्रगट सबनिमें, कर द्यानत शिवगामी ॥ मोहि० ॥ २ ॥

२४६ ।

दियैं दान महा सुख पावै ॥ दिये० ॥ टेक ॥ कूप नीर सम घर धन जानौं, कढ़ैं वढ़ै अकढ़ैं सड़ जावै ॥ दियैं० ॥ १ ॥ मिथ्याती पशु दानभावफल, भोगभूमि सुरवास वसावै । द्यानत गास[2] अरध चौथाई, मनवांछित विधि कब बनि आवै ॥ दियैं० ॥ २ ॥

२४७ ।

ए मेरे मीत ! निचींत कहा सोवै ॥ ए० ॥ टेक ॥ फूटी काय सराय पायकै, धरम रतन जिन खोवै ॥ ॥ ए० ॥ १ ॥ निकसि निगोद मुकत जैवेको, राहविषैं कहा जोवै ॥ ए० ॥ २ ॥ द्यानत गुरु जागुरू[3] पुकारैं, खबरदार किन होवै ॥ ए० ॥ ३ ॥

२४८ ।

प्यारे नेमसों प्रेम किया रे ॥ प्यारे० ॥ टेक ॥ उनहीके अरचैं चरचैं, परचैं सुख होत हिया रे ॥

---

१ लोहा । २ ग्रास-कौर । ३ जागरूक-जगनेवाले ।

प्यारे० ॥ १ ॥ उनहीके गुनको सुमरौं, उनही लखि जीय जिया रे ॥ प्यारे० ॥ २ ॥ द्यानत जिन प्रभु नाम रट्यो तिन, कोटिक दान दिया रे ॥ प्यारे० ॥ ३ ॥

२४९।

मोहि तारो जिन साहिब जी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ दास कहाऊं क्यों दुख पाऊं, मेरी ओर निहारो ॥ मोहि० ॥ १ ॥ षटकाया प्रतिपालक स्वामी, सेवकको न विसारो ॥ मोहि० ॥ २ ॥ द्यानत तारन तरन विरद तुम, और न तारनहारो ॥ मोहि० ॥ ३ ॥

२५०।

दास तिहारो हूं, मोहि तारो श्रीजिनराय। दास तिहारो भक्त तिहारो, तारो श्रीजिनराय ॥ दास० ॥ टेक ॥ चहुँगति दुखकी आगतैं अब, लीजे भक्त बचाय ॥ दास० ॥ १ ॥ विषय कषाय ठगनि ठग्यो, दोनोंतैं लेहु छुड़ाय ॥ दास० ॥ २ ॥ द्यानत ममता नाहरीतैं, तुम बिन कौन उपाय ॥ दास० ॥ ३ ॥

२५१।

गोतम स्वामीजी मोहि बानी तनक सुनाई ॥ गोतम० ॥ टेक ॥ जैसी बानी तुमने जानी, तैसी मोहि बताई ॥ गोतम० ॥ १ ॥ जा बानीतैं श्रेणिक समझ्यो, क्षायक समकित पाई ॥ गोतम० ॥ २ ॥ द्यानत भूप अनेक तरे हैं, बानी सफल सुहाई ॥ गोतम० ॥ ३ ॥

२५२ ।

देखे धन्य घरी, आज पावापुर महावीर ॥ देखे० ॥ टेक ॥ गोतमस्वामि चंदना मेंडक, श्रेणिकसुखकर धीर ॥ देखे० ॥ १ ॥ चार ओर भवि कमल विराजैं, भक्ति फूल सुख नीर । द्यानत तीरथनायक ध्यावै, मिट जावै भव भीर ॥ देखे० ॥ २ ॥

२५३ ।

आतम महवूव यार, आतम महवूव ॥ आतम० ॥ टेक ॥ देखा हमने निहार, और कुछ न खूव ॥ आतम० ॥ १ ॥ पंचिन्द्रीमाहिं रहै, पाचोंतैं भिन्न । वादलमें भानु तेज, नहीं खेद खिन्न ॥ आतम० ॥ २ ॥ तनमें है तजै नाहिं, चेतनता सोय । लाल कीच वीच पस्यो, कीचसा न होय ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जामें हैं गुन अनन्त, गुनमें है आप । दीवेमें जोत जोतमें है दीवा व्याप ॥ आतम० ॥ ४ ॥ करमोंके पास वसै, करमोंसे दूर । कमल वारिमाहिं लसै, वारिमाहिं जूर(?) ॥ आतम० ॥ ५ ॥ सुखी दुखी होत नाहिं, सुख दुखकेमाहिं । दरपनमें धूप छाहिं, घाम शीत नाहिं ॥ आतम० ॥ ६ ॥ जगके व्योहाररूप, जगसों निरलेप । अंवरमें गोद धस्यो, व्योमको न चेप ॥ आतम० ॥७॥ भाजनमें नीर भस्यो, थिरमें सुख पेख । द्यानत मनके विकार, टार आप देख ॥ आतम० ॥ ८ ॥

२५४।

चल पूजा कीजे, बनारसमें आय ॥ चल० ॥ टेक ॥ पूजा कीजे सब सुख लीजे, आनँद मंगल गाय ॥ चल० ॥ १ ॥ पारसनाथ सुपारस राजैं, देखत दुख मिट जाय ॥ चल० ॥ २ ॥ गंगाने परदक्षिण दीनी, ता पुरकी हित लाय ॥ चल० ॥ ३ ॥ द्यानत औसर आज हि आछो, वंदे प्रभुके पाय ॥ चल० ॥ ४ ॥

२५५।

सेठ सुदरसन तारनहार ॥ सेठ० ॥ टेक ॥ तीन बार दिढ़ शील अखंडित, पालैं महिमा भई अपार ॥ सेठ० ॥ १ ॥ सूलीतैं सिंघासन हूवा, सुर मिलि कीनौं जैजैकार ॥ सेठ० ॥ २ ॥ सह उपसर्ग लह्यो केवल-पद, द्यानत पायो मुकतिदुवार ॥ सेठ० ॥ ३ ॥

२५६।

पावापुर भवि वंदो जाय ॥ पावापुर० ॥ टेक ॥ परम पूज्य महावीर गये शिव, गोतम ऋषि केवलगुन पाय ॥ पावापुर० ॥ १ ॥ सो दिन अब लगि जग सब मानैं, दीवाली सम मंगल काय ॥ पावापुर० ॥ २ ॥ कातिक मावस निस तिस जागे, द्यानत अदभुत पुन्य उपाय ॥ पावापुर० ॥ ३ ॥

२५७।

जिनवरमूरत तेरी, शोभा कहिय न जाय ॥ जि-

न० ॥ टेक ॥ रोम रोम लखि हरप होत है, आनँद उर न समाय ॥ जिन० ॥ १ ॥ शांतरूप शिवराह बतावै, आसन ध्यान उपाय ॥ जिन० ॥ २ ॥ इंद फनिंद नरिंद विभौ सब, दीसत है दुखदाय ॥ जिन० ॥ ३ ॥ द्यानत पूजै ध्यावै गावै, मन वच काय लगाय ॥ जिन० ॥ ४ ॥

२५८ ।

तारि लै मोहि शीतल स्वामी ॥ तारि० ॥ टेक ॥ शीतल वचन चंद चन्दनतैं, भव-आताप-मिटावन नामी ॥ तारि० ॥ १ ॥ त्रिभुवननायक सब सुखदायक, लोकालोकके अंतरजामी ॥ तारि० ॥ २ ॥ द्यानत तुम जस कौन कहि सकै, वंदत पाँय भये शिवगामी ॥ तारि० ॥ ३ ॥

२५९ ।

तारनकों जिनवानी ॥ तारन० ॥ टेक ॥ मिथ्या चूरै सम्यक पूरै, जनम-जरामृत हानी ॥ तारन० ॥१॥ जड़ता नाशै ज्ञान प्रकाशै, शिव-मारग-अगवानी । द्यानत तीनों-लोक व्यथाहर, परम-रसायन मानी ॥ तारन० ॥ २ ॥

२६० ।

होरी आई आज रँग भरी है । रंग भरी रस भरी रसौं (?)भरी है ॥ होरी० ॥ टेक ॥ चेतन पिय आये

२८३।

भजो जी भजो जिनचरनकमलको, छांड़ि विषय आमोदै जी ॥ भजो० ॥ टेक ॥ भाग उदय नरदेही पाई, अव मत जाहि निगोदै जी ॥ भजो० ॥ १ ॥ विषय भोग पाहनके वाहन, भव-जलमाहिं डवो दै जी । द्यानत और फिकर तज भज प्रभु, जो चाहै सो सो दै जी ॥ भजो० ॥ २ ॥

२८४।

लगन मोरी पारससों लागी ॥ लगन० ॥ टेक ॥ कमठ-मान-भंजन मनरंजन, नाग किये वड़भागी ॥ लगन० ॥ १ ॥ संकट चूरत मंगल मूरत, परम धरम अनुरागी । द्यानत नाम सुधारस स्वादत, प्रेम भगति मति पागी ॥ लगन० ॥ २ ॥

२८५।

वे साधौं जन गाई, कर करुना सुखदाई ॥ वे० ॥टेक॥ निरधन रोगी प्रान देत नाहिं, लहि तिहुँ जगठकुराई ॥ वे० ॥ १ ॥ कोड़ रास कन मेरु हेम[1] दे, इक जीवध अधिकाई ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीन लोक दुख पावक, मेघझरी वतलाई ॥ वे० ॥ ३ ॥

२८६ ।

आरसी देखत मन आर[2] सी लागी ॥ आरसी० ॥

१ सुवर्ण । २ सुईसी चुभ गई ।

टेक ॥ सेत वाल यह दूत कालको, जोवन मृग जरा वाघिनि लागी ॥ आरसी० ॥ १ ॥ चक्री भरत भावना भाई, चौदह रतन नवों निधि त्यागी । द्यानत दीच्छा लेत महूरत, केवलज्ञान कला घट जागी ॥ आरसी० ॥ २ ॥

२८७ ।

कहा री कहूं कछु कहत न आवै, वाहूवल वल धीरज री ॥ कहा० ॥ टेक ॥ जल मल[1] दिष्ट[2] जुद्धमें जीत्यो, भरत चक्रको वीरज री ॥ कहा० ॥ १ ॥ जोग लियो तन फननि[3] घर कियो, शोभा ज्यों अलि-नीरज[4] री ॥ कहा० ॥ २ ॥ द्यानत वहुत दान तव दै हौं, पै हौं चरननकी रज री ॥ कहा० ॥ ३ ॥

२८८ ।

हो श्रीजिनराज नीतिराजा ! कीजे न्याव हमारो ॥ हो० ॥ टेक ॥ चेतन एक सु मैं जड़ वहु ये, दोनों ओर निहारो ॥ हो० ॥ १ ॥ हम तुममाहिं भेद इन कीनों, दीनों दुख अति भारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत सन्त जान सुख दीजै, दुष्टैं देश निकारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

२८९ ।

अव समझ कही ॥ अव० ॥ टेक ॥ कौन कौन आपद विपयनितैं, नरक निगोद सही ॥ अव० ॥ १ ॥

---

१ मल्लयुद्ध । २ दृष्टियुद्ध । ३ सर्पोंने । ४ कमल ।

एक एक इन्द्री दुखदानी, पांचौं दुखत नहीं ॥ अब० ॥ २ ॥ द्यानत संजम कारजकारी, धरौ तरौ सब ही ॥ अब० ॥ ३ ॥

२९० ।

सोई कर्मकी रेखपै मेख मारै ॥ सोई० ॥ टेक ॥ आपमें आपको आप धारै ॥ सोई० ॥ १ ॥ नयो बंधन न करै, बँध्यो पूरब झरै, करज काढ़ न देना विचारै ॥ सोई० ॥ २ ॥ उदय विन दिये गल जात संवर सहित, ज्ञान संजुगत जब तप सँभारै ॥ सोई० ॥ ३ ॥ ध्यान तरवारसों मार अरि मोहको, मुकति तिय वदन द्यानत निहारै ॥ सोई० ॥ ४ ॥

२९१ ।

प्रभुजी मोहि फिकर अपार ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ दान व्रत नहिं होत हमपै, होंहिंगे क्यों पार ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ एक गुन श्रुत कहि सकत नहिं, तुम अनन्त भँडार । भगति तेरी बनत नाहीं, मुकतकी दातार ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ एक भवके दोष केई, थूल कहूँ पुकार । तुम अनन्त जनम निहारे, दोष अपरंपार ॥ प्रभु० ॥३॥ नाथ दीनदयाल तेरो, तरनतारनहार । वंदना द्यानत करत है, ज्यों बनै त्यों तार ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

२९२ ।

तेरै मोह नहीं ॥ तेरै० ॥ टेक ॥ चक्री पूत सु-

गुनधर बेटो, कामदेव सुत ही ॥ तेरै० ॥ १ ॥ नव भव नेह जानकै कीनौं, दानी श्रेयँस ही । मात तात निहचै शिवगामी, पहले सुत सब ही ॥ तेरै० ॥ २ ॥ विद्याधरके नृप कर कीनौं, साले गनधर ही । बेटीको गर्ननी[1] पद दीनों, आरजिका सब ही ॥ तेरै० ॥ ३ ॥ पोता आप बराबर कीनों, महावीर तुम ही । द्यानत आपन जान करत हो, हम हू सेवक ही ॥तेरै० ॥ ४ ॥

२९३।

कर मन ! वीतरागको ध्यान ॥ कर० ॥ टेक ॥ जिन जिनराज जिनिंद जगतपति, जगतारन जगजान ॥ कर० ॥ १ ॥ परमातम परमेस परमगुरु, परमानंद प्रधान । अलख अनादि अनन्त अनूपम, अजर अमर अमलान ॥ कर० ॥ २ ॥ निरंकार अविकार निरंजन, नित निरमल निरमान । जती व्रती मुन ऋषी सुखी प्रभु, नाथ धनी गुन ज्ञान ॥ कर० ॥ ३ ॥ सिव सरवज्ञ सिरोमनि साहब, साँईं सन्त सुजान । द्यानत यह गुन नाममालिका, पहिर हिये सुखदान ॥ कर० ॥ ४ ॥

२९४।

शुद्ध स्वरूपको वंदना हमारी ॥ शुद्ध० ॥ टेक ॥ एक रूप वसु रूप विराजै, सुगुन अनन्त रूप अवि-

[1] आर्यिकाओंमें मुख्य ।

कारी ॥ शुद्ध० ॥ १ ॥ अमल अचल अविकलप अजलपी¹, परमानंद चेतना धारी ॥ शुद्ध० ॥ २ ॥ द्यानतं द्वैतभाव तज हूजै, भाव अद्वैत सदा सुखकारी॥ शुद्ध० ॥ ३ ॥

२९५।

चौवीसौंको वंदना हमारी ॥ चौवीसौं० ॥ टेक ॥ भवदुखनाशक सुखपरकाशक, विघनविनाशक मंगलकारी ॥ चौवीसौं० ॥ १ ॥ तीनलोक तिहुँकालनिमाहीं, इन सम और नहीं उपगारी ॥ चौवीसौं० ॥ ॥ २ ॥ पंच कल्यानक महिमा लखकै, अद्भुत हरप लहैं नरनारी ॥ चौवीसौं० ॥ ३ ॥ द्यानत इनकी कौन चलावै, बिंब देख भये सम्यकधारी ॥ चौवीसौं० ॥४॥

२९६।

सेऊं स्वामी अभिनन्दनको ॥ सेऊं० ॥ टेक ॥ लेकै दीप धूप जल फल चरु, फूल अछत चंदनको ॥ सेऊं० ॥१॥ नाचौं गाय बजाय हरपसों, प्रीत करों बंदनको ॥ सेऊं० ॥ २ ॥ द्यानत भगतिमाहिं दिन बीतैं, जीतैं भव फंदनको ॥ सेऊं० ॥ ३ ॥

२९७।

एक समय भरतेश्वर स्वामी, तीन बात सुनी तुरत फुरत ॥ एक०॥ टेक ॥ चक्र रतन प्रभुं²ज्ञान जनम सुत,

१ मौनावलम्बी । २ ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रगट होना ।

पहलैं कीजै कौन कुरत ॥ एक० ॥ १ ॥ धर्मप्रसाद सवै शुभ सम्पति, जिन पूजैं सव दुरत दुरत। चक्र उछाह कियो सुत मंगल, द्यानत पायो ज्ञान तुरत ॥ एक० ॥ २ ॥

२९८।

तू ही मेरा साहिव सच्चा साँई ॥ तू ही० ॥ टेक ॥ काल अनन्त रुल्यो जगमाहीं, आपद वहुविधि पाई ॥ तू ही० ॥ १ ॥ तुम राजा हम परजा तेरे, कीजिये न्याव न काई ॥ तू ही० ॥ २ ॥ द्यानत तेरा करमनि घेरा, लेहु छुड़ाय गुसाँई ॥ तू ही० ॥ ३ ॥

२९९।

सच्चा साँई, तूही है मेरा प्रतिपाल ॥ सच्चा० ॥टेक॥ तात मात सुत शरन न कोई, नेह लगा है तेरे नाल (?)॥ सच्चा० ॥ १ ॥ तनदुख मनदुख जनदुखमाहीं, सेवक निपट विहाल ॥ सच्चा० ॥ २ ॥ द्यानत तुम वहु तारन-हारे, हमहुको लेहु निकाल ॥ सच्चा० ॥ ३ ॥

३००।

इस जीवको, यों समझाऊं री ! ॥ इस० ॥ टेक ॥ अरस अफरस अगंध अरूपी, चेतन चिन्ह वताऊं री ॥ इस० ॥ १ ॥ तत तत तत तत, थेई थेई थेई थेई तन नन री री गाऊं री ॥ इस० ॥ २ ॥ द्यानत,

१ कृत्य—काम। २ पाप। ३ दूर भागें।

सुमत कहै सखियनसों, सोहं सीख सिखाऊं री ॥ इस० ॥ ३ ॥

३०१ ।

मैं न जान्यो री ! जीव ऐसी करैगो ॥ मैं० ॥टेक॥ मोसौं विरति कुमतिसों रति कै, भवदुख भूरि भरैगो ॥ मैं० ॥ १ ॥ स्वारथ भूलि भूलि परमारथ, विषयारथमें परैगो ॥ मैं० ॥ २ ॥ द्यानत जब समतासों राचै, तब सब काज सरैगो[1] ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०२ ।

तुम चेतन हो ॥ तुम० ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग दुख पावै सो, क्यों तज देत न हो ॥ तुम० ॥१॥ नरक निगोद कषाय भमावै, क्यों न सचेतन हो ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत आपमें आपको जानो, परसों हेत[2] न हो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

३०३ ।

तैं कहुँ देखे नेमिकुमार ॥ तैं० ॥ टेक ॥ पशुगन बंध छुड़ावनिहारे, मेरे प्रानअधार ॥ तैं० ॥ १ ॥ बालब्रह्मचारी गुनधारी, कियो मुकतिसों प्यार ॥ तैं ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, धन्य दिवस धनि बार ॥ तैं० ॥ ३ ॥

---

१ सिद्ध होगा । २ ममत्व ।

३०४।

कौन काम मैंने कीनों अब, लीनों नरक निवास हो ॥ कौन० ॥ टेक ॥ वहुतनि तप करि सुर शिव साध्यो, मैं साध्यो दुखरास हो ॥ कौन० ॥ १ ॥ नरभव लहि वहु जीव सताये, साधे विषय विलास हो। पीतम रिपु रिपु पीतम जानें, मिथ्यामत-विसवास हो॥ कौन० ॥ २ ॥ धनके साथी जीव वहुत थे, अव दुख एक न पास हो । यहां महादुख भोग छूटिये, राग दोषको नास हो ॥ कौन० ॥ ३ ॥ देव धरम गुरु नव तत्त्वनिकी, सरधा दिढ़ अभ्यास हो । द्यानत हौं सुखमय अविनाशी, चेतनजोति प्रकाश हो ॥ कौन० ॥४॥

३०५।

नेमीश्वर खेलन चले, रंग हो हो होरी, सुगुन सखा संग भूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ टेक ॥ महा विराग वसन्तमें, रंग हो हो होरी। समझ सुवास अनूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ १ ॥ वसन महाव्रत धारकै, रंग हो हो होरी। छिरके छिमा वनाय रंग, रंग हो हो होरी। पिचकारी कर प्रीतिकी रंग रंग हो हो होरी । रीझ रंग अधिकाय रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ २ ॥ ज्ञान गुलाल सुहावनी रंग, रंग हो हो होरी । अनुभव अतर सुख्याल

---

१ प्यारे मित्र।

रंग, रंग हो हो होरी । प्रेम पखावज बजत रंग, रंग हो हो होरी । तत्त्व स्वपर दो ताल रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ३ ॥ संजम सिरनी अति भली रंग, रंग हो हो होरी । मेवा मगन सुभाव रंग, रंग हो हो होरी । सम रस सीतल फल लहै रंग, रंग हो हो री । पान परम पद चाव रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ४ ॥ आतम ध्यान अगन भई रंग, रंग हो हो होरी । करम काठ समुदाय रंग, रंग हो हो-होरी । धर्म धुलहड़ी खेलकैं रंग, रंग हो हो होरी । सदा सहज सुखदायं रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ५ ॥ रजमति मनमें कहति है रंग, रंग हो हो होरी । हम तजि भजि शिव नारि रंग, रंग हो हो हो होरी । द्यानत हम कब होंहिंगे रंग, रंग हो हो होरी । शिववनिताभरतार रंग, रंग हो हो हो-री ॥ नेमीश्वर० ॥ ६ ॥

। ३०६ ।

सोई ज्ञान सुधारस पीवै ॥ सोई० ॥ टेक ॥ जीवन दशा मृतक करि जानै, मृतक दशामें जीवै ॥ सोई० ॥ १ ॥ सैं[1]नदशा जाग्रत करि जानै, जागत नाहीं सोवै । मी[2]तौंको दुशमन करि जानै, रिपुको प्रीतम जोवै ॥ सोई० ॥ २ ॥ भोजनमाहिं बरत करि बूझै, व्रतमें

१ सोनेकी दशाको । २ मित्रोंको ।

होत अहारी । कपड़े पहिरैं नगन कहावै, नागा अंवर-धारी ॥ सोई० ॥ ३ ॥ वस्तीको ऊजर कर देखै, ऊजर वस्ती सारी । द्यानत उलट चालमें सुलटा, चेतनजोति निहारी ॥ सोई० ॥ ४ ॥

३०७।

आतम अनुभव कीजिये, यह संसार असार हो ॥ आतम० ॥ टेक ॥ जैसो मोती ओसको, जात न लागै वार हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसैं सब वनिजौंविषैं, पैसा उतपत सार हो । तैसैं सब ग्रंथनिविषैं, अनुभव हित निरधार हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ पंच महाव्रत जे गहैं, सहैं परीषह भार हो । आतमज्ञान लखैं नहीं, वूड़ैं कालीधार हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ वहुत अंग पूरव पढ्यो, अभयसेन(?) गँवार हो । भेदविज्ञान भयो नहीं, रुल्यो सरव संसार हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥ वहु जिन-वानी नहिं पढ्यो, शिवभूती अनगार हो । घोष्यो तुप अरु मापको, पायो मुकतिदुवार हो ॥ आतम० ॥ ५ ॥ जे सीझे जे सीझ हैं, जे सीझैं इहि वार हो । ते अनु-भव परसादतैं, यों भाष्यो गनधार हो ॥ आतम० ॥ ६ ॥ पारस चिन्तामनि सवै, सुरतरुआदि अपार

१ वस्त्रधारी । २ व्यापारोंमें । ३ उत्पत्ति, प्राप्ति । ४ मुनि । ५ उड़दकी दालसे जैसे उसका छिलका भिन्न है, इसी तरह आत्मासे शरीर भिन्न है, ऐसा कहते २ ।

हो । ये विषयासुखको करैं; अनुभवसुख सिरदार हो ॥ आतम० ॥ ७ ॥ इंद फनिंद नरिंदके, भाव सराग विथार हो। द्यानत ज्ञान विरागतैं, तद्भव मुकतिमँझार हो ॥ आतम० ॥ ८ ॥

३०८।

जानौं पूरा ज्ञाता सोई ॥ जानों० ॥ टेक ॥ रागी नाहीं रोषी नाहीं, मोही नाहीं होई ॥ जानौं० ॥ १ ॥ क्रोधी नाहीं मानी नाहीं, लोभी धी[1] ना ताकी । ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी मीठी जाकी ॥ जानौं० ॥ २ ॥ साँई सेती सच्चा दीसै, लोगोंहूका प्यारा । काहू जीका दोषी नाहीं, नीका पैंड़ा धारा ॥ जानौं० ॥ ३ ॥ काया सेती माया सेती, जो न्यारा है भाई । द्यानत ताको देखै जानै, ताहीसों लौ लाई ॥ जानौं० ॥ ४ ॥

३०९।

प्रभुजी प्रभू सुपास ! जगवासतैं दास निकास ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ इंदके खास फनिंदके खास, नरिंदके चन्दके खास । तुमको छांड़के किसपै जावैं, कौनका ढूंढ़ैं धाम ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ भूप सोई दुख दूर करै है, साह सोई दै दान । वैद सोई सब रोग मिटावै, तुमी सबै गुनवान ॥ प्रभु० ॥२॥ चोर अंजनसे तार लिये हैं, जार कीचकसे राव । हम तो सेवक सेव करै हैं, नाम

---

१ बुद्धि ।

साता होत कछुक सुख मानै, होत असाता रोवै । ये दोनों हैं कर्म अवस्था, आप नहीं किन जोवै ॥ और-न सीख देत वहु नीकी, आप न आप सिखावै । सांच साच कछु झूठ रंच नहिं, याहीतैं दुख पावै ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पाप करत वहु कष्ट होत है, धरम करत सुख भाई ! वाल गुपाल सवै इम भापैं, सो कहनावत आई ॥ दुहिमें जो तोकौं हित लागै, सो कर मनवच-काई । तुमको वहुत सीख क्या दीजे, तुम त्रिभुवन-के राई ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ त्रस पंचेन्द्रीसेती मानुप, औसर फिर नहिं पै है । तन धन आदि सकल सामग्री देखत देखत जै है ॥ समझ समझ अव ही तू प्राणी ! दुरगतिमें पछतैहै । भज अरहन्तचरण जुग द्यानत, वहुरि न जगमें ऐ है ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

३१७ । राग—सोरठ ।

प्राणी ! आतमरूप अनूप है, परतैं भिन्न त्रिकाल ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ यह सव कर्म उपाधि है, राग दोप भ्रम जाल ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ कहा भयो काई लगी, आतम दरपनमाहिं । ऊपरली ऊपर रहै, अंतर पैठी नाहिं ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ भूलि जेवरी अहि मुन्यो, ढूंठ लख्यो नररूप । त्यों ही पर निज मानिया, वह जड़ तू चिद्रूप प्राणी० ॥ ३ ॥ जीव-कनक तन-मैलके, भिन्न भिन्न परदेश । माहैं माहैं संध है, मिलैं नहीं लव

लेश ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ घन करमनि आच्छादियो, ज्ञानभानपरकाश । है ज्योंका त्यों शास्वता, रंचक होय न नाश ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ लाली झलकै फटिकमें फटिक न लाली होय । परसंगति परभाव है, शुद्ध-स्वरूप न कोय ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ त्रस थावर नर नारकी, देव आदि बहु भेद । निहचै एक स्वरूप हैं, ज्यों पट सहज सुपेद ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ गुण ज्ञानादि अनन्त हैं, परजय सकति अनन्त । द्यानत अनुभव कीजिये, याको यह सिद्धन्त ॥ प्राणी० ॥ ८ ॥

३१८ । राग–विलावल ।

सबमें हम हममें सब ज्ञान, लखि बैठे दृढ़ आसन तान ॥ सबमें० ॥ टेक ॥ भूमिमाहिं हम हममें भूमि, क्यों करि खोदैं धामाधूम ॥ सबमें० ॥ १ ॥ नीर-माहिं हम हममें नीर, क्यों करि पीवैं एक शरीर ॥ सबमें० ॥ २ ॥ आगमाहिं हम हममें आगि, क्यों करि जालैं हिंसा लागि ॥ सबमें० ॥ ३ ॥ पौन माहिं हम हममें पौन, पंखा लेय विराधै कौन ॥ सबमें० ॥ ४ ॥ रूखमाहिं हम हममें रूख, क्योंकरि तोड़ैं लागैं भूख ॥ सबमें० ॥ ५ ॥ लट चैंटी माखी हम एक, कौन सतावै धारि विवेक ॥ सबमें० ॥ ६ ॥ खग मृग मीन सबै हम जात, सबमें चेतन एक विख्यात ॥ सबमें० ॥ ७ ॥ सुर नर नारक हैं हम रूप,

सबमें दीसै है चिद्रूप ॥ सबमें० ॥ ८ ॥ बालक वृद्ध तरुन तनमाहिं, पंढ[1] नारि नर धोखा नाहिं ॥ सबमें० ॥ ९ ॥ सोवन बैठन वचन विहार, जतनें[2] लिये आहार निहार ॥ सबमें० ॥ १० ॥ आयो लैंहिं न न्यौंते जाहिं, परघर फासू[3] भोजन खाहिं ॥ सबमें० ॥ ११ ॥ पर संगतिसों दुखित अनाद, अब एकाकी अम्रत स्वाद ॥ सबमें० ॥ १२ ॥ जीव न दीसै है जड़ अंग, राग दोष कीजै किहि संग ॥ सबमें० ॥ १३ ॥ निरमल तीरथ आतमदेव, द्यानत ताको निशिदिन सेव ॥ सबमें० ॥ १४ ॥

३१९ । राग—आसावरी जोगिया ।

कलिमें ग्रंथ बड़े उपगारी ॥ कलि० ॥ टेक ॥ देव शास्त्र गुरु सम्यक सरधा, तीनों जिनतैं धारी ॥ कलि० ॥ १ ॥ तीन वरस वसु मास पंद्र दिन, चौथा काल रहा था । परम पूज्य महावीरस्वामि तब, शिवपुर-राज लहा था ॥ कलि० ॥ २ ॥ केवलि तीन पांच श्रुतिकेवलि, पीछैं गुरुनि विचारी । अंगपूर्व अब हैं न रहैंगे, बात लिखी थिरथारी ॥ कलि० ॥ ३ ॥ भवि-हित कारन धर्मविथारन, आचारजों बनाये । बहु तिन तिनकी टीका कीनीं, अद्भुत अरथ समाये ॥ कलि० ॥ ४ ॥ केवल श्रुतकेवलि यहां नाहीं, सुनि

१ नपुंसक । २ यत्नपूर्वक । ३ प्राशुक ।

गुन प्रगट न सूझैं। दोऊ केवलि आज यही हैं, इन-हीको मुनि बूझैं ॥ कलि० ॥ ५ ॥ बुद्धि प्रगट कर आप वांचिये, पूजा वंदन कीजै। दरव खरच लिखवाय सुधाय सु, पण्डित जन बहु दीजै ॥ कलि० ॥ ६ ॥ पढ़तैं सुनतैं चरचा करतैं, है संदेह जु कोई। आगम माफिक ठीक करै कै, देख्यो केवल सोई ॥ कलि० ॥ ७ ॥ तुच्छबुद्धि कछु अरथ जानिकै, मनसों विंग उठाये। औधज्ञानि श्रुतज्ञानी मानो, सीमंधर मिलि आये ॥ कलि० ॥ ८ ॥ यह तो आचारज है सांचो, ये आचारज झूठे। तिनके ग्रंथ पढ़ैं नित वंदैं, सरधा ग्रंथ अपूठे ॥ कलि० ॥ ९ ॥ सांच झूठ तुम क्यों करि जान्यो, झूठ जानि क्यों पूजो। खोट निकाल शुद्ध करि राखो, और बनावो दूजो ॥ कलि० ॥ १० ॥ कौन सहामी बात चलावै, पूछै आनमती तौ। ग्रंथ लिख्यो तुम क्यों नाहिं मानौ, ज्वाब कहा कहि जीतौ ॥ कलि० ॥ ११ ॥ जैनी जैनग्रंथके निंदक, हुण्डासर्पिनि जोरा। द्यानत आप जान चुप रहिये, जगमें जीवन थोरा ॥ कलि० ॥ १२ ॥

३२०।

कीजे हो भाईयनिसों प्यार ॥ कीजे० ॥ टेक ॥ नारी सुत बहुतेरे मिल हैं, मिलैं नहीं मा जाये यार ॥ कीजे० ॥ १ ॥ प्रथम लराई कीजे नाहीं, जो लड़िये

तो नीति विचार । आप सलाह किधौं पंचनिमें, दुई चढ़िये ना हाकिम द्वार ॥ कीजे० ॥ २ ॥ सोना रूपा बासन कपड़ा, घर हाटनकी कौन शुमार । भाई नाम बरन दो ऊपर, तन मन धन सब दीजे वार ॥ कीजे० ॥ ३ ॥ भाई बड़ा पिता परमेश्वर, सेवा कीजे तजि हंकार । छोटा पुत्र ताहि सब दीजे, वंश बेल विरधै अधिकार ॥ कीजे० ॥ ४ ॥ घर दुख बाहिरसों नहिं टूटै, बाहिर दुख घरसों निरवार । गोत घात्र नाहिं चक्र करत है, अरि सब जीतनको भयकार ॥ कीजे० ॥ ५ ॥ कोई कहै हनैं भाईको, राज काज नाहिं दोप लगार । यह कलिकाल नरकको मारग, तुर्कनिमें हममें न निहार ॥ कीजे० ॥ ६ ॥ होहि हिसावी तो गम खइये, नाहक झगड़ै कौन गँवार । हाकिम लूटैं पंच विगूचैं, मिलैं नहीं वे आंखैं चार ॥ कीजै० ॥ ७ ॥ पैसे कारन लड़ैं निखट्टू, जानैं नाहिं कमाई सार । उद्यममें लछमीका वासा, ज्यों पंखेमें पवन चितार ॥ कीजे० ॥ ८ ॥ भला न भाई भाव न जामें, भला पड़ौसी जो हितकार । चतुर होय परन्याव चुकावै, शठ निज न्याव पराये द्वार ॥ कीजे० ॥ ९ ॥ जस जीवन अपजस मरना है, धन जोवन विजली उनहार । द्यानत

१ तुर्कोंमें अर्थात् मुगलोंमें । राजके लिये वे भाईयोंको मार डालते थे ।

चतुर छमी सन्तोषी, धरमी ते विरले संसार ॥ कीजे० ॥ १० ॥

३२१ ।

क्रोध कषाय न मैं करौं, इह परभव दुखदाय हो ॥ टेक ॥ गरमी व्यापै देहमें, गुनसमूह जलि जाय हो ॥ क्रोध० ॥ १ ॥ गारी दै मार्‌यो नहीं, मारि कियो नहिं दोयं[1] हो । दो करि समता ना हरी, या सम मीत न कोय हो ॥ क्रोध० ॥ २ ॥ नासै अपने पुन्यको, काटै मेरो पाप हो । ता प्रीतमसों रूसिकै, कौन सहै सन्ताप हो ॥ क्रोध० ॥ ३ ॥ हम खोटे खोटे कहैं, सांचेसों न विगार हो । गुन लखि निंदा जो करै, क्या लावेंरसों[2] रार[3] हो ॥ क्रोध० ॥ ४ ॥ जो दुरजन दुख दै नहीं, छिमा न ह्वै परकास हो । गुन परगट करि सुख करै, क्रोध न कीजे तास हो ॥ क्रोध० ॥ ५ ॥ क्रोध कियेसों कोपिये, हमें उसे क्या फेर हो । सज्जन दुरजन एकसे, मन थिर कीजे मेरं[4] हो ॥ क्रोध० ॥ ६ ॥ बहुत कालसों साधिया, जप तप संजम ध्यान हो । तासु परीक्षा लैनको, आयो समझो ज्ञान हो ॥ क्रोध० ॥७॥ आप कमायो भोगिये, पर दुख दीनों झूठ हो । द्यानत परमानन्द मय, तू जगसों क्यों रूठ हो ॥ क्रोध० ॥८॥

१ दो टुकड़े तो न किये । २ झूठेसे । ३ लड़ाई । ४ सुमेरुके समान ।

३२२ । राग-सोरठमें ख्याल ।

भाई काया तेरी दुखकी ढेरी, बिखरत सोच कहा है । तेरे पास सासतौ तेरो, ज्ञानशरीर महा है ॥ भाई० ॥ १ ॥ ज्यों जल अति शीतल है काचौ, भाजन दाह दहा है (?) । त्यों ज्ञानी सुखशान्त कालका, दुख समभाव सहा है ॥ भाई० ॥ २ ॥ बोदे उतरैं नये पहिरतैं, कौंने खेद गहा है । जप तप फल परलोक लहैं जे, मरकै वीर कहा है ॥ भाई० ॥ ३ ॥ द्यानत अन्तसमाधि चहैं मुनि, भागौं दाव लहा है । वहु तज मरण जनम दुख पावक, सुमरन धार वहा है ॥ भाई० ॥ ४ ॥

३२३ । मंगल आरती राग- भैरों ।

मंगल आरती कीजे भोर, विघनहरन सुखकरन किरोर ॥ मंगल ॥ टेक ॥ अरहत सिद्ध सूरि उवझाय, साधु नाम जपिये सुखदाय ॥ मंगल ॥ १ ॥ नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वासुपूज्य चम्पापुर धार । पावापुर महावीर मुनीश, गिरि कैलास नमों आदीश ॥ मंगल० ॥ २ ॥ सिखर समेद जिनेश्वर वीस, वंदों सिद्धभूमि निशिदीस । प्रतिमा स्वर्ग मर्त्य पाताल, पूजों कृत्य अकृत्य त्रिकाल ॥ मंगल ॥ ३ ॥ पंच कल्याणक काल

१ द्यानतजीकी दश आरती हमने अलग छपाई हैं, इसलिये इस पदसंग्रहमें शामिल नहीं की हैं । प्रकाशक ।

नमामि, परम उदारिक तन गुणधाम । केवलज्ञान आतमाराम, यह पटविधि मंगल अभिराम ॥ मंगल ॥ ॥ ४ ॥ मंगल तीर्थंकर चौवीस, मंगल सीमंधर जिन वीस । मंगल श्रीजिनवचन रसाल, मंगल रतनत्रय गुनमाल ॥ मंगल ॥ ५ ॥ मंगल दशलक्षण जिनधर्म, मंगल सोलहकारन पर्म । मंगल बारहभावन सार, मंगल संघ चारि परकार ॥ मंगल ॥ ६ ॥ मंगल पूजा श्रीजिनराज, मंगल शास्त्र पढ़े हितकाज । मंगल सतसंगति समुदाय, मंगल सामायिक मन लाय ॥ मंगल० ॥ ७ ॥ मंगल दान शील तप भाव, मंगल मुक्ति वधूको चाव । द्यानत मंगल आठौं जाम, मंगल महा मुक्ति जिनस्वाम ॥ मंगल० ॥ ८ ॥

इस संग्रहमें पंजाबी भाषाके कई एक पद ऐसे छाप दिये गये हैं, जो मूर्ख लेखकोंकी कृपासे रूपान्तरिक हो गये हैं और पंजाबी भाषा नहीं जाननेसे हमारे द्वारा उनका संशोधन ठीक ठीक नहीं हो सका है। आशा है कि, इस विषयमें पाठक हमको क्षमा प्रदान करेंगे।

इस संग्रहकी प्रेसकापी हमारे एक इन्दौरनिवासी मित्रने इन्दौरके जैनमन्दिरकी एक हस्तलिखित प्रतिपरसे करके भेजी है और उसका संशोधन हमने अपने पासकी एक दूसरी प्रतिपरसे किया है। बस इन दो प्रतियोंके सिवाय बुधजनविलासकी और कोई प्रति हमें नहीं मिल सकी।

कविवर बुधजनजीका यथार्थ नाम पं० विरधीचन्दजी था। आप खंडेलवाल थे और जयपुरके रहनेवाले थे। आपके बनाये हुए चार ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं और वे चारों ही छन्दोबद्ध हैं। १ तत्त्वार्थबोध, २ बुधजनसतसई, ३ पंचास्तिकाय, और ४ बुधजनविलास। ये चारों ग्रन्थ क्रमसे विक्रम संवत, १८७१–८१–९१ और ९२ में बनाये गये हैं। बस आपके विषयमें हमको इससे अधिक परिचय नहीं मिल सका।

बम्बई—चन्दाबाड़ी।
श्रावणकृष्णा ८—
श्रीवीर नि० २४३६।

नाथूराम प्रेमी।

॥ टेक ॥ ज्यौं तिरषातुर अम्रत पीवत, चातक अंबुद धार ॥ वानी सुनि० ॥ १ ॥ मिथ्या तिमिर गयो ततखिन ही, संशयभरम निवार । तत्त्वारथ अपने उर दरस्यौ, जानि लियो निज सार ॥ वानी सुनि० ॥ २ ॥ इंद नरिंद फनिंद पदीधर, दीसत रंक लगार । ऐसा आनँद बुधजनके उर, उपज्यौ अपरंपार ॥ वानी सुनि० ॥ ३ ॥

(१२)

राग–अलहिया ।

चन्दजिनेसुर नाथ हमारा, महासेनसुत लगत पियारा ॥ चन्द० ॥ टेक ॥ सुरपति नरपति फनिपति सेवत, मानि महा उत्तम उपगारा । मुनिजन ध्यान धरत उरमाहीं, चिदानंद पदवीका धारा ॥ चन्द० ॥ १ ॥ चरन शरन बुधजन जे आये, तिन पाया अपना पद सारा । मंगलकारी भवदुखहारी, स्वामी अद्भुतउपमावारा ॥ चन्द० ॥ २ ॥

(१३)

राग–अलहिया विलावल–ताल धीमा तेताला ।

करम देत दुख जोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ टेक ॥ कैइ परावृत पूरन कीनैं, संग न छांड़त मोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ १ ॥ इनके वशतैं मोहि बचावो, महिमा सुनी अति तोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ २ ॥ बुधजनकी विनती तुमहीसौं, तुमसा प्रभु नहिं और, हो साइँयां ॥ करम० ॥ ३ ॥

---

१ मेघ । २ पदवीधर ।

(१४)

राग-विलावल धीमो तेतालो।

नरभव पाय फेरि दुख भरना, ऐसा काज न करना हो ॥ नरभव० ॥ टेक ॥ नाहक ममत ठानि पुद्गलसौं, करम-जाल क्यौं परना हो ॥ नरभव० ॥ १ ॥ यह तो जड़ तू ज्ञान अरूपी, तिल तुष ज्यौं गुरु वरना हो। राग दोष तजि भजि समताकौं, कर्म साथके हरना हो ॥ नरभव० ॥ २ ॥ यो भव पाय विषय-सुख सेना, गज चढ़ि ईंधन ढोना हो। बुधजन समुझि सेय जिनवर पद, ज्यौं भव-सागर तरना हो ॥ नरभव० ॥ ३ ॥

(१५)

राग-विलावल इकतालो।

सारद! तुम परसादतैं, आनँद उर आया ॥ सारद० ॥ टेक ॥ ज्यौं तिरसातुर जीवकौं, अम्रतजल पाया ॥ सारद० ॥ १ ॥ नय परमान निखेपतैं, तत्त्वार्थ बताया। भाजी भूलि मिथ्यातकी, निज निधि दरसाया ॥ ॥ सारद० ॥ २ ॥ विधिना मोहि अनादितैं, चहुँगति भरमाया। ता हरिवेकी विधि सबै, मुझमाहिं बताया ॥ सारद० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त मति अलपतैं, मोपै जात न गाया। प्रचुर कृपा लखि रावरी, बुधजन हरपाया ॥ सारद० ॥ ४ ॥

(१६)

गुरु दयाल तेरा दुख लखिकैं, सुन लै जो फुरमावै है ॥ गुरु० ॥ तोमैं तेरा जतन बतावै, लोभ कछू नहिं

चावै है ॥ गुरु० ॥ १ ॥ पर सुभावको मोख्या चाहै, अपना उंसा[1] बनावै है । सो तो कबहूं हुवा न होसी, नाहक रोग लगावै है ॥ गुरु० ॥ २ ॥ खोटी खरी जस करी कुमाई, तैसी तेरै आवै है । चिन्ता आगि उठाय हियामैं, नाहक जान जलावै है ॥ गुरु० ॥ ३ ॥ पर अपनावै सो दुख पावै, बुधजन ऐसे गावै है । परको त्यागि आप थिर तिष्टै, सो अविचल सुख पावै है ॥ गुरु० ॥ ४ ॥

(१७)

राग–आसावरी ।

अरज ह्मारी मानो जी, याही ह्मारी मानो, भवदधि हो तारना ह्मारा जी ॥ अरज० ॥ टेक ॥ पतितउधारक पतित पुकारै, अपनो विरद पिछानो ॥ अरज० ॥ १ ॥ मोह मगर मछ दुख दावानल, जनममरन जल जानो । गति गति भ्रमन भँवरमैं डूबत, हाथ पकरि ऊंचो आनो ॥ अरज० ॥ २ ॥ जगमैं आन देव बहु हेरे, मेरा दुख नहिं भानो । बुधजनकी करुना ल्यो साहिब, दीजे अविचल थानो ॥ अरज० ॥ ३ ॥

(१८)

राग–आसावरी जोगिया . ताल धीमो तेतालो ।

तू कांई चालै लाग्यो रे लोभीड़ा, आयो छै बुढ़ापो ॥ तू० ॥ टेक ॥ धंधामाहीं अंधा ह्वै कै, क्यौं खोवै छै आपो रे ॥ तू० ॥ १ ॥ हिमत घटी थारी सुमत मिटी छै, भाजि गयो तरुणापो । जम ले जासी सब रह जासी, सँग जासी

---

१ सरीखा ।

पुन्न[1] पापो रे ॥ तू० २ ॥ जग स्वारथकौ कोइ न तेरो, यह निहचै उर थापो । बुधजन ममत मिटावौ मनतैं, करि मुख श्रीजिनजापो रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(१९)

राग—आसावरी जोगिया ताल धीमो तेतालो।

थे ही मोनैं तारो जी, प्रभुजी कोई न हमारो ॥ थे ही० ॥ टेक ॥ हूं एकाकि अनादि कालतैं, दुख पावत हूं भारो जी ॥ थे ही० ॥ १ ॥ बिन मतलबके तुम ही स्वामी, मतलबकौ संसारो । जग जन मिलि मोहि जगमैं राखैं, तू ही काढ़नहारो ॥ थे ही० ॥ २ ॥ बुधजनके अपराध मिटावो, शरन गह्यो छँ थारो । भवदधिमाहीं डूबत मोकौं, कर गहि आप निकारो ॥ थे ही० ॥ ३ ॥

(२०)

राग—आसावरी मांझ, ताल धीमो एकतालो ।

प्रभू जी अरज ह्मारी उर धरो ॥ प्रभू जी० ॥ टेक॥ प्रभू जी नरक निगोद्यांमें रुल्यौं, पायौ दुःख अपार ॥ प्रभू जी० ॥१॥ प्रभू जी, हूं पशुगतिमैं ऊपज्यौं, पीठ सह्यौ अतिभार ॥ प्रभू जी० ॥ २ ॥ प्रभू जी, विषय मगनमैं सुर भयो, जात न जान्यौं काल ॥ प्रभू जी० ॥ ३ ॥ प्रभू जी, नरभव कुल श्रावक लह्यौ, आयो तुम दरबार ॥ प्रभू जी० ॥ ४ ॥ प्रभू जी, भव भरमन बुधजनतनौं, मेटौ करि उपगार ॥ प्रभू जी० ॥ ५ ॥

---

१ पुण्य—शुभ कर्म ।

(२१)

राग–आसावरी ।

जगतमैं होनहार सो होवै, सुर नृप नाहिं मिटावैं ॥ जगत० ॥ टेक ॥ आदिनाथसेकौं भोजनमैं, अन्तराय उपजावैं । पारसप्रभुकौं ध्यानलीन लखि, कमठ मेघ वरसावैं ॥ जगत० ॥ १ ॥ लखमणसे सँग भ्राता जाकै, सीता राम गमावैं । प्रतिनारायण रावणसेकी, हनुमत लंक जरावैं ॥ जगत० ॥ २ ॥ जैसो कमावै तैसो ही पावै, यों बुधजन समझावै । आप आपकौं आप कमावौ, क्यौं परद्रव्य कमावै ॥ जगत० ॥ ३ ॥

(२२)

राग–आसावरी जलद्तेतालो ।

आगैं कहा करसी भैया, आजासी जब काल रे ॥ आगैं० ॥ टेक ॥ ह्यां तौ तैंनैं पोल मचाई, व्हां तौ होय समाल रे ॥ आगैं० ॥ १ ॥ झूठ कपट करि जीव सताये, हरया पराया माल रे । सम्पतिसेती धाप्या[1] नाहीं, तकी विरानी[2] बाल[3] रे ॥ आगैं० ॥ २ ॥ सदा भोगमैं मगन रह्या तू, लख्या नहीं निज हाल रे । सुमरन दान किया नहिं भाई, हो जासी पैमाल[4] रे ॥ आगैं० ॥ ३ ॥ जोवनमैं जुवती सँग भूल्या, भूल्या जब था बाल रे । अब हू धारो बुधजन समता, सदा रहहु खुशहाल रे ॥ आगैं० ॥ ४ ॥

(२३)

राग–आसावरी जोगिया जलद तेतालो ।

चेतन, खेल सुमतिसँग होरी ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ तोरि

---

१ संतुष्ट नहीं हुआ । २ दूसरेकी । ३ स्त्री । ४ पायमाल–नष्ट ।

आनकी प्रीति सयाने, भली वनी या जोरी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ डगर डगर डोलै है यौं ही, आव आपनी पौरी[1] निज रस फगुवा क्यौं नहिं बांटो, नातर ख्वारी तोरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ छार कषाय त्यागि या गहि लै, समकित केसर घोरी । मिथ्या पाथर डारि धारि लै, निज गुलालकी झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ खोटे भेष धरैं डोलत है, दुख पावै वुधि भोरी । वुधजन अपना भेष सुधारो, ज्यौं विलसो शिवगोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(२४)

राग—आसावरी जोगिया जल्द तेतालो ।

हे आतमा! देखी दुति तोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ टेक ॥ निजको ज्ञात लोकको ज्ञाता, शक्ति नहीं थोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ १ ॥ जैसी जोति सिद्ध जिनवरमैं, तैसी ही मोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ २ ॥ जड़ नहिं हुवो फिरै जड़के वसि, कै जड़की जोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ३ ॥ जगके काजि करन जग टहलै, वुधजन मति भोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ४ ॥

(२५)

वावा! मैं न काहू का, कोई नहीं मेरा रे ॥ वावा० ॥टेक॥ सुर नर नारक तिरयक गतिमैं, मोकौं करमन घेरा रे ॥ वावा० ॥ १ ॥ मात पिता सुत तिय कुल परिजन, मोह गहल उरझेरा रे । तन धन वसन भवन जड़ न्यारे, हूं चि-

---

१ पौर—घर । २ धूल ।

टेक ॥ विधना मोकौं चहुँगति फेरत, वड़े भाग तुम दरशन पाया ॥ तारो० ॥ १ ॥ मिथ्यामत जल मोह मकरजुत, भरम भौंरमैं गोता खाया । तुम मुख वचन अलंवन पाया, अब बुधजन उरमैं हरपाया ॥ तारो० ॥ २ ॥

(४६)

भवदधि-तारक नवका, जगमाहीं जिनवान ॥ भव० ॥ टेक ॥ नय प्रमान पतवारी जाके, खेवट आतमध्यान ॥ भव० ॥ १ ॥ मन वच तन सुध जे भवि धारत, ते पहुँचंत शिवथान । परत अथाह मिथ्यात भँवर ते, जे नहिं गहत अजान ॥ भव० ॥ २ ॥ विन अक्षर जिनमुखतैं निकसी, परी वरनजुत कान । हितदायक बुधजनकों गनधर, गूँथे ग्रंथ महान ॥ भव० ॥ ३ ॥

(४७)

राग–धनासरी धीमो तितालो ।

प्रभु, थांसूं अरज हमारी हो ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ मेरे हितू न कोऊ जगतमैं, तुम ही हो हितकारी हो ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ संग लग्यौ मोहि नेकू न छांड़ै, देत मोह दुख भारी । भववनमाहिं नचावत मोकौं, तुम जानत हौ सारी ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ थांकी महिमा अगम अगोचर, कहि न सकै बुधि म्हारी । हाथ जोरकै पाय परत हूं, आवागमन निवारी हो ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

(४८)

तथा—

याद प्यारी हो, म्हांनैं थांकी याद प्यारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ टेक ॥ मात तात अपने स्वारथके, तुम हितु परउप-

गारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ १ ॥ नगन छवी सुन्दरता जापै, कोटि काम दुति वारी । जन्म जन्म अवलोकौं निशिदिन, बुधजन जा बलिहारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ २ ॥

(४९)

राग–गौड़ी ताल आदि तितालो ।

अरे हाँ रे तैं तो सुधरी बहुत बिगारी ॥ अरे० ॥ टेक ॥ ये गति मुक्ति महलकी पौरी, पाय रहत क्यौं पिछारी ॥ अरे० ॥ १ ॥ परकौं जानि मानि अपनो पद, तजि ममता दुखकारी । श्रावक कुल भवदधि तट आयो, बूड़त क्यौं रे अनारी ॥ अरे० ॥ २ ॥ अबहूं चेत गयो कछु नाहीं, राखि आपनी वारी । शक्तिसमान त्याग तप करिये, तब बुधजन सिरदारी ॥ अरे० ॥ ३ ॥

(५०)

राग–काफी कनड़ी ।

मैं देखा आतमरामा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ रूप फरस रस गंधतैं न्यारा, दरस-ज्ञान-गुनधामा । नित्य निरंजन जाकै नाहीं, क्रोध लोभ मद कामा ॥ मैं० ॥ १ ॥ भूख प्यास सुख दुख नहिं जाकै, नाहीं बन पुर गामा । नहिं साहिब नहिं चाकर भाई, नहीं तात नहिं मामा ॥ मैं० ॥ २ ॥ भूलि अनादिथकी जग भटकत, लै पुद्गलका जामा । बुधजन संगति जिनगुरुकीतैं, मैं पाया मुझ ठामा ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(५१)

राग–काफी कनड़ी–ताल–पसतो ।

अब अघ करत लजाय रे भाई ॥ अब० ॥ टेक ॥ श्रावक घर उत्तम कुल आयो, भैंटे श्रीजिनराय ॥ अब०

॥ १ ॥ धन वनिता आभूषन परिगह; त्याग करौ दुख-दाय। जो अपना तू तजि न सकै पर,—सेयां नरक न जाय ॥ अव० ॥ २ ॥ विषयकाज क्यौं जनम गुमावै, नरभव कब मिलि जाय। हस्ती चढ़ि जो ईंधन ढोवै, बुधजन कौन बसाय ॥ अव० ॥ ३ ॥

(५२)

राग—काफी कनड़ी।

तोकौं सुख नहिं होगा लोभीड़ा! क्यौं भूल्या रे पर-भावनमैं ॥ तोकौं० ॥ टेक ॥ किसी भाँति कहुंका धन आवै, डोलत है इन दावनमैं ॥ तोकौं० ॥ १ ॥ व्याह करूं सुत जस जग गावै, लग्यौ रहै या भावनमैं ॥ तोकौं० ॥ २ ॥ दरव परिनमत अपनी गौंतैं, तू क्यौं रहित उपा-यनमैं ॥ तोकौं० ॥ ३ ॥ सुख तो है सन्तोष करनमैं, नाहीं चाह बढावनमैं ॥ तोकौं० ॥ ४ ॥ कै सुख है बुधजनकी संगति, कै सुख शिवपद पावनमैं ॥ तोकौं० ॥ ५ ॥

(५३)

राग—कनड़ी।

निरखे नाभिकुमारजी, मेरे नैन सफल भये ॥ निर० ॥ टेक ॥ नये नये वर मंगल आये, पाई निज रिधि सार ॥ निरखे० ॥१॥ रूप निहारन कारन हरिने, कीनी आंख हजार। वैरागी मुनिवर हू लखिकै, ल्यावत हरष अपार ॥ निरखे० ॥ २ ॥ भरम गयो तत्त्वारथ पायो, आवत ही दरबार। बुधजन चरन शरन गहि जाँचत, नहिं जाऊं परद्वार ॥ निरखे० ॥ ३ ॥

(५४)

राग–कनड़ी।

भला होगा तेरो यौं ही, जिनगुन पल न भुलाय हो॥ भला०॥ टेक॥ दुख मैटन सुखदैन सदा ही, नमिकै मन वच काय हो॥ भला०॥१॥ शक्री चक्री इन्द्र फनिन्द्र सु, वरनन करत थकाय हो। केवलज्ञानी त्रिभुवनस्वामी, ताकौं निशिदिन ध्याय हो॥ भला०॥ २॥ आवागमन-सुरहित निरंजन, परमातम जिनराय हो। बुधजन विधितैं पूजि चरन जिन, भव भवमैं सुखदाय हो॥ भला०॥३॥

(५५)

राग–कनड़ी।

उत्तम नरभव पायकै, मति भूलै रे रामा॥ मति भू०॥ टेक॥ कीट पशूका तन जब पाया, तब तू रह्या निकामा। अब नरदेही पाय सयाने, क्यौं न भजै प्रभुनामा॥ मति भू०॥ १॥ सुरपति याकी चाह करत उर, कब पाऊं नर-जामा। ऐसा रतन पायकैं भाई, क्यौं खोवत विन कामा॥ मति भू०॥ २॥ धन जोवन तन सुन्दर पाया, मगन भया लखि भामा। काल अचानक झटक खायगा, परे रहैंगे ठामा॥ मति०॥ ३॥ अपने स्वामीके पद-पंकज, करो हिये विसरामा। मैंटि कपट भ्रम अपना बुधजन, ज्यौं पावौ शिवधामा॥ मति भू०॥ ४॥

(५६)

धनि चन्दप्रभदेव, ऐसी सुबुधि उपाई॥ धनि०॥टेक॥ जगमैं कठिन विराग दशा है, सो दरपन लखि तुरत

उपाई ॥ धनि० ॥ १ ॥ लौकान्तिक आये ततखिन ही, चढ़ि सिविका वनओर चलाई। भये नगन सब परिग्रह तजिकै, नग चम्पातर लौंच लगाई ॥ धनि० ॥ २ ॥ महासेन धनि धनि लच्छमना, जिनकैं तुमसे सुत भये साईं। बुधजन वन्दत पाप निकन्दत, ऐसी सुबुधि करो मुझमाईं ॥ धनि० ॥ ३ ॥

(५७)

चुप रे मूढ अजान, हमसौं क्या बतलावै ॥ चुप० ॥ टेक ॥ ऐसा कारज कीया तैंनैं, जासौं तेरी हान ॥ चु० ॥ १ ॥ राम विना हैं मानुष जेते, भ्रात तात सम मान। कर्कश वचन बकै मति भाई, फूटत मेरे कान ॥ चुप० ॥ २ ॥ पूरब दुकृत किया था मैंने, उदय भया ते आन। नाथविछोहा हूवा यातैं, पै मिलसी या थान ॥ चुप० ॥ ३ ॥ मेरे उरमैं धीरज ऐसा, पति आवै या ठान। तब ही निग्रह ह्वै है तेरा, होनहार उर मान ॥ चुप० ॥ ४ ॥ कहां अजोध्या कहँ या लंका, कहाँ सीता कहँ आन। बुधजन देखो विधिका कारज, आगममाहिं बखान ॥ चुप० ॥ ५ ॥

(५८)

राग-कनड़ी एकतालो।

त्रिभुवननाथ हमारौ, हो जी ये तो जगत उजियारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ टेक ॥ परमौदारिक देहके माहीं, परमातम हितकारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ सहजैं ही जगमाहिं रह्यौ छै, दुष्ट मिथ्यात अँधारौ। ताकौं हरन करन समकित

रवि, केवलज्ञान निहारौं ॥ त्रिभुवन० ॥ २ ॥ त्रिविध शुद्ध भवि इनकौं पूजौ, नाना भक्ति उचारौ । कर्म काटि बुधजन शिव लै हौं, तजि संसार दुखारौ ॥ त्रिभु० ॥३॥

(५९)

राग—दीपचंदी ।

मेरी अरज कहानी, सुनि केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ टेक ॥ चेतनके सँग जड़ पुद्‌गल मिलि, सारी बुधि बौरानी ॥ मेरी० ॥ १ ॥ भव वनमाहीं फेरत मोकौं, लख चौरासी थानी । कौलौं बरनौं तुम सब जानो, जनम मरन दुखखानी ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग भलेतैं मिले बुधजनको, तुम जिनवर सुखदानी । मोह फांसिको काटि प्रभूजी, कीजे केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ ३ ॥

(६०)

तेरी बुद्धिकहानी, सुनि मूढ़ अज्ञानी ॥ तेरी० ॥ टेक॥ तनक विषय सुख लालच लाग्यौ, नंतकाल दुखखानी ॥ तेरी० ॥ १ ॥ जड़ चेतन मिलि बंध भये इक, ज्यौं पयमाहीं पानी । जुदा जुदा सरूप नहिं मानै, मिथ्या एकता मानी ॥ तेरी० ॥ २ ॥ हूं तौ बुधजन दृष्टा ज्ञाता, तन जड़ सरधा आनी । ते ही अविचल सुखी रहैंगे, होय मुक्तिवर प्रानी ॥ तेरी० ॥ ३ ॥

(६१)

राग—ईमन ।

तू मेरा कह्या मान रे निपट अयाना ॥ तू० ॥ टेक ॥ भव वन वाट मात सुत दारा, बंधु पथिकजन जान रे ।

इनतैं प्रीति न ला बिछुरैंगे, पावैंगो दुख–खान रे ॥ तू० ॥१॥ इकसे तन आतम मति आनैं, यो जड़ है तू ज्ञान रे । मोह-उदय वश भरम परत है, गुरु सिखवत सरधान रे ॥ तू० ॥ २ ॥ बादल रंग सम्पदा जगकी, छिनमैं जात विलान रे। तमाशवीन बनि यातैं बुधजन, सबतैं ममता हान रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(६२)

राग–ईमन तेतालो ।

हो विधिनाकी मोपै कही तौ न जाय ॥ हो० ॥ टेक ॥ सुलट उलट उलटी सुलटा दे, अदरस पुनि दरसाय ॥ हो० ॥१॥ उर्वशि नृत्य करत ही सनमुख, अमर परत हैं पाँय (?)। ताही छिनमैं फूल बनायौ, धूप परैं कुम्हलाय (?) ॥हो०॥२॥ नागा पाँय फिरत घर घर जब, सो कर दीनौं राय। ताहीको नरकनमैं कूकर, तोरि तोरि तन खाय ॥ हो० ॥३॥ करम उदय भूलै मति आपा, पुरुषारथको त्याय । बुधजन ध्यान धरै जब मुहुरत, तब सब ही नसि जाय ॥ हो०॥४॥

(६३)

जिनवानीके सुनेसौं मिथ्यात मिटै। मिथ्यात मिटै समकित प्रगटै ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ जैसैं प्रात होत रवि ऊगत, रैन तिमिर सब तुरत फटै ॥ जिनवानी० ॥ १ ॥ अनादि कालकी भूलि मिटावै, अपनी निधि घटमैं उघटै। त्याग विभाव सुभाव सुधारै, अनुभव करतां करम कटै ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ और काम तजि सेवो याकौं, या बिन नाहिं अज्ञान घटै ॥ बुधजन याभव परभवमाहीं, याकी हुंडी तुरत पटै ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

(६४)

सम्यग्ज्ञान विना, तेरो जनम अकारथ जाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ टेक ॥ अपने सुखमैं मगन रहत नहिं, परकी लेत वलाय । सीख सुगुरुकी एक न मानै, भव भवमैं दुख पाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ १ ॥ ज्यौं कपि आप काठ-लीलाकरि, प्रान तजै विललाय। ज्यौं निज मुखकरि जाल-मकरिया, आप मरै उलझाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ २ ॥ कठिन कमायो सव धन ज्वारी, छिनमैं देत गमाय । जैसैं रतन पायके भोंदू, विलखै आप गमाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ ३ ॥ देव शास्त्र गुरुको निहचैंकरि, मिथ्यामत मति ध्याय । सुरपति वांछा राखत याकी, ऐसी नर परजाय ॥ सम्यग्ज्ञान०

(६५)

राग–झंझोटी ।

शिवथानी निशानी जिनवानि हो ॥ शिव० ॥ टेक ॥ भवबनभ्रमन निवारन–कारन, आपा–पर–पहचानि हो ॥ शिव० ॥ १ ॥ कुमति पिशाच मिटावन लायक, स्याद मंत्र मुख आनि हो ॥ शिव० ॥ २ ॥ बुधजन मनवचतन-करि निशिदिन, सेवो सुखकी खानि हो ॥ शिव० ॥ ३ ॥

(६६)

देखो नया, आज उछाव भया ॥ देखो० ॥ टेक ॥ चंदपुरीमैं महासेन घर, चंदकुमार जया ॥ देखो० ॥ १ ॥ मातलखमनासुतको गजपै, लै हरि गिरपै गया ॥ देखो० ॥ २ ॥ आठ सहस कलसा सिर ढारे, वाजे वजत नया ॥ देखो० ॥ ३ ॥ सौंपि दियो पुनि मात गोदमैं, तांडव

(८४)

राग–सोरठ ।

भोगांरा[1] लोभीड़ा, नरभव खोयौ रे अजान ॥ भोगांरा० ॥ टेक ॥ धर्मकाजकौ कारन थौ यौ, सो भूल्यौ तू बान । हिंसा अँनृत परतिय चोरी, सेवत निजकरि जान ॥ भोगांरा० ॥ १ ॥ इंद्रीसुखमैं मगन हुवौ तू, परकौं आतम मान । वंध नवीन पड़ै छै यातैं, होवत मौटी हान ॥ भोगांरा० ॥ २ ॥ गयौ न कछु जो चेतौ बुधजन, पावौ अविचल थान । तन है जड़ तू दृष्टा ज्ञाता, कर लै यौं सरधान ॥ भोगांरा० ॥ ३ ॥

(८५)

म्हारी कौन सुनै, थे तौ सुनि ल्यो श्रीजिनराज ॥ म्हारी० ॥ टेक ॥ और सरब मतलबके गाहक, म्हांरौ सरत न काज । मोसे दीन अनाथ रंककौं, तुमतैं बनत इलाज ॥ म्हांरी० ॥ १ ॥ निज पर नेकु दिखावत नाहीं, मिथ्या तिमिर समाज । चंदप्रभू परकाश करौ उर, पाऊं धाम निजाज ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ थकित भयौ हूं गति गति फिरतां, दर्शन पायौ आज । बारंबार वीनवै बुधजन, सरन गहेकी लाज ॥ म्हांरी० ॥ ३ ॥

(८६)

राग–सोरठ ।

छिन न बिसारां चितसौं, अजी हो प्रभुजी थांनैं ॥ छिन० ॥ टेक ॥ वीतरागछबि निरखत नयना, हरष भयौ सो उर ही जानै ॥ छिन० ॥ १ ॥ तुम मत खारक

१ भोगोंका लोभी ।

दाख चाखिकै, आन निंमोरी[1] क्यौं मुख आनै । अब तौ सरनैं राखि रावरी, कर्म दुष्ट दुख दे छै म्हांनै ॥ छिन० ॥ २ ॥ वम्यौ मिथ्यामत अम्रत चाख्यौ, तुम भाख्यौ धाख्यौ मुझ कानै । निशि दिन थांकौ दर्श मिलौ मुझ, बुधजन ऐसी अरज वखानै ॥ छिन० ॥ ३ ॥

(८७)

वन्यौ म्हारै या घरीमैं रंग ॥ वन्यौ० ॥ टेक ॥ तत्त्वारथकी चरचा पाई, साधरमीकौ संग ॥ वन्यौ० ॥ १ ॥ श्रीजिनचरन वसे उरमाहीं, हरष भयौ सब अंग । ऐसी विधि भव भवमैं मिलिज्यौ, धर्मप्रसाद अभंग॥वन्यौ० ॥२॥

(८८)

राग–सोरठ ।

कींपर[2] करौ जी गुमान, थे तौ कै दिनका मिजमान ॥ कींपर० ॥ टेक ॥ आये कहांतैं कहां जावौगे, ये उर राखौ ज्ञान ॥ कींपर० ॥ १ ॥ नारायण वलभद्र चक्रवति, नाना रिद्धिनिधान । अपनी अपनी वारी भुगतिर, पहुँचे परभव थान ॥ कींपर० ॥ २ ॥ झूठ वोलि मायाचारीतैं, मति पीड़ौ परप्रान । तन धन दे अपने वश बुधजन, करि उपगार जहान ॥ कींपर० ॥ ३ ॥

(८९)

राग–सोरठ, एकतालो ।

चंदाप्रभु देव देख्या दुख भाग्यौ ॥ चंदा० ॥ टेक ॥ धन्य दैहाड़ो[3] मन्दिर आयौ, भाग अपूरव जाग्यौ ॥ चंदा०

---

१ नीमकी फली–लिम्बोरी । २ किसपर । ३ दिन ।

॥ १ ॥ रह्यौ भरम तव गति गति डोल्यौ, जनम-मरन-दौं दाग्यौ। तुमको देखि अपनपौ देख्यौ, सुख समतारस पाग्यौ ॥ चंदा० ॥ २ ॥ अब निरभय पद वेग हि पास्यों, हरष हिये यौं लाग्यौ। चरनन सेवा करै निरंतर, बुधजन गुन अनुराग्यौं ॥ चंदा० ॥ ३ ॥

(९०)

राग-सोरठ।

ज्ञानी थारी रीतिरौ अचंभौ मोनैं आवै छै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ भूलि सकति निज परवश ह्वै क्यौं, जनम जनम दुख पावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ क्रोध लोभ मद माया करि करि, आपौ आप फँसावै छै। फल भोगनकी वेर होय तव, भोगत क्यौं पिछतावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पाप काज करि धनकौं चाहै, धर्म विषैमैं बतावै छै। बुधजन नीति अनीति बनाई, सांचौ सौ बतरावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥

(९१)

अब घर आये चेतनराय, सजनी खेलौंगी मैं होरी ॥ अब० ॥ टेक ॥ आरस सोच कानि कुल हरिकै, धरि धीरज वरजोरी ॥ सजनी० ॥ १ ॥ बुरी कुमतिकी बात न बूझै, चितवत है मोओरी। वा गुरुजनकी वलि वलि जाऊं, दूरि करी मति भोरी ॥ सजनी० ॥ २ ॥ निज सुभाव जल हौज भराऊं, घोरूं निजरँग रोरी। निज ल्यौं ल्याय शुद्ध पिचकारी, छिरकन निज मति दोरी ॥ सजनी० ॥ ३ ॥ गाय रिझाय आप वश करिकै, जावन द्यौं नहि पोरी। बुधजन रचि मचि रहूं निरंतर, शक्ति अपूरव मोरी ॥ सजनी० ॥ ४ ॥

(९२)

राग—सोरठ ।

कर लै हो जीव, सुकृतका सौदा कर लै, परमारथ कारज कर लै हो ॥ करि० ॥ टेक ॥ उत्तम कुलकौं पायकैं, जिनमत रतन लहाय । भोग भोगवे कारनैं, क्यौं शठ देत गमाय ॥ सौदा० ॥ १ ॥ व्यापारी वनि आइयौ, नरभव हाट वजार । फल दायक व्यापार करि, नातर विपति तयार ॥ सौदा० ॥ २ ॥ भव अनन्त धरतौ फिर्यौ, चौरासी वनमाहिं । अव नरदेही पायकैं, अघ खोवै क्यौं नाहिं ॥ सौदा० ॥ ३ ॥ जिनमुनि आगम परखकै, पूजौ करि सरधान । कुगुरु कुदेवके मानतैं, फिर्यौ चतुर्गति थान ॥ सौदा० ॥ ४ ॥ मोह नींदमां सोवतां, डूवौ काल अटूट । वुधजन क्यौं जागौ नहीं, कर्म करत है लूट ॥ सौदा० ॥ ५ ॥

(९३)

राग—सोरठ ।

वेगि सुधि लीज्यौ म्हारी, श्रीजिनराज ॥ वेगि० ॥ टेक ॥ डरपावत नित आयु रहत है, संग लग्या जमराज ॥ वेगि० ॥१॥ जाके सुरनर नारक तिरजग, सव भोजनके साज । ऐसौ काल हर्यौ तुम साहव, यातैं मेरी लाज ॥ वेगि० ॥ २ ॥ परघर डोलत उदर भरनकौं, होत प्राततैं सांज । डूवत आश अथाह जलधिमैं, द्यो समभाव जिहाज ॥ वेगि० ॥ ३ ॥ घना दिनाकौ दुखी दयानिधि, औसर पायौ आज । वुधजन सेवक ठाड़ौ विनवै, कीज्यौ मेरौ काज ॥ वेगि० ॥ ४ ॥

(९४)

राग—सोरठ ।

गुरुने पिलाया जी; ज्ञान पियाला ॥ गुरु० ॥ टेक ॥ भइ बेखबरी परभावांकी, निजरसमैं मतवाला ॥ गुरु० ॥ १ ॥ यों तो छाक जात नहिं छिनहूं, मिटि गये आन जँ-जाला । अदभुत आनँद मगन ध्यानमैं, वुधजन हाल सम्हाला ॥ गुरु० ॥ २ ॥

(९५)

राग—सोरठ ।

मति भोगन राचौ जी, भव भवमैं दुख देत घना ॥ मति० ॥ टेक ॥ इनके कारन गति गतिमाहीं, नाहक नाचौ जी । झूठे सुखके काज धरममैं, पाड़ौ खांचौ जी ॥ मति० ॥ १ ॥ पूरव कर्म उदय सुख आयां, राचौ माचौ जी । पाप उदय पीड़ा भोगनमैं, क्यौं मन काचौ जी ॥ मति० ॥ २ ॥ सुख अनन्तके धारक तुम ही, पर क्यौं जांचौ जी । वुधजन गुरुका वचन हियामैं, जानौं सांचौ जी ॥ मति० ॥ ३ ॥

(९६)

थांका गुन गास्यां जी जिनजी राज, थांका दरसनतैं अघ नास्या ॥ थांका० ॥ टेक ॥ थां सारीखा तीनलोकमैं, और न दूजा भास्या जी ॥ जिनजी० ॥१॥ अनुभव रसतैं सींचि सींचिकै, भव आताप बुझास्यां जी । वुधजनकौ विकलप सब भाग्यौ, अनुक्रमतैं शिव पास्यां जी ॥ जिनजी० ॥ २ ॥

(९७)

राग-सोरठ।

हमकौं कछू भय ना रे, जान लियौ संसार ॥ हमकौं० टेक ॥ जो निगोदमैं सो ही मुझमैं, सो ही मोखमँझार। निश्चय भेद कछू भी नाहीं, भेद गिनै संसार ॥ हमकौं० ॥ १ ॥ परवश ह्वै आपा विसारिकै, राग दोषकौं धार। जीवत मरत अनादि कालतैं, यौं ही है उरझार ॥ हमकौं० ॥ २ ॥ जाकरि जैसैं जाहि समयमैं, जो होतव जा द्वार। सो बनि है टरि है कछु नाहीं, करि लीनौं निरधार ॥ हमकौं० ॥ ३ ॥ अगनि जरावै पानी वोवै, विछुरत मिलत अपार। सो पुद्गल रूपी मैं बुधजन, सबकौं जाननहार ॥ हमकौं० ॥ ४ ॥

(९८)

राग-सोरठ।

आज तौ बधाई हो नाभिद्वार ॥ आज० ॥ टेक ॥ मरुदेवी माताके उरमैं, जनमैं ऋषभकुमार ॥ आज० ॥१॥ सची इन्द्र सुर सब मिलि आये, नाचत हैं सुखकार। हरषि हरषि पुरके नरनारी, गावत मंगलचार ॥ आज० ॥ २ ॥ ऐसौ बालक हूवो ताकैं, गुनकौ नाहीं पार। तन मन वचतैं वंदत बुधजन, है भव-तारनहार ॥ आज०॥३॥

(९९)

सुणिल्यो जीव सुजान, सीख सुगुरु हितकी कही ॥ सुणि० ॥टेक॥ रुल्यौ अनन्ती बार, गति गति साता ना लही ॥ सुणि० ॥ १ ॥ कोइक पुन्य सँजोग, श्रावक कुल नरगति लही।

मिले देव निरदोष, वाणी भी जिनकी कही ॥ सुणि० ॥२॥ चरचाको परसंग, अरु सरध्यामैं बैठिवो । ऐसा औसर फेरि, कोटि जनम नहिं भैंटिवो ॥ सुणि० ॥ ३ ॥ झूठी आशा छोड़ि, तत्त्वारथ रुचि धारिल्यो । यामैं कछु न विगार आपो आप सुधारिल्यो ॥ सुणि० ॥ ४ ॥ तनको आतम मानि, भोग विषय कारज करौ । यौं ही करत अकाज, भव भव क्यौं कूवे परौ ॥ सुणि० ॥ ५ ॥ कोटि ग्रंथकौ सार, जो भाई बुधजन करौ । राग दोप परिहार, याही भवसौं उद्धरौ ॥ सुणि० ॥ ६ ॥

(१००)

राग–सोरठ ।

अब थे क्यौं दुख पावौ रे जियरा, जिनमत समकित धारौ ॥ अब० ॥ टेक ॥ निलज नारि सुत व्यसनी मूरख, किंकर करत विगारौ । साहिब सूम अदेखक भैया, कैसैं करत गुजारौ ॥ अब० ॥ १ ॥ वाय पित्त कफ खांसी तन दृग, दीसत नाहिं उजारौ । करजदार अरुबेरुजगारी, कोऊ नाहिं सहारौ ॥ अब० ॥ २ ॥ इत्यादिक दुख सहज जानियौ, सुनियौ अब विस्तारौ । लख चौरासी अनत भवनलौं, जनम मरन दुख भारौ ॥ अब० ॥ ३ ॥ दोपरहित जिनवरपद पूजौ, गुरु निरग्रंथ विचारौ । बुधजन धर्म दया उर धारौ, व्है है जै जैकारौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

(१०१)

राग–सोरठ ।

म्हांरौ मन लीनौ छै थे मोहि, आनँदघन जी ॥ म्हारो०

॥ टेक ॥ ठौर ठौर सारे जग भटक्यौ, ऐसो मिल्यौ नहिं कोय । चंचल चित मुझि अचल भयौ है, निरखत चरनन तोय ॥ म्हांरो० ॥ १ ॥ हरष भयौ सो उर ही जानैं, वरनौं जात न सोय । अनतकालके कर्म नसैंगे, सरधा आई जोय ॥ म्हांरो० ॥ २ ॥ निरखत ही मिथ्यात मिट्यौ सब, ज्यौं रवितैं दिन होय । बुधजन उरमैं राजौ नित प्रति, चरनकमल तुम दोय ॥ म्हांरो० ॥ ३ ॥

(१०२)

राग–सोरठ ।

आनँद हरष अपार, तुम भैंटत उरमैं भया ॥ आनंद० ॥ टेक ॥ नास्या तिमिर मिथ्यात, समकित सूरज ऊगिया ॥ आनँद० ॥ १ ॥ मिटि गयौ भव आताप, समता रससौं सींचिया । जान्या जगत असार, निज नरभवपद लखि लिया ॥ आनँद० ॥ २ ॥ परमौदारिक काय, शुद्धातम पद तुम धरे । दोष अठारै नाहिं, अनत चतुष्टय गुन भरे॥ ॥ आनँद० ॥ ३ ॥ उपजी तीर्थविभूति, कर्म घातिया सब हरे । तत्त्वारथ उपदेश, देव धर्म सनमुख करे ॥ आनँद० ॥ ४ ॥ शोभा कहिय न जाय, सिंहासन गिर मेरसौं । कलपवृक्षके फूल, वरषत हैं चहुँओरसौं ॥ आनँद ॥ ५ ॥ बाजत दुंदभि जोर, सुनि हरषत भवि घोरसौं । भामंडल भव देखि, छूटत हैं भवि सोरसौं ॥ आनँद० ॥ ६ ॥ तीन छत्र निशि चंद, तीन लोक सेवा करैं । चौंसठ चमर सफेद, गंधोदकसे सिर ढरैं ॥ आनँद० ॥ ७ ॥ वृक्ष

अशोक अनूप, शोक सरव जनकौं हरै । उपमा कहिय न जाय, बुधजन पद वंदन करै ॥ आनँद० ॥ ८ ॥

(१०३)

राग–विहाग ।

सीख तोहि भाषत हूं या, दुख मेंटन सुख होय ॥ सीख० ॥ टेक ॥ त्यागि अन्याय कषाय विषयकौं, भोगि न्याय ही सोय ॥ सीख० ॥ १ ॥ मंडै धरमराज नहिं दंडै, सुजस कहै सब लोय । यह भौ सुख परभौ सुख हो है, जन्म जन्म मल धोय ॥ सीख० ॥ २ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म न पूजौ, प्रान हरौ किन कोय । जिनमत जिनगुरु जिनवर सेवौ, तत्त्वारथ रुचि जोय ॥ सीख० ॥ ३ ॥ हिंसा अँनृत परतिय चोरी, क्रोध लोभ मद खोय । दया दान पूजा संजम कर, बुधजन शिव है तोय ॥ सीख० ॥४॥

(१०४)

तेरौ गुन गावत हूं मैं, निजहित मोहि जताय दे ॥ तेरौ० ॥ टेक ॥ शिवपुरकी मोकौं सुधि नाहीं, भूलि अनादि मिटाय दे ॥ तेरौ० ॥ १ ॥ भ्रमत फिरत हूं भव वनमाहीं, शिवपुर वाट वताय दे । मोह नींदवश घूमत हूं नित, ज्ञान वधाय जगाय दे ॥ तेरौ० ॥ २ ॥ कर्म शत्रु भव भव दुख दे हैं, इनतैं मोहि छुटाय दे । बुधजन तुम चरना सिर नावै, एती वात वनाय दे ॥ तेरौ० ॥ ३ ॥

(१०५)

राग–विहाग ।

मनुवा बावला हो गया ॥ मनुवा० ॥ टेक ॥ परवश

वसतु जगतकी सारीं, निज वश चाहै लया ॥ मनुवा० ॥ १ ॥ जीरन चीर मिल्या है उदय वश, यौ मांगत क्यों नया ॥ मनुवा० ॥ २ ॥ जो कण वोया प्रथम भूमिमैं, सो कब औरै भया ॥ मनुवा० ॥ ३ ॥ करत अकाज आनकौं निज गिन, सुधपद त्याग दया ॥ मनुवा० ॥ ४ ॥ आप आप वोरत विषयी है, बुधजन ढीठ भया ॥ मनुवा० ॥ ५ ॥

(१०६)

भज जिन चतुर्विंशति नाम ॥ भजि० ॥ टेक ॥ जे भजें ते उतरि भवदधि, लयौं शिव सुखधाम ॥ भज० ॥ १ ॥ ऋषभ अजित संभव स्वामी, अभिनँदन अभिराम । सुमति पदम सुपास चंदा, पुप्पदंत प्रनाम ॥ भज० ॥ २ ॥ शीत श्रेयान् वासुपूजा, विमल नन्त सुठाम । धर्म सांति जु कुंथु अरहा, मल्लि राखै माम ॥ भज० ॥ ३ ॥ मुनिसुवृत नमि नेमिनाथा, पार्स सन्मति स्वाम । राखि निश्चय-जपौं बुधजन, पुरै सबकी काम ॥ भज० ॥ ४ ॥

(१०७)

राग-मालकोस ।

अब तू जान रे चेतन जान, तेरी होवत है नित हान ॥ अब० ॥ टेक ॥ रथ वाजि करी असवारी, नाना विधि भोग तयारी । सुंदर तिय सेज सँवारी, तन रोग भयौ या ख्वारी ॥ अब० ॥ १ ॥ ऊंचे गढ़ महल वनाये, बहु तोप सुभट रखवाये । जहाँ रुपया मुहर धराये, सब

छांड़ि चले जम आये ॥ अव० ॥ २ ॥ भूखा है खाने लागै, धाया पट भूषण पागै । सत भये सहस लखि मांगै, या तिसना नाहीं भागै ॥ अव० ॥ ३ ॥ ये अथिर सौंज परिवारौ, थिर चेतन क्यौं न सम्हारौ । बुधजन ममता सव टारौ, सब आपा आप सुधारौ ॥ अव० ॥ ४ ॥

(१०८)

राग—कालिंगड़ो परज धीमो तेतालो ।

म्हे तौ थांका चरणां लागां, आन भावकी परणति त्यागां ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ और देव सेया दुख पाया, थे पाया छौ अव वड़भागां ॥ म्हे० ॥ १ ॥ एक अरज म्हांकी सुण जगपति, मोह नींदसौं अवकै जागां । निज सुभाव थिरता बुधि दीजे, और कछू म्हे नाहीं मांगां ॥ म्हे० ॥ २ ॥

(१०९)

राग—कालिंगड़ो ।

आज मनरी बनी छै जिनराज ॥ आज० ॥ टेक ॥ थांको ही सुमरन थांको ही पूजन, थांको ही तत्त्वविचार ॥ आज० ॥ १ ॥ थांके विछुरैं अति दुख पायौ, मोपै कह्यौ न जाय । अव सनमुख तुम नयनौं निरखे, धन्य मनुष परजाय ॥ आज० ॥ २ ॥ आज हि पातक नास्यौ मेरौ, ऊतरस्यौं भव पार । यह प्रतीत बुधजन उर आई, लेस्यौं शिवसुख सार ॥ आज० ॥ ३ ॥

(११०)

हो जी म्हे निशिदिन ध्यावां, ले ले बलहारियां ॥ हो जी०

॥ टेक ॥ लोकालोक निहारक स्वामी, दीठे नैन हमारियां ॥ हो जी० ॥ १ ॥ पट चालीसौं गुनके धारक, दोष अठारह टालियां । वुधजन शरनैं आयौ थांके, थे शरणागत पालियां ॥ हो जी० ॥ २ ॥

(१११)

राग—परज ।

म्हे तौ ऊभा राज थांनैं अरज करां छां, मानौं महाराज ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ केवलज्ञानी त्रिभुवननामी, अँतरजामी सिरताज ॥ म्हे० ॥ १ ॥ मोह शत्रु खोटौ संग लाग्यौ, वहुत करै छै अकाज । यातैं वेगि वचावौ म्हानैं, थांनैं म्हाकी लाज ॥ म्हे० ॥ २ ॥ चोर चँडाल अनेक उवारे, गीध श्याल मृगराज । तौ वुधजन किंकरके हितमैं, ढील कहा जिनराज ॥ म्हे ० ॥ ३ ॥

(११२)

राग—कालिंगड़ो ।

कुमतीको कारज कूड़ौ, हो जी ॥ कुमती० ॥ टेक ॥ थांकी नारि सयानी सुमती, मतो कहै छै रूड़ौ जी ॥ कुमती० ॥ १ ॥ अनन्तानुवंधीकी जाई, क्रोध लोभ मद भाई । माया वहिन पिता मिथ्यामत, या कुल कुमती पाई जी ॥ कुमती० ॥ २ ॥ घरकौ ज्ञान धन वादि लुटावै, राग दोष उपजावै । तव निर्वल लखि पकरि करम रिपु, गति गति नाच नचावै ॥ कुमती० ॥ ३ ॥ या परिकरसौं ममत निवारौ, वुधजन सीख सम्हारौ । धरमसुता सुमती सँग राचौ, मुक्ति महलमैं पधारौ ॥ कुमती० ॥ ४ ॥

सूतौ जियरौ जागौ ॥ लखैं० ॥ १ ॥ निज संपति निजही-मैं पाई, तब निज अनुभव लागौ । बुधजन हरषत आनँद बरषत, अंमृत झरमैं पागौ ॥ लखैं० ॥ २ ॥

(११९)

थे म्हारे मन भायाजी चंद जिनंदा, बहुत दिनामैं पाया छौ जी ॥ थे० ॥ टेक ॥ सब आताप गया ततखिन ही, उपज्या हरष अमंदा ॥ थे० ॥ १ ॥ जे मिलिया तिन ही दुख भरिया, भई हमारी निंदा । तुम निरखत ही भरम गुमाया, पाया सुखका कंदा ॥ थे० ॥ २ ॥ गुन अनन्त मुखतैं किम गाऊं, हारे फनिंद मुनिंदा । भक्ति तिहारी अति हितकारी, जाँचत बुधजन वंदा ॥ थे० ॥ ३ ॥

(१२०)

मैं ऐसा देहरा बनाऊं, ताकै तीन रतन मुक्ता लगाऊं ॥ मैं० ॥ टेक ॥ निज प्रदेसकी भीत रचाऊं, समता कली धुलाऊं । चिदानंदकी मूरति थापूं , लखि लखि आनँद पाऊं ॥ मैं० ॥ १ ॥ कर्म किजोड़ा तुरत बुहारूं, चादर दया बिछाऊं । क्षमा द्रव्यसौं पूजा करिकै, अजपा गान गवा-ऊं ॥ मैं० ॥ ॥ २ ॥ अनहद बाजे बजे अनौखे, और कछू नहिं चाऊं । बुधजन यामैं बसौ निरंतर, याही वर मैं पाऊं ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(१२१)

राग–गजल रेखता कालिंगड़ो ।

नरदेहीको धरी तौ कछू धर्म भी करो । विषयोंके संग राचि क्यों, नाहक नरक परो ॥ नर० ॥ टेक ॥ चौरासि

लाख जौनि तैंनै, केई वार धरी। तू निजसुभाव पागिकै, पर त्याग ना करी॥ नर० ॥ १ ॥ तू आन देव पूजता है, होय लोभमें। तू जान पूछ क्यों परै, हैवान कूपमें॥ नर० ॥ २ ॥ है धनि नसीव तेरा जन्म, जैनकुल भया। अव तो मिथ्यात छोड़ दे, कृतकृत्य हो गया॥ नर० ॥ ३ ॥ पूरवजनममें जो करम, तूने कमाया है। ताके उदैको पायके, सुख दुःख आया है॥ नर० ॥ ४ ॥ भला वुरा मानैं मती, तू फेरि फँसैगा। बुधजनकी सीख मान, तेरा काज सधैगा॥ नर० ॥ ५ ॥

(१२२)

ऋषभ तुमसे स्वाल[1] मेरा, तुही है नाथ जगकेरा॥ ऋषभ० ॥ टेक ॥ सुना इंसाफ है तेरा, विगरमतलव हितू मेरा॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ हुई अर होयगी अव है, लखौ तुम ज्ञानमें सव है। इसीसे आपसे कहना, औरसे गरज क्या लहना॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ न मानी सीख सतगुरकी, न जानी वाट निज घरकी। हुआ मद मोहमें माता, घने विषयनके रँग राता॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ गिना परद्रव्यको मेरा, तवै वसु कर्मने घेरा। हरा गुन ज्ञान धन मेरा, करा विधि जीवको चेरा॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥ नचावै स्वांग रचि मोकों, कहूं क्या खवर सव तोकों। सहज भई वात अति वाँकी, अधमको आपकी झाँकी॥ ऋषभ० ॥ ५ ॥ कहूं क्या तुम सिफत[2] सांई, वनत नहिं इन्द्रसों गाई।

---

१ सवाल—याचनाका प्रश्न। २ प्रशंसा।

तिरे भविजीव भव-सरतैं, तुम्हारा नाव उर धरतैं ॥ ऋषभ० ॥ ६ ॥ मेरा मतलव अवर नाहीं, मेरा तो भाव मुझमाहीं । वाहि पर दीजिये थिरता, अरज बुधजन यही करता ॥ ऋषभ० ॥ ७ ॥

(१२३)

दुनियांका ये हवाल क्यों पहिचानता नहीं । दिन आफताव[1] ऊगा, सो रैनको नहीं ॥ दुनि० ॥ टेक ॥ तनसेंति तेरी एकता, क्यों मानता नहीं । होता है जाना स्यात स्यात, जानता नहीं ॥ दुनि० ॥ १ ॥ नित भूख प्यास शीत घाम, देह व्यापतैं । तू क्यों तमाशवीन[2] दुखी, मान आपतैं ॥ दुनि० ॥ २ ॥ दिलचंदगी[3] दिलगीरी[4] है निज, पुन्य पापतैं । (फिर) करमजाल फँसता क्यों, करि विलाप तैं ॥ दुनि० ॥ ३ ॥ मतलवके गरजी ये सव, कुटुंव घरभरा । मतवाय चढ़ी तेरे, किन सीर ना करा ॥ दुनि० ॥ ४ ॥ इनकी खुशामदीसे, तू केई वार मरा । इतना सयान लीजे, इन वीच क्यों परा ॥ दुनि० ॥ ५ ॥ आई है वुलवुल शामको[5], सव ओर ओरतैं । करि रैनका वसेरा, विछुरेंगी भोरतैं ॥ दुनि० ॥ ६ ॥ इनपै न नेकु रीझो, खीजो न जोरतैं । भोगोगे विपति भौ भौ, मिथ्यात दौरतैं ॥ दुनि० ॥ ७ ॥ वाजीगरोंका ख्याल जैसा, लोकसम्पदा । इसके दिमाकसेती[6], दोजकमें झंपदा ॥ दुनि० ॥

---

१ सूर्य । २ तमाशा देखनेवाला । ३ खुशी । ४ रंज । ५ संध्याको । ६ घमंडसे ।

८ ॥ जल्दी परेजै[1] कीजे, परके मिलापका । दिलमस्त रहो बुधजन, लखि हाल आपका ॥ दुनि० ॥ ९ ॥

(१२४)

इस वक्त जो भविकजन, नहिं सावधान होगा । इस गाफिलीसे तेरा, खाना खराव होगा ॥ इस० ॥ टेक ॥ मिथ्यातका अँधेरा, गम नाहिं मेरा तेरा । दिन दोयका वसेरा, चलना सिताँव[2] होगा ॥ इस० ॥ १ ॥ जेवर जहानमाईं, दामिनि ज्यों दे दिखाई । इसपै गरूरताई, जिससे जवाँल[3] होगा ॥ इस० ॥ २ ॥ ज्वानीमें हुवा जाँलिम[4], सव देखते हि आँलम[5] । रमता विरानी वाँलम[6], यातैं वेहाल होगा ॥ इस० ॥ ३ ॥ झूठे मँजेके[7]माईं, सव जिंदगी गमाई । अजहूँ सँतोप नाहीं, मरना जरूर होगा ॥ इस० ॥ ४ ॥ जीवोंपै मिहर दीजे, जोरू[8]-परेज कीजे । जरका[9] न लोभ लीजे, बुधजन सँवाव[10] होगा ॥ इस० ॥ ५ ॥

(१२५)

कोई भोगको न चाहो, यह भोग वँद[11] वला है ॥ कोई० ॥ टेक ॥ मिलना सहज नहीं है, रहनेकी गम नहीं है, [12]सेनें-सेती सुनी है, रावनसा खाक मिला है ॥ कोई० ॥१॥ वानीतैं हिरन हरिया, रसनातैं मीन मरिया, कैंरनी[13] कैंरी[14] पँकरिया[15], पावक पतँग जला है ॥ कोई० ॥ १ ॥ अलि नासिकाके काजैं, वसिया है कौंलँ[16]-मांजैं, जव होय

---

१ परहेज—त्याग । २ जल्दी । ३ खराबी । ४ जुल्मकरनेवाला—अन्यायी । ५ मनुष्य । ६ स्त्री । ७ मजेमें । ८ स्त्री—त्याग । ९ धनका । १० पुण्य । ११ बुरी वला है । १२ सेवन करनेसे । १३ हथिनी । १४ हाथी । १५ पकड़ा गया । १६ कमलमें ।

गई सांजै, ततखिन पिरान दला है ॥ कोई० ॥ २ ॥ विषयोंसे रागताई, ले जात नर्कमाई, कोई नहीं सहाई, काटैं तहां गला है ॥ कोई० ॥ ३ ॥ बुधजनकी सीख लीजे, आतुरता त्याग दीजे, जलदी संतोष कीजे, इसमें तेरा भला है ॥ कोई० ॥ ४ ॥

(१२६)

चन्दजिन विलोकवेतैं, फंद गलि गया। धंद सब जगतके विफल, आज लखि लिया ॥ चंद० ॥ टेक ॥ शुद्ध चिदानंद-खंध, पुद्गलके माहिं। पहिचान्या हममें हम, संशय भ्रम नाहिं ॥ चंद० ॥ टेक ॥ सो न ईस सो न दास, सो नहीं है रंक। ऊंच नीच गोत नाहिं, नित्य है निशंक ॥ चंद० ॥ १ ॥ गंध वर्न फरस स्वाद, वीस गुन नहीं। एक आतमा अखंड, ज्ञान है सही ॥ चंद० ॥ २ ॥ परकौं जानि ठानि परकी, वानि पर भया, परकी साथ दुनियांमैं, खेदकौं लया ॥ चंद० ॥३॥ काम क्रोध कपट मान, लोभकौं करा। नारकी नर देव पशू होयके फिरा ॥ चंद० ॥ ४ ॥ ऐसे वखतके बीच ईस, दरस तुम दिया। मिहरवान होय दास आपका किया ॥ चंद० ॥५॥ जौलौं कर्म काटि मोख धाम ना गया। तौलौं बुधजनकौं शर्न राख करि मया ॥ चंद० ॥६॥

(१२७)

मद मोहकी शराब पी खराब हो रहा। बकता है बेहिसाब ना किताबका कहा ॥ मद० ॥ टेक ॥ देता नहीं

1 प्राण।

जवाव तुझे क्या गरूर है। ये वक्त चला जाता, इसकी जरूर है ॥ मद० ॥ १ ॥ जेर जिंदगी जवानी, जाहिर जहानमें। सव सपनेकी दौलत, रहती न ध्यानमें ॥ मर० ॥ २ ॥ झूठे मजेकेमाहीं, सव सम्पदा दई। तेरे ओकूप (?) सेती, तू आपदा लई ॥ मद० ॥ ३ ॥ साहिव है सभीका ये, इसक क्या लिया। करता है ख्याल सवपै, वेशर्म हो गया ॥ मद० ॥ ४ ॥ निज हालका कमाल है, सम्हाल तो करो। सव साहिवी हैं इसमें, वुधजन निगह धरो ॥ मद० ॥ ५ ॥

(१२८)

राग–मल्हार।

हो राज म्हें तौ वारी जी, थांनैं देखि ऋषभ जिन जी, अरज करूं चित लाय ॥ हो० ॥ टेक ॥ परिग्रहरहित सहित रिधि नाना, समोसरन समुदाय। दुष्ट कर्म किम जीतियौ जी, धर्म क्षमा उर ध्याय ॥ हो० ॥ १ ॥ निंदनीक दुख भोगवैं, वंदक सव सुख पाय। या अदभुत वैरागता जी, मोतैं वरनी न जाय ॥ हो० ॥ २ ॥ आन देवकी मानतैं, पाई वहु परजाय। अव वुधजन शरनौ गह्यौ जी, आवागमन मिटाय ॥ हो० ॥ ३ ॥

(१२९)

राग–मल्हार।

देखे मुनिराज आज जीवनमूल वे ॥ देखे० टेक ॥ सीस लगावत सुरपति जिनकी, चरन कमलकी धूल वे ॥ दे० ॥ १ ॥

---

१ घमंड। २ धन।

सूखी सरिता नीर वहत है, वैर तज्यौ मृग सूर वे। चालत मंद सुगंध पवन वन, फूल रहे सब फूल वे ॥ देखे० ॥२॥ तनकी तनक खबर नहिं तिनकौं, जर जावौ जैसैं तूल वे। रंक रावतैं रंच न ममता, मानत कनककौं धूल वे॥ देखे० ॥ ३ ॥ भेद करत हैं चेतन जड़कौ, मैंटत हैं भवि-भूल वे। उपगारक लखि बुधजन उरमैं, धारत हुकम कबूल वे ॥ देखे० ॥ ४ ॥

(१३०)

राग—मल्हार।

जगतपति तुम हौ श्रीजिनराई॥ जगत० ॥ टेक ॥ और सकल परिग्रहके धारक, तुम त्यागी हौ सांई ॥ जगत० ॥ १ ॥ गर्भमास पँदरै लौं धनपति, रत्नवृष्टि वरसाई। जनम समय गिरिराज शिखरपर, न्हौंन कर्यौ सुरराई ॥ जगत० ॥ २ ॥ सदन त्यागि वनमैं कच लौंचत, इंद्रन पूजा रचाई। सुकलध्यानतैं केवल उपज्यौ, लोकालोक दिखाई ॥ जगत० ॥ ३ ॥ सर्व कर्म हरि प्रगटी शुद्धता, नित्य निरंजनताई। मनवचतन बुधजन वंदत है, द्यो समता सुखदाई ॥ जगत० ॥ ४ ॥

(१३१)

अहो! अब विलम न कीजे हो। भवि कारज कर लीजे हो ॥ अहो० ॥ टेक ॥ चौरासी लख जौंनिवीचमैं, नर-भव कब लीजे ॥ अहो० ॥ १ ॥ श्रवन अंजुली धारि जिनेश्वर,—वचनामृत पीजे। निज स्वभावमैं राचि पराई, परनति तजि दीजे ॥ अहो० ॥ २ ॥ तनक विषयहित

काल अनन्ता, भव भव क्यौं छीजे । बुधजन जिनपद सेय सयानें, अजर अमर जीजे ॥ ३ ॥

(१३२)

राग-गौड़ मल्हार ।

सुरनरमुनिजनमोहनकौं मोहि, दर्शन देखन दै री ॥ भव भरमनतैं दुखी फिरत हूं, अब जिन चरनन रहनै दै ॥ सुर० ॥ १ ॥ सूर स्याल कपि सिंह न्यौलकी, विपति हरी इन सरनौं दै । बलिहारी बुधजन या दिनकी, बड़े भाग पद परसन दै ॥ सुर० ॥ २ ॥

(१३३)

राग-रेखता ।

अरज जिनराज यह मेरी, इसा औसर बतावोगे ॥ अरज० ॥ टेक ॥ हरो इन दुष्ट करमनको, मुकतिका पद दिलावोगे ॥ अरज० ॥ १ ॥ करूं जब भेष मुनिवरका, अवर विकलप विसारूंगा । रहूंगा आप आपेमें, परिग्रहको विड़ारूंगा ॥ अरज० ॥२॥ फिर्‌या संसार सारेमें, दुखी मैं सब लख्या दुखिया । सुनत जिनवानि गुरुमुखिया, लख्या चेतन परम सुखिया ॥ अरज० ॥ ३ ॥ पराया आपना जाना, बनाया काज मन माना । गहाया कुगति तैखाना, लहाया विपति बिललाना ॥ अरज० ॥ ४ ॥ जगतमें जनम अर मरना, डरा मैं आ लिया शरना । मिहर बुधजनपै या करना, हरो परतैं ममत धरना ॥ अरज० ॥ ५ ॥

मोखि मिला दे जीव ॥ निरखि० ॥ ३ ॥ वुधजन सहजैं सुरगति देहै, वहुरि अनँत सुख द्यावैं जीव ॥ निरखि० ॥ ४ ॥

(१४८)

तुम विन जगमैं कौन हमारा ॥ तुम० ॥ टेक ॥ जौलौं स्वारथ तौलौं मेरे, विन स्वारथ नहिं देत सहारा। और न कोई है या जगमैं, तुम ही हौ सवके उपगारा ॥ तुम० ॥ २ ॥ इंद नरिंद फनिंद मिलि सेवत, लखि भवसागर-तारनहारा ॥ तुम० ॥ ३ ॥ भेद विज्ञान होत निज परका, संशय भरम करत निरवारा ॥ तुम० ॥ ४ ॥ अनेक जन्मके पातक नासे, वुधजनके उर हरप अपारा ॥ तुम० ॥ ५ ॥

(१४९)

निसि दिन लख्या कर रे; तन मन वचन थिर रे। ये ज्ञानमइ जिनराजकौं, ज्यौं ह्वै सुफल मन रे ॥ निसि० ॥ टेक ॥ ये भवि तेरा धन रे, तोकौं मिले जिन रे। कर पूज चरननकी सदा, सँचि पुन्यका धन रे ॥ निसि० ॥ १ ॥ सुनिकैं वचन जिन रे; सरधान धरि उर रे। करि जन्म तेरेका भला, या भली है छिन रे ॥ निसि० ॥ २ ॥ वुधजन कहै सुन रे, सव पापकौं हन रे। अव मिल्या औसर है भला, करि जाप जिन जिन रे ॥ निसि० ॥ ३ ॥

(१५०)

मनुवो लागि रह्यौ जी, मुनिपूजा विन रह्यौ न जाय

॥ मनुवो० ॥ टेक ॥ कोटि वात पिय क्यौं कहौ, हूं मानूं नहिं एक। बोधमती गुरु ना नमूं, याही म्हांरै टेक ॥मनुवो० ॥ १ ॥ जन्म मृत्यु सुख दुख विपति, वैरी मीत समान। राग दोष परिग्रहरहित, वे गुरु मेरे जान ॥ मनुवो० ॥२॥ सुर शिवदायक जैन गुरु, जिनकैं दया प्रधान । हिंसक भोगी पातकी, कुगतिदाइ गुरु आन ॥ मनुवो० ॥ ३ ॥ खोटी कीनी पीव तुम, मुनिके गल अहि डारि । थे तो नरकां जायस्यो, वे नहिं काढ़ें डारि ॥ मनुवो० ॥ ४ ॥ श्रेणिक सँगतें चेलणा, खायक समकित धार। आप सातमाँ नरक हरि, पहुँचे प्रथममँझार ॥ मनुवो० ॥ ५ ॥ तीर्थंकर पद धारसी, आवत कालमँझार। बुधजन पद वंदन करें, मेरी विपता टार ॥ मनुवो० ॥ ६ ॥

(१५१)

राग-सोरठ।

राग दोष हंकार त्यागकरि शुद्ध भया जी थे तौ॥ राग० ॥ टेक ॥ तारन तरन सुविरद रावरो, मेरी ओर निहार ॥ राग० ॥ १ ॥ द्रव गुन परजय तीनकालका, लखि लीना विस्तार। धुनि सुनि मुनिवर गनधर कीनैं, आगम भविहितकार ॥ राग० ॥ २ ॥ जा मति करिकै जा विधि करिकै, उतर गये हो पार। सो ही बुधजनकौं बुधि दीजे, कीजे, यौं उपगार ॥ राग० ॥ ३ ॥

(१५२)

अदभुत हरष भयौ यौं मनमैं, जिन साहिब दीठे नैननमें ॥ अदभुत० ॥ टेक ॥ गुन अनन्त मति निपट अल्प

है, क्योंकरि सो वरनौं वैननमैं ॥ अदभुत० ॥ १ ॥ भरम नस्यौ भास्यौ तत्त्वारथ, ज्यौं निकस्यौ रवि वादर-घनमैं ॥ अदभुत० ॥ २ ॥ ऋद्धि अनादी भूली पाई, बुधजन राजै अति चैननमैं ॥ अदभुत० ॥ ३ ॥

(१५३)

राग–जंगलो ।

ओर तो निहारौ दुखिया अति घणौ हो सांइयां ॥ ओर० ॥ टेक ॥ गति च्यारन धारिवो सांइयां, जनम मरनकौ कष्ट अपार; म्हारा साइयां ॥ ओर० ॥ १ ॥ तारण विरद तिहारौ सांइयां, मोहि उतारोगे पार । बुधजन दास तिहारौ सांइयां, कीजे यौ उपगार; म्हारा सांइयां ॥ ओर ॥ २ ॥

(१५४)

तूही तूही याद आवै जगतमैं ॥ तूही० ॥ टेक ॥ तेरे पद पंकज सेवत हैं, इंद नरिंद फनिंद भगतमैं ॥ तूही० ॥ १ ॥ मेरा मन निशिदिन ही राच्या, तेरे गुन रस गान पगतमैं ॥ तूही० ॥ २ ॥ भव अनन्तका पातक नास्या, तुम जिनवर छवि दरस लगतमैं ॥ तूही० ॥ ३ ॥ मात तात परिकर सुत दारा, ये दुखदाई देख भगत मैं ॥ तूही० ॥ ४ ॥ बुधजनके उर आनँद आया, अव तौ हूं नहिं जाऊं कुगतिमैं ॥ तूही० ॥ ५ ॥

(१५५)

राग–दीपचंदी ।

म्हारा मनकै लग गई मोहकी गांठि, मैं तौ जिनआगमसौं खोलौं ॥ म्हारा० ॥ टेक ॥ अनादि कालकी घुलि

रही गाठी, ज्ञान छुरीसौं छोलौं ॥ म्हारा० ॥ १ ॥ अष्ट करम ज्ञानावरनादिक, मो आतम ढिग जौलौं । राग दोष विकल्प नहिं त्यागौं, तोलौं भव वन डोलौं ॥ म्हारा० ॥२॥ भेद विज्ञानकी दृष्टि भई तब, परपद नाहिं टटौलौं । विषय कषाय वचन हिंसाका, मुखतैं कबहुँ न बोलौं ॥ म्हारा० ॥ ३ ॥ धन्य जथारथवचन जिनेसुर, महिमा बरनौं कौलौं । बुधजन जिनगुनकुसुम गूंथिकै, विधिकरि कंठमें पोलौं ॥ म्हारा० ॥ ४ ॥

(१५६)

राग—खंमाच झंझौटी ।

पूजन जिन चालौ री मिल साथनि ॥ पूजन० ॥ टेक ॥ आज दहाड़ो[1] है भलो, आवो जिन आंगनि ॥ पूजन० ॥ १ ॥ आठौं द्रव्य चढ़ोइकै, कीये गुन भापनि । अपना कल्मख खोय है, करि हैं प्रतिपालनि ॥ पूजन० ॥ २ ॥ चित चंचलता मेटिकै, लागौ प्रभु पाँयनि । सब विधि मनवांछा मिलै, फिरि होहि न चायनि ॥ पूजन० ॥ ३ ॥

(१५७)

राग—रेखता ।

तिहारी याद होते ही, मुझे अम्रत वरसता है । जिगर[2] तपता मेरा भ्रमसों, तिसैं समता सरसता है ॥ तिहारी० ॥ १ ॥ दुनीके देव दाने सब, कदम तेरे परसता है । तिहारे दरस देखनको, हजारों चँद तरसता है ॥ तिहारी०

---

१ दिन । २ हृदय ।

॥ २ ॥ तुम्हींने खूब भविजनको, वताया भिसत[1]-रसता है। उसी रसते चले सायर, तुम्हारे वीच वसता है ॥ तिहारी० ॥ ३ ॥ विमुख तुमसों भये जितने, तिते दोजक[2]में धसता है। मुरीद[3] तेरा सदा बुधजन, आपने हाल मसता है ॥ तिहारी० ॥ ४ ॥

(१५८)

राग–मलहार।

माई आज महामुनि डोलैं। मतिवंता गुनवंत काहुसौं, बात कछू नहिं खोलैं ॥ माई० ॥ टेक ॥ तू नहिं आई ये घर आये, चरन कमल जल धोलैं ॥ माई० ॥ १ ॥ विधि पड़गाहे असन कराये, निधि वँधि गई अतोलैं ॥ माई० ॥ २ ॥ नगर जिमाया कोइ न रहाया, यौं अचरज कहौं कोलैं ॥ माई० ॥ ३ ॥ धन्य मुनीसुर[4] धनि ये दानी, बुधजन इम मुख बोलै ॥ माई० ॥ ४ ॥

(१५९)

राग–सोरठ।

हो चेतन जी ज्ञान करौला[5] जी ॥ हो० ॥ टेक ॥ थे अविनाशी नित्य निरंजन, नेकन डर न धरौला ॥ हो० ॥ १ ॥ देखन जान स्वभाव अनादी, ताहिन ना विसरौला। राग दोष अज्ञान धारतां, गति गति विपति भरौला ॥हो०॥ ॥ २ ॥ पूर्व कर्मका बंध हरौला, जो आपमैं धीर करौला।

---

१ वहिश्तका रास्ता–स्वर्गका मार्ग। २ नरकमें। ३ शिष्य। ४ वढ़ गई। ५ करोगे।

बुधजन आप जिहाज बैठिकैं, भवदधि-वारि तिरौला ॥ हो० ॥ ३ ॥

(१६०)

हूं तौ निशिदिन सेऊं थांका पाय, म्हारौ दुख भानौ ॥ हूं० ॥ टेक ॥ चौरासीमैं डोलतौ जी, नीठि पहुँच्यौ छौं आय ॥ म्हारौ० ॥ १ ॥ आन देवकौं सेवतां जी, जनम अकारथ जाय ॥ म्हारौ० ॥ २ ॥ मन वच तन वंदन करूं जी, दीजै कर्म मिटाय ॥ म्हारौ० ॥ ३ ॥ बुधजनकी या वीनती जी, सुनिज्यौ श्रीजिनराय ॥ म्हारौ० ॥ ४ ॥

(१६१)

राग-अडाणौं ।

तुम चरननकी शरन, आय सुख पायौ ॥ तुम० ॥ टेक ॥ अवलौं चिर भव वनमैं डोल्यौ, जन्म जन्म दुख पायौ ॥ तुम० ॥ १ ॥ ऐसो सुख सुरपतिकै नाहीं, सौ मुख जात न गायौ । अब सब सम्पति मो उर आई, आज परमपद लायौ ॥ तुम० ॥ २ ॥ मन वच तनतैं दृढ़ करि राखौं, कबहुँ न ज्या विसरायौ । वारंवार वीनवै बुधजन, कीजै मनको भायौ ॥ तुम० ॥ ३ ॥

(१६२)

राग-टोंगी ।

आज सुखदाई बधाई, जनमैं चन्दजिनाई ॥ आज० ॥ टेक ॥ महासेन घर चंदपुरीमैं, जाये लछमना माई ॥ आज० ॥ १ ॥ चतुरनिकाय देव देवी मिलि, नाचत गावत आई । अब भविजनके पातक टरि हैं, पथ चलि है

शिवदाई ॥ आज० ॥ २ ॥ वड़े भाग वुधजनके आये, सहजैं सव निधि पाई । सव पुरके घर घरमैं मंगल, वाजे वजत सवाई ॥ आज० ॥ ३ ॥

(१६३)

राग—अलहिया विलावल ।

कृपा तिहारी विन जिन सइयाँ, कैसैं उधरैगौ विषयसुख लइयां ॥ कृपा० ॥ टेक ॥ जो कछु भोजन हरत समय-छिन, तन यह विलखि वनै मुरझैंया ॥ कृपा० ॥ १ ॥ पहलैं याकी वान सुधारौ, दिखलावौ तत्त्वार्थ गुसइयां । तव ये जानै उर सरधानै, तजै कुवुद्धि सुवुद्धि गहइयां ॥ कृपा० ॥ २ ॥ वहुत पातकी भवदधि तारे, पतितउधारक सांचे सइयां । वुधजन दास पर्यौ भवदधिमैं, वेगि तारिये गहकर वहियां ॥ कृपा० ॥ ३ ॥

(१६४)

राग—अड़ाणूं ।

चेतन मो–मातौ भव वनमैं, गति गति भरमत डोलै ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ अनत ज्ञान दरसन सुख वीरज, ढांपि दिये रंग होलै ॥ चेतन० ॥ १ ॥ अलप भोगमैं मगन होय है, हित अनहित नहिं तोलै । मनमैं और करत तन ओरै, और हि मुखतैं वोलै ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरु उपदेश धार ले भाई, तजि विकलप झकझोलै । ह्वै वैरागी निज लौं लागी, सो वुधजन शिवको लै ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

(१६५)

राग—सोरठ ।

उमाहौ म्हानैं लागि गयौ छै, मुक्ति मिलनरो ॥ उमा-